डॉ० हरिवंश राय 'बच्चन' के काव्य का काव्य-शास्त्रीय अध्ययन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी को पी०-एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबंध

निर्देशक

डॉ० रामगोपाल गुप्त

रीडर एवं अध्यक्ष : हिन्दी विभाग
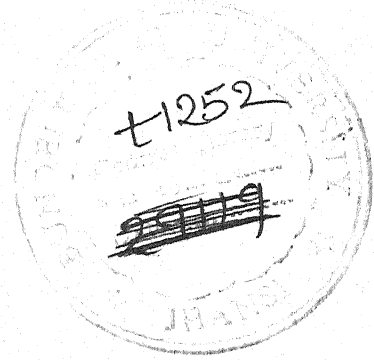
पं० जवाहर लाल नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बाँदा (उ० प्र०)

शोध-छात्रा

स्नेहलता त्रिपाठी

विजयादशमी

सं. २०५२ वि.

प्र मा ण - प त्र

प्रमाणित किया जाता है कि स्नेहलता त्रिपाठी ने मेरे निर्देशन में 'श्री हरिवंश राय 'बच्चन' के काव्य का काव्य-शास्त्रीय अध्ययन' विषय पर पी. एच. डी. उपाधि हेतु शोध-कार्य सम्पन्न किया है । शोध-छात्रा का यह मौलिक शोध-कार्य है । शोध-कार्य की अवधि में उसने नियमित कार्य सम्पादन किया और वांछित उपस्थिति पूर्ण की है ।

यह शोध-प्रबन्ध छात्रा के गहन अध्ययन और चिन्तन का मौलिक सुपरिणाम है । मैं इनकी सफलता और उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ ।

दिनांक : 3.10.1995

(डा० रामगोपाल गुप्त)
रीडर तथा अध्यक्ष हिन्दी विभाग
पं. जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, बाँदा

प्राक्कथन

'बच्चन' जी मानवतावादी रचनाधर्मी कृतिकार हैं । इन्होंने आशावादी जीवन दृष्टि को लेकर शोषणमुक्त समाज की संरचना में अपने दायित्व को पूर्ण किया है । संघर्षमय जीवन व्यतीत करते हुए भी कवि को नियतिवाद ने अक्षम और निकम्मा नहीं बनाया वरन् वे कर्म के प्रति आस्थावान रहे हैं । उनका कर्मवाद 'चरैवेति-चरैवेति' की उद्घोषणा करता है । समाज में व्याप्त ऊँच-नीच, जाति-पाँति और छुआछूत जैसे भेद-भावों ने कवि के चिन्तन को झकझोरा है । समाज की इन विसंगतियों और विद्रूपताओं के प्रति उनका गंभीर चिन्तन 'मधुशाला' और अन्य परवर्ती काव्य-कृतियों में अभिव्यक्त हुआ है । राष्ट्र के प्रति आस्था और समर्पण कवि के समग्र कृतित्व में दृष्टिगत होता है । धर्म के प्रति 'बच्चन' जी का चिन्तन अत्यंत साफ-सुथरा और उदार है, वे मानव धर्म के पुजारी हैं । वे मानते हैं कि धर्म का कार्य जोड़ना है, तोड़ना नहीं । जो धर्म मनुष्य को जोड़ सके, प्रेम की भावना में बाँध सके, 'बच्चन' जी उसी के उपासक हैं । राजनीति उनकी दृष्टि में जीवन की औषधि है, वह जीवन के लिए भोजन नहीं बन सकती । वे समाज की कुरीतियों से क्षुब्ध हो उठे और सामाजिक-क्रान्ति के आन्दोलन से उन्हें सड़ी-गली नैतिकता को ठुकराने का प्रोत्साहन मिला । कवि ने आत्मविश्वास के साथ अपनी अनुभूतियों को कलमबद्ध किया । समाज के आमूल परिवर्तन की कामना से ही उन्होंने रोगी समाज की घोर निन्दा की, इस आलोचना से सम्पूर्ण समाज तिलमिला उठा और छिद्रान्वेषियों ने उन पर उँगली उठाना प्रारम्भ किया, उनकी भावनाओं व उद्गारों को अनैतिक, वासनामय और अश्लील कहकर आक्षेपित किया किन्तु उनका क्रान्तिकारी स्वर समाज के आमूल परिवर्तन की दिशा में निरन्तर मुखरित होता रहा । उन्होंने भारतीय समाज को रूढ़ियों, अंध-विश्वासों और छुआछूत जैसी

कुरीतियों से मुक्त कराने में ही अपने को समर्पित कर दिया । यही कारण है कि युवा समुदाय ने 'बच्चन' जी का खुले हृदय से और गदगद कंठ से स्वागत किया ।

सामान्य व्यक्ति 'बच्चन' को 'हालावाद' का कवि समझते आये हैं किन्तु इनकी परवर्ती रचनाओं में उनका चिन्तन उन्हें एक विशिष्ट एवं गंभीर कवि के रूप में प्रस्तुत करता है । बच्चन जी के साथ न्याय करने के लिए और कार्य क्षेत्र में उनका वास्तविक स्थान निर्धारित करना इस शोध का मुख्य उद्देश्य है । यद्यपि 'बच्चन' जी के काव्य का सामान्य अनुशीलन अनेकत्र प्राप्त है, पर उनके काव्य का काव्यशास्त्रीय अध्ययन अभी तक नहीं हो पाया है, इसी दिशा में यह मेरा विनम्र प्रयास है ।

विवेचना की सुविधा की दृष्टि से प्रस्तुत प्रबंध को सात अध्यायों में विभक्त किया गया है । प्रथम अध्याय में डॉ0 हरिवंश राय 'बच्चन' के व्यक्तित्व और कृतित्व की परिचयात्मक चर्चा की गई है । बच्चन का काव्य अनुभूतियों में डूबी हुई आत्माभिव्यक्ति का काव्य है । उनका जीवन और काव्य एक दूसरे के पूरक है । स्वाभिमानी, नम्र, स्पष्टवादी और निष्कपट-मन बच्चन वात्सल्य की प्रतिमूर्ति है । उनका कृतित्व विविध विषयों की महिमा व गाथा से परिपूर्ण है । गीत पद्धति के प्रणेता कवि 'बच्चन की कृतियाँ हिन्दी जगत में पर्याप्त प्रख्यात हैं । प्रारम्भिक रचनाओं में कवि की वेदना, व्यथा, निराशा के साथ प्रेम, प्रकृति यौवन और राष्ट्र प्रेम के भाव समाहित हैं । 'मधुशाला' प्रेम, यौवन और मादकता का बोध कराने वाली एक क्रान्ति-कारी प्रतीकात्मक रचना है । सामाजिक रूढ़िवादिता, सामंतयुगीन नैतिकता,

छुआछूत, निराशा और असंतोष के विरुद्ध कवि ने आवाज उठाई है ।
'निशा निमंत्रण', 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अंतर' पूर्व पत्नी श्यामा जी की मृत्यु के बाद विधुर कवि की निराशा, स्मृतिजन्य विह्वलता और नियति के निर्मम प्रहार की मर्मांतक पीड़ा है । जबकि 'सतरंगिनी', 'मिलन यामिनी' और 'प्रणय पत्रिका' में कवि ने प्रकृति का मानवीय धरातल पर चित्रण कर प्रेम के संयोग पक्ष को निश्छलता से उभारा है ।

द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत मैंने बच्चन जी के भाव तत्व का विवेचन किया गया है । कवि के काव्य में रसाभिव्यक्ति तथा अन्य स्फटिक भावों का विश्लेषण किया गया है । 'बच्चन' एक रससिद्ध कवि हैं । उनके काव्य संग्रहों में यद्यपि सभी रसों की झाँकी देखने को मिलती है, पर श्रृंगार और करुण रस की सबल अभिव्यंजना विशेष रूप में दृष्टिगत होती है ।

तृतीय अध्याय में बच्चन जी की कल्पना सम्बन्धी अवधारणा एवं उनके काव्य में कल्पना के सौन्दर्य का विशद विवेचन प्रस्तुत किया गया है । 'बच्चन' जी की कल्पना-शक्ति पर्याप्त सशक्त, भावप्रवण एवं मार्मिक है ।

चतुर्थ अध्याय में कवि के चिन्तनपरक सौन्दर्य का अनुशीलन किया गया है । कवि के वैविध्यपूर्ण वैचारिक चिन्तन में जीवन के प्रति स्वस्थ एवं आशावादी दृष्टिकोण तथा राष्ट्र के प्रति प्रेम एवं आस्था अभिव्यक्त हुई है । बच्चन जी की विचारधारा, जीवन के उतार-चढ़ाव पर गिरती-उठती हुई सरल पथ से नैसर्गिक रूप में आगे बढ़ती गई है ।

पंचम अध्याय के अन्तर्गत कवि की भाषा-शैली और अभिव्यक्ति-कौशल के सौन्दर्य का विवेचन प्रस्तुत किया गया है । 'बच्चन' जी साहित्य

जगत में सर्जक के रूप में अवतरित हुये हैं, इन्होंने हिन्दी काव्य-धारा को एक नया रूप और नया आयाम दिया है । कवि ने सरल-साधारण बोलचाल की मुहावरेदार भाषा में अपनी अनुभूति को बड़ी कुशलता और प्रवीणता से मूर्त रूप प्रदान किया है ।

छठवें अध्याय के अन्तर्गत 'बच्चन' जी की काव्य-कृतियों के वस्तु विधान के वैशिष्ट्य और वैविध्य की समीक्षा की गई है।अपने जीवन में उन्होंने जो दुख-सुख का कटु-मधु अनुभव संचित किया है, उसी का परिणाम उनका काव्य है । बच्चन जी के काव्य में एक ओर सांस्कृतिक भावना और देश-प्रेम का प्रवाह है तथा दूसरी ओर धार्मिक तथा आध्यात्मिक भावना है । इसी अध्याय में बच्चन जी के काव्य में प्रकृति चित्रण की भी समीक्षा की गई है । यद्यपि 'बच्चन जी ने प्रकृति में विशेष आकर्षण का अनुभव नहीं किया फिर भी उनकी कविताओं में प्रकृति अपने इन्द्रधनुषी रूपों में अपनी सौन्दर्य-रश्मि को विकीर्ण करती है ।

सप्तम अध्याय उपसंहार है । इसमें सर्वेक्षण से प्राप्त निष्कर्षों का प्रतिपादन किया गया है।

शोध ग्रन्थ के अन्त में मूल ग्रन्थों एवं सहायक ग्रन्थों का विवरण प्रस्तुत किया गया है ।

शोध ग्रन्थ की पूर्णता पर सर्वप्रथम शोध-प्रबंध के निर्देशक डा. रामगोपाल गुप्त, रीडर तथा अध्यक्ष हिन्दी विभाग, पं. जवाहरलाल नेहरू पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, बाँदा के प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिन्होंने अपने अमूल्य सुझावों से मेरा मार्ग-दर्शन किया है साथ ही सतत् जागरूक रखकर विषय की गुरुता

का ज्ञान कराया एवं प्रबंध की पूर्णता में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान किया । इस अवसर पर स्व0 डॉ॰ कृष्णदत्त अवस्थी आचार्य, पं॰ जवाहरलाल नेहरू कालेज बाँदा के प्रति मैं अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ क्यों कि इस शोध प्रबंध के प्रेरणा-स्रोत वही हैं, काश, इसकी पूर्णता वे देख पाते ।

मैं अपने गुरुजनों साहित्यसेवी मनीषियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिनके प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग से मुझे शोध दृष्टि मिली जिसका प्रतिफल यह शोध-प्रबंध है । जिन विद्वानों, आचार्यों, एवं समीक्षकों के ग्रन्थों से मैंने जो भी सामग्री ग्रहण की है, उसको यथास्थान संकेतित किया है फिर भी त्रुटिवश किसी संदर्भ का उल्लेख रह गया हो तो उसके लिए क्षमायाचना सहित कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ ।

पं॰ जवाहरलाल नेहरू महाविद्यालय बाँदा के हिन्दी विभाग के आचार्यगण डा0 मनोरमा अग्रवाल, डॉ0 ज्ञानप्रकाश तिवारी एवं डॉ0 देवलाल मौर्य के प्रति भी हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने न केवल मेरा मार्ग-दर्शन किया वरन् शोध प्रबंध को पूर्ण कराने में अपना अमिट योगदान दिया ।

अपने अनुज दिनेश त्रिपाठी को इस अवसर पर भूलना मेरे लिए कतई सम्भव नहीं है जिनके निरन्तर प्रयासों से ही मेरा शोध कार्य सम्भव हो सका है । अपनी मँझली दीदी श्रीमती पुष्पलता त्रिपाठी के सहयोग एवं प्रेरणाओं को किन शब्दों में अभिव्यक्ति दूँ यदि प्रिय दीदी ने मुझे ये सुअवसर न दिया होता तो मैं शोध-प्रबंध की पूर्णता को भी न प्राप्त होती । शोध कार्य के बीच खुशबू और सनी §संताने- श्रीमती पुष्पलता त्रिपाठी§ ने अपने साख्य और वाचालता से थके मन को जिस प्रकार अनुरंजित किया है वह अवर्णनीय है । अपनी बड़ी दीदी

श्रीमती मंजू बाजपेयी एवं श्रीमती मधु पाण्डेय के प्रति मैं पूर्ण सम्मान के साथ कृतज्ञता निवेदित करती हूँ जिन्होंने समय-समय पर मुझे शोधकार्य के लिए प्रोत्साहित किया है । इस अवसर पर मैं अपने पितृतुल्य श्वसुर श्री दिनेशचन्द्र द्विवेदी एवं अपने पति श्री कमलेश कुमार द्विवेदी के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने गृहस्थी के दायित्वों से ऊपर शोध कार्य को महत्त्व दिया है और इसकी पूर्णता के लिए अपना आशीष एवं मार्गदर्शन प्रदान किया है ।

इस शोध प्रबंध के आधार स्तम्भ श्री हरिवंशराय जी 'बच्चन' के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने में कुछ संकोच अनुभव करती हूँ, क्योंकि वे इसे मात्र लौकिक शिष्टाचार ही न समझ लें, मैं उनके प्रति श्रद्धा-सद्भाव से नमन करती हूँ और उनके मार्गदर्शन एवं वांछित सूचनाओं के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ ।

विजयादशमीं

दिनांक : 3 अक्टूबर 1995

शोध छात्रा

स्नेहलता त्रिपाठी

§ स्नेहलता त्रिपाठी §

विषय सूची

0 0 0
0 0
0

अ ध्या य - एक

जीवन परिचय एवं कृतित्व

अध्याय - 1

जीवन परिचय एवं कृतित्व

छायावादोत्तर काव्य-धारा के प्रवर्तक डॉ० हरिवंशराय 'बच्चन' का कृतित्व-काल सुदीर्घ कालावधि में फैला हुआ है । उन्होंने काव्य के इतिहास में 'सृष्टा' के रूप में अपना नाम अंकित किया है । सृष्टा के कार्य में नया संस्कार होता है और उसमें भाषा तथा भावों का नव्य विधान होता है । कविवर 'बच्चन' ने छायावादी कवियों के प्रभाव से अपने को बचाकर सर्वथा नूतन राह बनाने का प्रयत्न किया है । 'बच्चन' ने जीवनोल्लास और यौवन के गीतों को पूरी शक्ति मन्ता से गाया और अपने को 'निराला' की दुरूहता और 'प्रसाद' की क्लिष्टत व्यंजना से दूर रखा । 'बच्चन' जी न तो पंत की काल्पनिक पलायनवादी सौन्दर्य चेतना से अभिभूत हुये और न ही महादेवी की तरह रहस्यमयी अनुभूति और वेदना-वारिधि में डूबे, बल्कि उन्होंने अपनी पृथक राह बनायी और जीवन के गीत गाये, जब जैसी अनुभूति हुई, उसी को वाणी दी, अभिव्यक्ति प्रदान की । 'बच्चन' का व्यक्तित्व हिन्दी काव्य में अपनी अद्भुत विशेषता एवं महत्ता रखता है । वह मानव हृदय-मर्मज्ञ, रससिद्ध गायक, भाव-धनी एवं युग-प्रबुद्ध संदेश -वाहक हैं ।[1]

कविता सीधे उनके जीवन से फूटकर आयी है । कविता उनके जीवन की अनिवार्यता थी, विवशता थी, यानि उनके जीने की शर्त ।[2] कवि ने अपनी आत्मकथा में लिखा भी है कि कविता उनके विकृत मन की उपज है । आज तक जो भी उन्होंने अभिव्यक्त किया है, वह उनकी बेचैनी, विकलता, द्वन्द्व, दहन

---

1. पन्त : बच्चन का व्यक्तित्व तथा काव्य पृ०-45
2. सं. प्रो. दीनानाथशरण - लोकप्रिय बच्चन पृ०-94

जलन, प्यास, त्रास, पीड़ा और संघर्ष ही है । कवि का सम्पूर्ण काव्य जीवन की मदिरा के नशे में परिलिप्त है । उन्होंने ख़ुद कविता नहीं लिखी बल्कि कविता ने उन्हें लिखा । वह ज्ञान के बल पर किताबें पढ़कर या काव्य के सिद्धान्त सीखकर नहीं लिखी गईं, वे सीधे उनके जीवन से फूटकर आई हैं ।[1]

छायावाद युग संक्रमण में निर्वात की सी स्थिति जगाता है । छायावाद की अकाल मृत्यु और प्रगतिवाद की आत्महत्या, उसी स्थिति का परिणाम है । व्यक्तित्व की दृष्टि से हिन्दी साहित्य में ऐसा घोर संकट-काल कभी नहीं आया था । कितनी भयावह स्थिति थी कि अकाल मृत्यु और आत्महत्या के आतंक में कोई भी व्यक्तित्व सामने नहीं आ रहा था । ऐसे छायावादोत्तर घटाटोप सन्नाटे और अंधकार को चीरता हुआ कोई एक तीर क्षितिज के किसी कोने से छूटता है और आतंक का सन्नाटा टूटने-सा लगता है। यह व्यक्तित्व था श्री बच्चन का ।[2]

यद्यपि छायावादी व्यंजना का प्रभाव कविवर 'बच्चन' ने स्वयं स्वीकार किया है-'तत्कालीन छायावादी अभिव्यंजना का प्रभाव मुझ पर नहीं था - यह कहना तो मेरी कृतघ्नता होगी । मैंने छायावादी शिल्प को आत्मसात करके लिखा, पर छायावादी शिल्प से कुछ ऊपर भी उसमें है, कुछ नयापन ..... ।[3]

बाल्यावस्था से ही दुख-दैन्य को झेलते हुए, निरन्तर संघर्ष करते हुए कवि ने अपनी काव्य यात्रा जिन-जिन सोपानों से प्रारंभ की है, उनका संक्षिप्त विवेचन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

- -

1. सं. प्रो. दीनानाथशरण - लोकप्रिय बच्चन पृ0-94
2. जगदीश नन्दिनी : बच्चन के काव्य में प्रणय भावना - पृ0-05 प्राक्कथन
3. श्री नवल किशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य-भूमिका पृ0-10

जन्म :- छायावादोत्तर काव्य धारा के प्रवर्तक कवि श्री हरिवंश राय बच्चन उत्तर प्रदेश के जिला इलाहाबाद की विभूति हैं । ई॰ सं॰ 1907 के नवम्बर की 27 तारीख को जिस नन्हे से बालक ने जन्म लिया, किसने कल्पना की थी कि कभी वही बालक युग की चट्टानों पर अपने चरण चित्य अंकित करेगा ? और हिन्दी साहित्य के इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों से लिख देगा ।

बच्चन जी अपने माता-पिता की छठी किन्तु पुत्र के रूप में प्रथम सन्तान थे, इनसे बड़ी इनकी एक बहिन भगवान देई थी । एक भाई और एक छोटी बहिन भी थी, ये कुल मिलाकर चार भाई-बहिन थे । हरिवंश पुराण श्रवण के उपरान्त प्राप्त सन्तान का नामकरण उनके पिता ने 'हरिवंशराय' किया । किन्तु घर पर सभी इन्हें 'बच्चन नाम से बुलाते थे । बाद में कवि ने 'बच्चन' ही अपना साहित्यिक उपनाम बना लिया । सहज विश्वासी माँ सुरसती ने उन्हें जप-तप, कथा-श्रवण, बहुत से राय-उपाय, टोटके-टामन, खरखोदवा, ओझाई झाड़-फूंक के साथ चिरंजीवी बनाने के लिये लछमिनिया चमारिन को पाँच पैसे में बेंच दिया ।[1] और इमाम साहब का फकीर भी बनाया ।

परिवार :- बच्चन के वंश का मूल दो-ढाई सौ वर्ष पूर्व उत्तर-प्रदेश के बस्ती जिले के अमोढ़ा से प्राप्त है । यहाँ के निवासी अपने को अमोढ़ा के पांडे कहते हैं । बच्चन के पूर्वज 'मनसा' प्रयाग में रहने लगे और उन्हीं की छठीं पीढ़ी के घर में हमारे कवि के पिता प्रताप नारायण हुये । मंझले घर में मिठ्ठूलाल के पुत्र भोलानाथ के पुत्र प्रतापनारायण थे । प्रताप नारायण के पुत्र हैं -

- -

1- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ, आत्म कथा पृष्ठ-100

हरिवंशराय बच्चन । और उनके दो पुत्र हुये- अमिताभ और अजिताभ तथा छोटे भाई शालिग्राम के एक पुत्र हुये- प्रभात ।[1] 'बच्चन के पिता जी प्रताप नारायण सीधे-साधे मन से निष्कपट, निष्कलुष थे । संस्कारों के प्रति निष्ठावान-सनातनी गीता व रामायण का नित्य पाठ करते थे । उनका जीवन प्रायः एक ढर्रे पर चलने वाला, नियमबद्ध और नैमित्रिक था । वे अंग्रेजी 'पायनियर' में मामूली सा वेतन पाते थे ।[2] प्रताप नारायण 'पायनियर' प्रेस में सबसे नीचे क्लर्क थे और रिटायर होने पर ऊँचे क्लर्क तक पहुँचे ।

बच्चन की माता स्त्रियोचित कोमलता, सहज विश्वासी, पतिव्रता और त्यागी वृत्ति की थीं । उनमें काम करने की अपार शक्ति थी । उन्होंने पति के हर कार्य में योगदान दिया । कम पैसे से गृहस्थी का निर्वाह करतीं । प्रताप नारायण सुरसती को पाकर धन्य हो गए, इस प्रकार बच्चन के माता-पिता में अच्छा सामंजस्य था ।[3] सुरसती उर्दू वर्णमाला और हिन्दी जानती थीं । बच्चन को उर्दू अक्षरों की शिक्षा अपनी माँ से ही मिली थी । वे भजन रामायण, सूरसागर, सुखसागर और प्रेमसागर का पाठ करती थीं ।[4] बच्चन के कवि पिन्ड को सुरसती ने बड़े जतन से पाला-पोसा था ।[5]

1- डा. सुधाबहन पटेल : 'बच्चन' जीवन और साहित्य, पृष्ठ-15

2- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ, आत्मकथा, पृष्ठ-86-93

3- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ, पृष्ठ-87-90

4- बच्चन : वही पृष्ठ-109-110

5- बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृष्ठ-216

बच्चन जी के बाबा भोलानाथ स्वभाव से अद्भुत भोले थे । कर्तव्य को भावना से अलग रखकर, करते जाने की उनमें अपूर्व क्षमता थी । कवि की बुआ तुलसा थीं । बच्चन जी की बड़ी बहिन भगवान देई थीं, दूसरा नम्बर आपका था तथा इनसे छोटे भाई शालिग्राम थे जिनका विवाह बाँदा के ही वकील बाबू गया प्रसाद की पुत्री से हुआ था । एक छोटी बहिन शैलकुमारी भी थी ।

पिता के सस्वर 'मानस' पाठ के श्रवण संस्कार बच्चन में गहरे उतरे थे । बच्चन ने लिखा है कि- अज्ञात रूप से मेरे अवचेतन और ज्ञात रूप से मेरे चेतन की शिरा-शिरा मानस की ध्वनियों से भीगी हुई थीं ।[1] और आगे जाकर इन ध्वनियों की गूँजें बच्चन के काव्य में जहाँ-तहाँ प्रतिध्वनित हो उठीं हैं ।

<u>विद्याध्ययन</u> :- बच्चन जी की प्रारंभिक शिक्षा प्रायः घर पर ही सम्पन्न हुई थी । उर्दू अक्षरों की शिक्षा इन्होंने अपनी माँ से प्राप्त की थी । माँ और बड़ी बहिन से ही कवि ने जोड़-बाकी, गुणा-भाग सीखा था । बाल्यावस्था से ही बच्चन का मन खेलने-कूदने में नहीं लगता था वो हर समय पढ़ते रहते थे । बच्चन जी की उम्र जब आठ वर्ष हो गई तब इन्हें मोहतशिमगंज म्युनिसिपल स्कूल में दर्जा एक में प्रवेश दिलाया गया । पहला, दूसरा दर्जा पास करने के पश्चात ऊँचा मण्डी स्कूल में उन्होंने तीसरा और चौथा दर्जा पास किया । जिस समय बच्चन जी चौथे दर्जे में पढ़ रहे थे उन्हीं दिनों सत्यदेव परिव्राजव के व्याख्यान 'हमारी राष्ट्र भाषा' का प्रभाव बच्चन के बालमन में इतना गहरा पड़ा कि इन्होंने उर्दू छोड़ हिन्दी विषय लेने का निर्णय किया । पिताजी के विरोध करने पर भी

1- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ पृष्ठ-93

डिप्टी इन्सपेक्टर बाबू शिव कुमार सिंह की कृपा से आपको हिन्दी विषय मिल गया और आपने द्वितीय स्थान प्राप्त किया ।[1]

इसके बाद जुलाई 1919 में इनका नाम कायस्थ पाठ्शाला में छठें दर्जे में लिखा दिया गया । वहीं से इन्होंने हाईस्कूल की परीक्षा ई॰स॰ 1925 में द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण की । ई॰स॰ 1926 में बच्चन जी ने गवनमिन्ट कालेज में अपना नाम लिखा लिया । आर्थिक संकोचवश सायंकाल 8-10 रुपये की ट्यूशन भी प्रारम्भ की । ई॰स॰ 1927 में इन्होंने इण्टर किया । ई॰स॰ 1929 में इन्होंने इलाहाबाद विश्व-विद्यालय से पाश्चात्य दर्शन अंग्रेजी साहित्य और हिन्दी लेकर प्रथम श्रेणी में बी॰ ए॰ पास किया । 1930 में इन्होंने अंग्रेजी साहित्य में एम॰ ए॰ पूर्वार्द्ध की परीक्षा उत्तीर्ण की तत्पश्चात् कालेज छोड़कर गाँधी जी के सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लिया । कुछ पारिवारिक चिन्ताओं और राजनीतिक गतिविधियों के कारण उनका पढ़ाई में मन नहीं लगा और पढ़ाई छोड़ दी । इसी समय गाँधी जी का सत्याग्रह-आन्दोलन, असहयोग-आन्दोलन चल रहा था - युवा बच्चन का हृदय भारत को अंग्रेजों के पंजे से छुड़ाने के लिये मचल रहा था । वे सत्याग्रह आन्दोलन में भाग लेते हुए नमक बनाने तथा चरखा चलाने के अतिरिक्त गाँव-गाँव में जाकर व्याख्यान देने का कार्य करते रहे ।[2]

ई॰स॰ 1938 में इन्होंने एम॰ ए॰ का द्वितीय वर्ष उत्तीर्ण किया । इसके बाद उन्होंने ई॰स॰ 1939 में बनारस ट्रेनिंग कालेज से बी॰ टी॰ की परीक्षा पास की और

1- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ पृष्ठ-136-137

2- सत्येन्द्र कुमार सिंह : हिन्दी के प्राचीन और आधुनिक कवि, पृष्ठ-163

1940 में वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में स्नातकोत्तर अंग्रेजी विभाग में अध्यापन करने लगे । 1952 में वे अंग्रेजी साहित्य में विलियम बटलर ईट्स के साहित्य §डब्लू. बी. ईट्स एण्ड अकुलटिज्म§ पर डॉक्टरेट प्राप्त करने के लिए केम्ब्रिज विश्व-विद्यालय में गये और 1954 में डॉक्टरेट की उपाधि से अलंकृत हो स्वदेश लौटे और पुनः विश्वविद्यालय में अंग्रेजी साहित्य पढ़ाने लगे । फौजी शिक्षा प्राप्त कर उन्होंने लैफ्टिनैंट की रैंक प्राप्त की और उनके कन्धों पर दो स्टार लगने लगे । केम्ब्रिज में थोड़ दिन यू. ओ. टी. कार्प्स में रहकर बहुत कुछ सीखा ।

बच्चन जी के चरित्र निर्माण एवं व्यक्तित्व-विकास के लिये उनके युग, उनकी शिक्षा-संस्था, स्थानीय वातावरण, परिवार पड़ोस और गुरुजनों का विशेष सहयोग रहा है । आपकी लिखावट बहुत साफ-सुथरी और मोती के समान थी ।[1] कायस्थ पाठशाला में की गई अपनी तुकबन्दी में बच्चन अपने काव्य का उद्गम मानते हैं । उन्होंने अपनी प्रथम कविता के सम्बन्ध में लिखा भी है- "कायस्थ पाठशाला में ही मैंने अपनी पहली पूरी हिन्दी कविता लिखी, किसी अध्यापक के विदाभिनन्दन पर जब मैं सातवीं में था ।"[2] कवि का संगीत के प्रति भी विशेष अनुराग रहा है । यही स्वर साधना आपके काव्य पाठ में सहायक सिद्ध हुई । आपके गीतों में भी लयात्मकता, संगीतात्मकता इसी कारण विद्यमान है । कवि का रुझान चित्रकला की ओर भी था किन्तु यह शौक बहुत व्ययकर था अतः बच्चन कलम के सिपाही बन गए ।[3] सन् 1930 से बच्चन जी के घर की आर्थिक स्थिति

1- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ — पृष्ठ-145
2- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ — पृष्ठ-145
3- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ — पृष्ठ-143-144

बहुत दयनीय हो गई । इसलिये उन्हें जगह-जगह काम की तलाश में भटकना पड़ा और जीविकोपार्जन के चक्कर में दर-दर की ठोकरें खानी पड़ी । 1930 की यूनिवर्सिटी द्वारा आयोजित प्रथम कहानी प्रतियोगिता में आपको प्रथम पुरस्कार मिला । पुरस्कृत कहानी 'हृदय की आँखें' प्रेमचन्द की 'हंस' पत्रिका में छपी । यह कवि के लिये प्रोत्साहन की बात थी । बच्चन जी को अपने परिवार से उदात्त धार्मिक संस्कार मिले । आपका कृष्ण के प्रति विशेष अनुराग है । महात्मा गाँधी, लोकमान्य तिलक तथा अन्य अनेक महापुरुषों से प्रभावित होने के कारण तथा उनको अपना आदर्श मानने के कारण बच्चन का सर्वतोमुखी विकास हुआ ।

बच्चन के साहित्य पर साँस्कृतिक परम्परा का गहरा प्रभाव पड़ा है । इसलिये बच्चन की आत्मा आर्य-संस्कृति से ओत-प्रोत है । सदाचार, सद्भाव, सत्कर्म, नैतिकता, देश-प्रेम की भावनाओं से बच्चन के काव्य का ओजस्वी स्वरूप प्रकट हुआ है । संक्षेप में वह आर्य संस्कृति का वाक् स्वरूप है । त्याग और परम्परा की रक्षा के लिये वाल्मीकि और व्यास जैसे महाकवियों की सप्राणता आज हिन्दी में बच्चन जी के रूप में अवतरित हो उठी है ।[1]

बाल्यावस्था से ही बच्चन का खेलने-कूदने में मन नहीं लगता था । बचपन से आप धीर गंभीर प्रकृति के थे । जिस समय बच्चे खेलने के लिये साँझ ढलने की बाट जोहते थे और सन्ध्या होते ही खेलने में मस्त हो जाते थे, उस समय बच्चन का बाल-सुलभ अबोध मन हिन्दी का उमर खैयाम बनकर अथवा महान ज्ञानी, विद्वान, सौन्दर्यवादी, हालावादी अनूठा कवि या गजकार बनकर पुस्तकालय की

1- डॉ. के. जी. कदम : कवि श्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन पृष्ठ-23-24

किताबों में निर्निमेष नेत्रों से दत्तचित्त होकर ज्ञानार्जन करता रहता था ।

विवाह :- सन् 1926 में जिस समय बच्चन इण्टर में पढ़ रहे थे आपका विवाह सिराथू तहसील के रूपनारायण गाँव के रहने वाले तत्कालीन इलाहाबाद हाईकोर्ट के अनुवादक बाबू राम किशोर की बड़ी पुत्री श्यामा से हो गया । जिस समय बच्चन जी का विवाह हुआ उनकी उम्र 19 वर्ष थी और पत्नी श्यामादेवी की आयु 14 वर्ष थी ।

श्यामा का अवगुण्ठन हटाते ही कवि को एक बच्ची का मुख दिखाई दिया । जिसका विवरण कवि ने अपनी आत्मकथा में इस प्रकार किया है- "श्यामा मेरे सामने बिल्कुल बच्ची थी - भोली, नन्हीं, नादान, अनजान, हँसमुख किसी ऐसे मधुबन की टटकी गुलाब की कली- 'नवकलिका थी वह'- जिसमें न कभी पतझर आया हो, और न जिसने कभी काँटों की निकटता जानी हो ।"[1]

'बच्चन' ने श्यामादेवी के साथ बच्चों जैसा व्यवहार किया और उनके हम उम्र बनकर मित्रता कर व्यवहार किया, किन्तु अपनी बाल उम्र पत्नी के भोलेपन के साथ आपको भोलेपन का अभिनय करने में बड़ी कठिनाई महसूस होती थी । कवि ने अपनी इस कठिनता को निम्न पंक्तियों में लिपिबद्ध भी किया है -

'उस लड़कपन औ जवानी के शुरू की
उलझनों को क्या बताऊँ
भूलने का नाम वे लेती नहीं हैं
मैं उन्हें कितना भुलाऊँ ।'[2]

1- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ पृष्ठ-170
2- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ पृष्ठ-171

बच्चन जी को श्यामा शैली की 'स्काईलार्क' लगी । श्यामा के निश्छल व्यवहार, हँसमुख स्वभाव और भोलेपन के कारण बच्चन जी ने उनका नाम 'ज्वाय' रख दिया और अन्त समय तक उन्हें इसी नाम से सम्बोधित किया ।[1] कभी-कभी कवि का परिपक्व मन यह सोचता कि मैं श्यामा को वात्सल्य तो दे सकता हूँ पर प्रेम नहीं, क्यों कि वे मानसिक रूप से परिपक्व हो चुके थे । अपने से बड़ी उम्र वाले कर्कल की मैत्री और मृत्यु से, चम्पा के साथ अपने असाधारण सम्बन्ध से और अन्ततः जीवन के एक बड़े करूण मार्मिक पश्चाताप पूर्ण अनुभव से होकर गुजरने के कारण मैं अधिक परिपक्व हो गया था ।[2] श्यामा के साथ प्रेम का नहीं वरन् वात्सल्य का व्यवहार करने के कारण बच्चन जी ने अपने हृदय के उदगारों को इन पंक्तियों में अभिव्यक्ति दी है -

'सुमुखि तब मैं प्यार कर सकता तुम्हें था
सीख माँ की, बाप की, अध्यापकों की,
बात पुस्तक से उठाई
चुटकुले हमजोलियों ने जो सुनाये-
बस यही जिनकी कमाई,
कान को ऐसे चुराता यदि तुम्हारे
और ले जाता वहाँ पर
स्वर्ग का उल्लास, नरकोच्छ्वास दोनों
साथ सुन पड़ते जहाँ पर
सुमुखि, तब मैं प्यार कर सकता तुम्हें था ।'[3]

1- बच्चन :क्या भूलूँ क्या याद करूँ पृष्ठ-170
2- वही पृष्ठ-170
3- वही पृष्ठ-171

बच्चन जी ने श्यामा को अपने खेल की सहेली, अपना सखा बना लिया । लगभग तीन वर्ष बाद बच्चन जी का गौना हुआ। परन्तु श्यामादेवी बुखार में तप रहीं थी । श्यामा की माँ को तपेदिक की बीमारी हो गई थी, उन्हीं की सेवा-सुश्रूषा करते हुए उन्हें भी संक्रामक बीमारी ने जकड़ लिया । सभी प्रयत्न, दवायें झाड़-फूँक कराई गई किन्तु बीमारी ने अन्त्र क्षय का रूप ले लिया और डाक्टर समझ न सके । 17 नवम्बर 1936 को श्यामा का निधन हो गया । इस तनावपूर्ण मनः स्थिति में बच्चन ने 'मधुकलश' के गीत लिखे और पत्नी की इच्छा अनुसार कवि ने 'मधुकलश' श्यामा को समर्पित किया । श्यामा के निधन से बच्चन का एक सत्य मिटा और एक सपना भी टूट गया । विगत स्मृतियों से घिरे बच्चन कई दिनों तक विचित्र सी भावशून्य अवस्था में रहे । मानसिक तनावों से ग्रस्त संघर्ष रत बच्चन जी ने 'निशा-निमन्त्रण' 'एकान्त संगीत' और आकुल अन्तर की रचना की ।

कवि का दूसरा विवाह तेजी के साथ सम्पन्न हुआ । तेजी सरदार खजान सिंह सूरी बैरिस्टर की चौथी और सबसे छोटी पुत्री थीं । लाहौर में व्यवस्थित सूरी परिवार का पुश्तैनी निवास स्थान कल्लर रावलपिंडी में था । उस समय तेजी सूरी लाहौर के एफ. सी. कालेज में मनोविज्ञान की अध्यापिका के रूप में व्यवस्थित थीं । बच्चन जी तेजी से सर्वप्रथम अपने मित्र ज्ञान प्रकाश जौहरी के घर में 31 दिसम्बर 1941 को सुबह मिले और इसी साँझ की मादक बेला में वहीं से जीवन संगी बनकर निकले । 1 जनवरी 1942 को उन्हीं के घर पर बच्चन व तेजी की सगाई हुई और 24 जनवरी 1942 को इलाहाबाद के जिला मजिस्ट्रेट मिस्टर डिक्सन के समक्ष दोनों ने सिविल मैरिज की और जीवन भर के लिये साथी बन गए

कवि की साधना पूरी हुई, जीवन की अग्नि परीक्षा में तपकर वह कंचन सा निखर आया । उसके जीवन में 'सतरंगिनी' आ गई । वे पुनः नेह के आहवान और नीड़ के निर्माण में प्रवृत्त हो गये । 'सतरंगिनी' उन्हीं मधुर क्षणों की अभिव्यक्ति है ।

तेजी से पूर्व चम्पा रानी और आइरिस तालिबुद्दीन कवि के जीवन में आई थीं । आइरिस से विवाह करने के लिये बच्चन जी धर्म परिवर्तन करने के लिये भी तैयार हो गए थे क्यों कि आइरिस ईसाई लड़की थी । प्रेम के लिये कवि अपने कवित्व व अपनी कविता को भी त्यागने को तैयार हो गया था । जिसका चित्रण उन्होंने अपनी आत्मकथा में भी किया है ।[1] किन्तु आइरिस से प्रत्युत्तर में हाँ या न कुछ भी न सुनकर कवि का मन आइरिस के प्रति उचाट हो गया और फिर तेजी उनके जीवन में आयीं । बच्चन जी ने तेजी में एक साथ अनेक गुणों का समावेश पाया- तेजी ही वह पहली नारी थीं, जिनमें देवी की दिव्यता, माँ की ममता, सहचरी की सद्भावना और प्राणाधार की प्राणदायिनी धारा का मैंने एक साथ अनुभव किया ।'[2]

ईश्वर की असीम अनुकम्पा से बच्चन जी का छोटा सा नीड़ आज भी आनन्द और उल्लास के रस में सराबोर है । बच्चन और तेजी, तेजी और बच्चन एक दूसरे के पूरक बने हुए हैं और आज भी अपने नीड़ के आँगन में लगे नेह के पौधे को, जो अब विशाल सशक्त दरख्त का रूप धारण कर चुका है, बच्चों सहित प्रेम रस से सिन्चित कर रहे हैं ।

1- बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर पृष्ठ- 388

2- बच्चन : वही पृष्ठ- 417

संतति :- 11 अक्टूबर 1942 को तेजी जी ने प्रथम पुत्र को जन्म दिया । पिता बनने की सुखद अनुभूति और उसके उल्लास को बच्चन जी ने निम्न पंक्तियों में कलमबद्ध किया है-

'फुल्ल कमल, गोद नवल,
मोद नवल, गेह में विनोद नवल ।
बाल नवल, लाल नवल,
दीपक में ज्वाल नवल ।
दूध नवल, पूत नवल
वंश में, विभूति नवल
नवल दृश्य, नवल दृष्टि
जीवन का नव भविष्य,
जीवन की नवल सृष्टि ।'[1]

छायावाद के श्रेष्ठ कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त जी से बच्चन के घनिष्ठ एवं मधुर सम्बन्ध थे । अतः सन्ध्या के समय पन्त जी तेजी और नवजात शिशु को देखने गए और बच्चे को देखकर पन्त जी ने उसको अमिताभ नाम दिया जो सच्चे अर्थों में आज अक्षरशः सत्य है । अमिताभ बच्चन की प्रसिद्धि आज चहुँदिश बिखरी-बिखरी सी प्रतीत हो रही है । अप्रतिम प्रतिभाशाली कवि बच्चन का बेटा फिल्मी दुनियाँ में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर चुका है । अमिताभ की अभिनय कला से आज सम्पूर्ण भारतवर्ष गौरवान्वित है । बच्चन जी के दूसरे पुत्र अजिताभ का जन्म 14 मई 1947 को हुआ । अजिताभ नाम भी पन्त जी ने ही

1- बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर पृष्ठ-442

दिया था । आज अजिताभ भी अपनी पत्नी और बच्चों के साथ अति सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं । अपने निजी व्यवसाय में अजिताभ पूर्ण व्यवस्थित हैं । बच्चन जी के दोनों ही बेटे शरीर से स्वस्थ्य, बलिष्ठ और लम्बे हैं । बच्चन और तेजी दोनों छः बच्चों के दादा-दादी बन गए हैं ।

काव्य-प्रेरणा :- मेरी प्रेरणा प्रायः अनुभूतियों से आती है- उसको मैं बहुत दिनों तक भीतर ही भीतर सेता रहता हूँ । प्रायः जब वह भीतर कोई कलात्मक रूप ले चुकती है, तभी मैं लिखता हूँ । लिखने का कोई समय विशेष नहीं है ।[1]

कवि एक संवेदनशील प्राणी है, इसलिये वह जब कभी भी अपनी ओर या बाहर की ओर झाँकता है तो अधिक भावुक हो उठता है और उसकी यह भावुकता उसके मन में कतिपय नयी अनुभूतियों को जन्म देती है । सबसे पहले कवि के मानस में जो अनुभूतियाँ जन्म लेती हैं वे अपनी प्रथम अवस्था में कच्ची या अधपकी होती हैं, इसी कारण उन्हें लेकर उसके मानस में खासी उथल-पुथल मची रहती है । कवि है कि अपनी प्रतिभा और कल्पना शक्ति का प्रयोग करके उन बिखरी हुई अनुभूतियों को सहेजता है और भीतर की उथल-पुथल को बाहर व्यक्त करने के लिये एक सन्तुलन बिठाता है ।[2]

यक्ष्मा रोग से पीड़ित कवि पत्नी की मृत्यु के पश्चात बच्चन के हृदय की व्यथा वेदना और एकाकीपन अश्रु बनकर उनके काव्य में गीत बनने लगे और शनैः शनैः कवि उत्तरोत्तर परिष्कृत और विशुद्ध साहित्यिक कृतियों का सृजन करने

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §खण्ड-9§ साक्षात्कार-शैवाल सत्यार्थी पृष्ठ-29

2- हर स्वरूप पारीव : बच्चन का परवर्ती काव्य पृष्ठ-44

लगा । बच्चन जी जीवन और काव्य को अलग नहीं मानते थे- 'फिर मैंने जीवन और काव्य को अलग कब माना है ? यदि मेरा जीवन ही काव्य नहीं है तो कवित्व नाम की कोई चीज मेरे अन्दर नहीं है । कवित्व यदि कमल है तो जीवन जल है ।'[1]

1930 से बच्चन अधिक अच्छा लिखने लगे । पिताजी के रिटायर होते ही घर की स्थिति दयनीय हो गई । तब बच्चन कविता लिखकर उसे छपवाते और रॉयल्टी मिलने पर घर का खर्चा चलाते थे । उन्होंने कहा भी है कि- 'सृजन की साहित्यिकता के प्रति शायद अभी मैं इतना सचेत नहीं हुआ था । उस समय कोई मुझसे सृजन की परिभाषा देने को कहता तो मेरा जबाब होता, जीवन की विवशता ।'[2] उनके कवि बनने में उनकी पूर्व पत्नी श्यामा का बहुत बड़ा हाथ था- 'मेरे कवि होने का विश्वास मुझमें श्यामा ने दृढ़ किया था, और उसका समर्थन श्रीकृष्ण §मित्र§ ने ।'[3] कवि का मानना है कि- 'कविता का काम जीवन की समस्याओं से जूझना है ।' कवि का कहना है कि -'भावना-प्रेरित कवितायें लिखने के लिए प्रेमानुभूति अनिवार्य है क्यों कि भावों की गहराइयाँ प्रेमानुभूति में ही छुई जा सकती हैं । वियोगी और कवि दोनों होना पड़ेगा तभी आपकी भावनायें अभिव्यक्ति पा सकेंगी । सृजन कोई सरल काम तो नहीं, बहुत कठिन काम है, करिश्मा है ।[4]

- -

1. बच्चन:क्या भूलूँ क्या याद करूँ — पृष्ठ-201
2. बच्चन : वही — पृष्ठ-208
3. बच्चन : वही — पृष्ठ-198
4. बच्चन : बच्चन रचनावली §खण्ड-6§ पत्र परिचर्या नौ — पृष्ठ-426

पुराने कवियों में तुलसी और शेक्सपियर और आधुनिक कवियों में पन्त और ईट्स आपके प्रिय कवि हैं । उमर खैयाम ने आपको कवि जीवन के प्रारम्भ में अद्भुत रूप से प्रेरित किया ।

बच्चन जी ने कवि न बनने के लिये अनेक प्रयत्न किये किन्तु विफल रहे । गद्य लेखक और कवि के अन्तर को स्पष्ट करते हुए बच्चन लिखते हैं- 'मैं पेशेवर गद्यलेखक की कल्पना तो कर सकता हूँ पर पेशेवर कवि की नहीं । कवि को जीवन में कुछ और करना ही चाहिये । कविता जब अनिवार्य हो जाए तभी उसके लिये द्वार खोलना चाहिये । मैंने अपने अनुभव से तो यही जाना है कि वह नियमित आगन्तुक नहीं है, न ऐसी कि उसे जब चाहो बुला लो । बिजली का बटन दबाया और रोशनी हो गई । वह तो दामिनी की दमक है । अचानक आयी और गई । बिजली की रोशनी बनाकर जो उससे नियमित प्रकाश पाना चाहेंगे, वे पद्यकार बन जायें, कवि नहीं बन सकेंगे ।'[1]

बच्चन जी शोकोच्छ्वास को काव्योद्गम मानते हैं । बच्चन परिवर्तनशील जीवन को ही कवि की प्रेरणा मानते हैं । कवि ने भावना से बौद्धिकता को नगण्य माना है । अत्याचार और अन्याय के खिलाफ न उठने वाली कलम को कवि ने मान्यता नहीं दी है । एक साक्षात्कार में उन्होंने बताया कि कवि या लेखक के लिये अपने हृदय के उद्गारों की वास्तविक अभिव्यक्ति के लिये जाना हुआ सत्य नहीं वरन् भोगा हुआ सत्य आवश्यक है ।[2]

1- बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर पृष्ठ-332

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §खण्ड-9§ साक्षात्कार दुर्गाप्रसाद नौटियाल पृष्ठ-27-28

बच्चन का कहना है- अनुभवों में डूब और अभिव्यक्ति के माध्यम पर यथासंम्भव अधिकार प्राप्त कर मैंनेअपने आपको प्रेरणा पर छोड़ दिया है --- किसी मनः स्थिति में किसी परिस्थिति में, किसी घटना से, किसी दृश्य से, किसी विचार से सर्जक की वह प्रवृत्ति सहसा जाग उठती है, जो सृजन के लिये विवश करती है । उनकी अनुभूति की मूल प्रेरणा है : कवि का अपना जीवन । बच्चन एक ऐसे व्यक्ति हैं जिनका जीवन ही काव्य है, एक ऐसे कवि, जिनका काव्य ही जीवन ।[1]

कवि का मानना है कि कवि की अनुभूतियाँ रग-नस में पैठी हों, जो नस में डोले, जो नाड़ी में रक्त की तरह बहे । उसी अनुभव से कविता लिखी जा सकती है । कवि को अपनी रचना के लिये कहीं से कभी भी प्रेरणा मिल जाती है उस प्रेरणा को, उस स्मृति को वह अपने हृदय में बहुत समय तक संजोये रहता है और एक दिन वह स्मृति या प्रेरणा किसी न किसी गीत के रूप में निःसृत होने लगती है । कवि ने एक साक्षात्कार में कहा भी है । सृजन के क्षण में कहाँ-कहाँ के संस्कार, सम्बन्ध, स्मृतियाँ जग-मिलकर बोलती हैं--- सर्जक स्वयं उनसे अचेत रहता है । परिपूर्ण सृजन के क्षण में चेतन, अवचेतन, और अति-चेतन का कितना योगदान होता है यह सर्जक के सिवा दूसरा अनुभव नहीं कर सकता ।'[2]

यह कहना अनिवार्य होगा या अधिक उचित होगा कि बच्चन को काव्य

1- कल्याण मल लोढ़ा : बच्चन का काव्य §निबन्ध§ पृष्ठ-17

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §खण्ड-9§ साक्षात्कार-विभा सक्सेना पृष्ठ-144

प्रेरणा स्वयं उनकी अपनी ही अनुभूतियों और जीवन से प्राप्त हुई है । निर्धनता के प्रांगण में घुटरन चलने से लेकर प्रथम विवाह तक जीवन व्यतीत करने के पश्चात भी आज हिन्दी साहित्य के नीलाकाश में ध्रुव के समान अपनी आभा को विकीर्ण कर रहे हैं ।

<u>जीविका</u> :- दुःख, दैन्य, दारिद्र्य के घोर अंधकार से संघर्ष करते हुए कवि ने 'चाँद' प्रेस में एक माह तक काम किया । एक माह बाद प्रेस से निकाल दिये जाने पर प्रयाग महिला विधापीठ में 30रू0 प्रतिमास पर नौकरी कर ली । नौकरी और ट्यूशन के बाद भी 60रू0 से अधिक नहीं कमा पाते थे साथ ही पत्नी श्यामा की अन्त्र-क्षय की बीमारी में धन व्यय होता था । कुछ समय पश्चात 'पायनियर' प्रेस में एक टूरिंग रिप्रेजेन्टेटिव-ऐजेन्ट और संवाददाता की नौकरी मिल गई । सौ रुपये मासिक वेतन, भोजन, भत्ता और यात्रा करने का किराया मिलता था । तीन महीने पश्चात वहाँ से भी निकाल दिया गया तब कवि ने 'अभ्युदय' प्रेस में काम किया । नौकरी के साथ ट्यूशन करते हुए भी कवि श्रम और संघर्षों के अन्तराल में काव्य सृजन करते रहते थे । सबसे पहली कृति 'तेराहार' 1932 में बड़ी कठिनाई से छपी । सन् 1933 में कवि ने 'मधुशाला' जैसी कालजयी रचना का सृजन किया । कवि ने 'मधुशाला' के प्रथम काव्यपाठ के गौरव की अनुभूतियों को निम्न पंक्तियों में वाणी दी है "दिसम्बर में ही मैंने हिन्दू-विश्व विधालय, काशी के शिवाजीहाल में 'मधुशाला' का प्रथम सार्वजनिक पाठ किया । कभी पढ़ा था, जब बाइरन की पुस्तक प्रकाशित होती थी तब खरीदारों की भीड़ पर नियन्त्रण रखने को पुलिस बुलाई जाती थी । --- मैं विश्वविधालय के अहाते

में अकेले नहीं चल सकता था ।"[1]

आरम्भ में कवि को अपनी पहचान बनाने के लिये, यश विस्तार के लिये, प्रसिद्धि के लिये और प्रकाशन के लोभ में काव्य-पाठ करना पड़ा । रॉयल्टी के लोभ से आप अपनी मौलिक और भाव प्रवण कृतियों को प्रकाशकों के पास प्रकाशन के लिये स्वयं देने जाते थे । अग्रवाल विद्यालय में तीन वर्ष सेवा की । 1939 में ही बच्चन जी ने इलाहाबाद युनिवर्सिटी में अंग्रेजी के अस्थायी लेक्चरर के रूप में काम किया । 1940 से स्थायी लेक्चरर बन गए और 1955 में आकाशवाणी इलाहाबाद में हिन्दी प्रोड्यूसर के रूप में नियुक्त किये गए आकाशवाणी इलाहाबाद में बच्चन जी के साथ पन्त जी भी थे ।

दिसम्बर 1955 में ही आपको विदेश मन्त्रालय दिल्ली में हिन्दी विशेषज्ञ पद पर नियुक्ति मिली । आज कवि बच्चन सम्पन्न हैं । आर्थिक सम्पन्नताओं के बावजूद भी कवि बच्चन फिजूलखर्ची नहीं है, कहते हैं "पैसा जहाँ तक हो बचाना चाहिये ।"[2] अपार सुविधाओं और अभावों में भी वे अपने पथ पर चलकर यशस्वी काव्य-सृष्टि करते रहे । यह उनकी मनस्विता है ।"[3]

1- बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ पृष्ठ-206

2- डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व पृष्ठ-23

3- डॉ॰ के॰ जी॰ कदम : कवि श्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन पृष्ठ-35

कृतित्व :-

प्रारम्भिक रचनाएं भाग §।§ :- ई. सन् 1932 में बच्चन जी की कविताओं का प्रथम काव्य संग्रह 'तेरा हार' प्रकाशित हुआ था । कालान्तर में 'तेराहार' की रचनायें प्रारंभिक रचनायें भाग-1, 2 में संकलित कर दी गई । भाग-1 में 49 कवितायें संकलित हैं । प्रस्तुत कृति मेंसन् 1929 से 1933 तक की रचनायें है । विविध विषयों से सम्बन्धित इन कविताओं पर कथ्य और वर्ण्य की दृष्टि से छायावादी प्रभाव स्पष्ट है ।

अलग-अलग विषयों से सम्बन्धित इन कविताओं का मूल स्वर प्रकृत है किन्तु अनेक कविताओं में आदर्शात्मिक व कलात्मक भावना §आइडियलिस्टिक् एण्ड क्रिसटिस्टिक् स्प्रिट§भी निहित है । वस्तुस्थिति यह है कि ये प्रारम्भिक रचनायें यौवनकाल की भूलों को भूलों की सी स्मृति का काव्य है ।[1] यहाँ प्रेमजन्य निराशा है तो आत्मजन्य प्रयास भी । कवि यहाँ आसक्ति-अनासक्ति, आशा-निराशा, कल्पना, यथार्थ, आगत-अनागत के द्वन्द्व में जीता-भोगता मादक छटपटाहट से त्रस्त है । प्रेम, प्रकृति, यौवन, जीवन और जगत विषयक अनेक सूत्रात्मक पंक्तियाँ लिखी गई हैं । इनमें प्रकृति सम्बन्धी, प्रेम सम्बन्धी, राष्ट्रीयता सम्बन्धी तथा व्यक्ति-वादी कवितायें है ।

'मंगलाचरण' शीर्षक कविता में अभिव्यक्त प्रेम-भावना आगे जाकर विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त हुई हैं और इस प्रेम को अमूल्य मानकर कवि मानव में ही अपना

1- कृष्णलाल पण्डया-बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृष्ठ-83

भगवान ढूँढ़ लेता है ।[1] यह प्रेम की पराकाष्ठा है । 'कोयल' कविता का प्रारम्भ छायावादी प्रभाव से अवश्य किया किन्तु अन्त में वे जीवन की कठोर और यथार्थ भूमि पर उतर आए - 'हमारे नग्न-बुभुक्षित देश के लिए लाया क्या संदेश ? साथ प्रकृति के बदलेगा इस दीन देश का भा ?'[2] इस संकलन में कलियों से और 'तितली' सुन्दर प्राकृतिक कवितायें हैं । 'झंडा', 'बंदी' और 'बंदी मित्र' कविताओं में देशभक्तों को उत्साहित किया है । 'चुंबन' और 'मधुकर' जैसी रचनाओं में परतंत्र देश की दुर्दशा का चित्रण है । श्री नवल किशोर भाभडा इसमें छायावाद से अलग कवि का विकासमान वैशिष्ट्य देखते हैं ।[3] डॉ. जीवन प्रकाश जोशी 'बच्चन' की कविताओं में 'जीवन का स्वर' सुनते हैं ।[4]

प्रसाद गुण सम्पन्न अभिधामूलक और सरल साधारण भाषा में लिखी पुस्तक कृति में सहज और अकृत्रिम अभिव्यक्ति की प्रधानता सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है ।

<u>प्रारम्भिक रचनाएं भाग §2§</u> :- प्रस्तुत संग्रह में 39 कवितायें हैं । प्रथम दो कविताओं में जननायक गाँधी जी के प्रति असीम श्रद्धा और आस्था प्रकट हुई है । यहाँ कवि की भावधारा में भिन्न विकास परिलक्षित होता है । 'सच्ची कविता' में वेदना भरे गीतों को ही मधुर गान कहा है- "वे क्या गाने हर्ष भरे जो, जिनमें मधुर विषाद न हो ।"[5]

1- बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं, भाग §1§ पृष्ठ-103

2- वही पृष्ठ-29

3- श्री नवल किशोर भाभडा : बच्चन : जीवन और काव्य पृष्ठ-50

4- डॉ जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-36

5- बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग दो- सच्ची कविता, पंक्ति-8

'कवि और देशभक्त' में वह अपने भारत को नहीं भुलाता । 'गीत विहंग' और 'गानबाल' कवि की उत्कृष्ट कविताएं हैं । 'हमारी शान' कविता में स्वाभिमानी मानव का कर्मयोगी रूप उभरकर सामने आता है । 'वेदने' कविता में कवि दुःखों का उपहार माँगता रहता है । पंत जी इनमें शब्द संगीत एवं साफ सुथरापन देखते हैं ।[1] कल्याणमल लोढ़ा के मत से- 'अनुभूति और अभिव्यक्ति का यह रचनात्मक तादात्म्य उनकी काव्य प्रक्रिया की विशेषता है ।[2]

सरल साधारण भाषा में रचित तथा अलंकारिकता से दूर प्रस्तुत कृति में राष्ट्रीय भावना प्राकृतिक सौन्दर्य और वेदना का स्वर मुखरित हुआ है ।

मधुशाला :- ई॰ सन् 1935 में बच्चन की सर्वाधिक ख्याति प्राप्त पुस्तक 'मधुशाला' का प्रकाशन हुआ । इसमें 135 रूबाइयाँ हैं । सुविधा की दृष्टि से कवि ने बच्चन रचनावली के प्रथम खण्ड में इसे संयुक्त कर दिया है । प्राचीन ग्रन्थों तथा कबीर, तुलसी, मीराबाई, प्रसाद, पन्त, महादेवी, अरविन्द इत्यादि की कृतियों में मधु की व्यापक व्यंजना हुई है, किन्तु आधुनिक हिन्दी काव्य में 'मधुशाला' का प्रकाशन एक ऐतिहासिक घटना है क्यों कि जितनी लोकप्रियता इस ग्रन्थ को मिली, उतनी किसी भी तत्युगीन कृतियों को नहीं मिल सकी । बच्चन जी की 'मधुशाला' 'मधुबाला', और 'मधुकलश' रचनायें मधुकाव्य के अन्तर्गत आती है । सृजन की दृष्टि से उनका मधुकाव्य अधिक मौलिक है ।

'मधुशाला' का मूल स्वर समाज, धर्म और राजनीति की खोखली मान्यताओं

1- बाँके बिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि, पृष्ठ-31

2- प्रो॰ दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन, पृष्ठ-18

का खंडन है । सामाजिक रूढ़ियाँ और वैमनस्य की भावना फैलाने वाले तत्वों के विरुद्ध बच्चन ने इसमें अपनी आवाज उठाई है । हिन्दू-मुसलमानों को आपसी ईर्ष्या-द्वेष दूर करने की सलाह दी है- "मुसल्मान औ हिन्दू हैं दो, एक, मगर उनका प्याला, एक, मगर, उनका मदिरालय, एक, मगर, उनकी हाला ।
दोनों रहते एक न जब तक मस्जिद-मन्दिर में जाते, बैर बढ़ाते मस्जिद-मन्दिर मेल कराती मधुशाला।।"[1]

अपनी कृति-बच्चन रचनावली खण्ड नौ में कवि ने इन पंक्तियों की विस्तृत विवेचना इस प्रकार की है- यह पाकिस्तान बनने के पहले की बात है, भाई साहब, और तब हम यह सोचा करते थे कि, भाई इस मुल्क में तो हिन्दू और मुसलमान दोनों को रहना है, मुसलमान औ हिन्दू हैं दो, एक मगर उनका प्याला- प्याले से मतलब मुल्क से भी है । अगर आप इसको किसी दूसरी दिशा में ले जायें सूफियाना खयालों की ओर तो वहाँ भी आप पायेंगे कि अलग तुमने अपने धर्म बना लिये हैं पर खुदा तो एक ही है । मन्दिर-मस्जिद क्या चीजें हैं? ये हैं फारमेलिटीज ।[2]

'मधुशाला' के सम्बन्ध में बच्चन स्वयं लिखते हैं कि "मधुशाला से मेरे चेतन, अवचेतन, अतिचेतन, संस्कार, अनुभूति में संचित स्मृति-कल्पना, भय-आशा-निराशा, वेदना-संवेदना, हर्ष-विमर्श-संघर्ष, सम्मोह-व्यामोह-विद्रोह सबका बड़ा क्षरण हुआ- कैथारसिस परगेशन रेचन ।"[3] किन्तु आनन्दवाद के गीत कहीं-कहीं उनकी निराशा

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली {1} मधुशाला रू050 पृष्ठ-52
2- बच्चन : बच्चन रचनावली {9} बम्बई दूरदर्शन पर, पृष्ठ-88
3- बच्चन : बच्चन रचनावली {7} आत्मकथा पृष्ठ-207

को विस्मृत नहीं कर पाए । वह स्वतः प्रकट होकर नियतिवाद के गीत गाने लगी-

"किसने अपना भाग्य समझने में मुझसा धोखा खाया,
किस्मत में था अवघट मरघट ढूँढ़ रहा था मधुशाला ।[1]

यदि युगीन परिस्थितियों की ओर दृष्टिपात करें तो हम पाते हैं कि 'मधुशाला' उस युग की कृति है, जब समस्त भारत परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ा था, युवक वर्ग बेकार, थकित, निराश और किंकर्तव्यविमूढ़ की-सी मानसिक स्थिति में था । चारों ओर निराशा का साम्राज्य था । तब उल्लास और उन्मार के मनोरम वातावरण का निर्माण करती हुई 'मधुशाला' क्रान्तिकारी कृति के रूप में अवतरित हुई । 'मधुशाला' की लोकप्रियता और प्रसिद्धि से गौरवान्वित होकर कवि ने स्वयं कहा है- "दिसम्बर 1933 में ही मैंने हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी के शिवा जी हाल में 'मधुशाला' का प्रथम सार्वजनिक पाठ किया । कभी पढ़ा था, जब बाइरन की पुस्तक प्रकाशित होती थी तब खरीदारों की भीड़ पर नियन्त्रण रखने को पुलिस बुलाई जाती थी । जनता जब किसी के पीछे पागल होती है तब उसका क्या रूप होता है । मैं विश्वविद्यालय के अहाते में अकेले नहीं चल सकता था ।"[2]

बच्चन जी ने देशवासियों को स्वतन्त्रता के लिये बलिदान करने की प्रेरणा दी- 'स्वतन्त्रता है तृषित कालिका । बलिवेदी है मधुशाला ।'[3]

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ मधुशाला रू0 98 पृष्ठ-59

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §6§ आत्मकथा पृष्ठ-207

3- बच्चन : रचनावली §1§ मधुशाला रू045 पृष्ठ-51

मधुशाला के प्रति स्वयं कवि का दृष्टिकोण देखिये- "मधुशाला" उस उल्लास की प्रथमाभिव्यक्ति है जिससे मनुष्य बहुत दिनों से बंचित रखा गया है, जिसके लिए वह आज लालायित हो उठा है । 'मधुशाला' की मांग, प्यास, लोकप्रियता के पीछे मैं तो यही रहस्य देखता हूँ । इसकी सरलता, संगीतात्मकता, चित्रमयता आदि गौण है । मानव जीवन की किसी अनिवार्य माँग, दुर्निवार पुकार के बिना इस छोटी सी रचना का केवल अपने बल पर चौथाई शताब्दी तक टिकी रहना असम्भव था ।[1]

प्रियतम परमात्मा से मिलन के लिये, एकाकार होने के लिए बच्चन एक ही पथ पर अग्रसर होने के लिये उत्प्रेरित करते हैं । उनका मानना है कि एक राह पकड़ने से ही परमात्मा से मिलन होगा ।[2]

छुआछूत पर कठोर व्यंग्य करते हुए साथ ही छुआछूत को दूर भगाने के लिये भी उन्होंने संकेत किया है ।[3]

जीवन को नश्वर और क्षणभंगुर इंगित करते हुए मृत्यु के सनातन कटु सत्य से परिचित कराया है ।[4] यत्र-तत्र अद्वैतवाद के दर्शन भी होते हैं । आध्यात्मिकता का रूप मुखर हो उठा है-

---

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ प्रणय पत्रिका पृष्ठ-86

2- डॉ. शिव कुमार मिश्र : नया हिन्दी काव्य पृष्ठ-126

3- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ मधुशाला रू06, पृष्ठ-45

4- वही रू057-58 पृष्ठ-53

इस उधेड़बन में ही मेरा सारा जीवन बीत गया
मैं मधुशाला के अन्दर या मेरे अन्दर मधुशाला ।[1]

कवि को संसृति के कण-कण में परब्रह्म के दर्शन होते हैं । परमात्मा का अंश ही आत्मा में होता है । आत्मा और परमात्मा परस्पर एक दूसरे के पूरक हो गए हैं-

प्रियतम तू मेरी हाला है, मैं तेरा प्यासा प्याला,
अपने को मुझमें भरकर तू बनता है, पीने वाला,
मैं तुझको छक छलका करता, मस्त मुझे पी तू होता,
एक दूसरे को हम दोनों आज परस्पर मधुशाला ।

आचार्य नन्ददुलारे बाजपेई 'मधुशाला' को बेकार युवकों के लिए एक प्रलोभन मानते हैं ।[2]

डॉ॰ बलभद्र तिवारी के अनुसार बच्चन का व्यक्तित्व कृत्रिम मौजमस्ती में लीन रहने का आग्रह करता है ।[3]

डॉ॰ शिव कुमार मिश्र के मत से 'बच्चन ने इसमें अपनी निराशा मस्ती और मौज कृत्रिम आवरण में प्रकट की है ।'[4]

वस्तुतः 'मधुशाला' सभी दृष्टियों से एक क्रान्तिकारी रचना है । पन्त ने तो इसे नवीन स्फूर्ति, प्रेरणा और आनन्द चैतन्य भर देने वाली कृति

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ मधुशाला रू0119 पृष्ठ-62
2- आचार्य नन्ददुलारे बाजपेई : हिन्दी साहित्य बीसवीं शताब्दी, पृष्ठ-26
3- डॉ॰ बलभद्र तिवारी : आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका पृष्ठ-180
4- डॉ॰ शिवकुमार मिश्र : नया हिन्दी काव्य, पृष्ठ-126

कहा है ।[1]

आलोचकों ने 'मधुशाला' में दार्शनिक पक्ष स्वीकार नहीं किया है । डॉ॰ जगदीश नारायण त्रिपाठी तो बच्चन के हालावादी काव्य में दर्शन का उन्माद नहीं, उन्माद का दर्शन देखते हैं । उनका मानना है कि दर्शन का उन्माद तो उमर खैयाम के ही काव्य में है, जो विश्व के हालावादी काव्य का प्रेरक और सिरमौर है ।[2]

डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी का कहना है कि- "जीवन की क्षणिक सत्ता को किसी झिझक और संकोच में काट देना ठीक नहीं, इसको परिपूर्ण करने के लिये सौन्दर्य का मादक आसव आवश्यक है । बच्चन ने उमर खैयाम की माँग इस मिट्टी के तन और मस्ती के मन को सौन्दर्य और प्रेम की मदिरा से सार्थक बनाने के गान गाए । इनकी कविता में जो मादकता थी उसने सहृदयों को आकृष्ट किया ।[3]

बच्चन जी ने मदिरा का प्रचार कभी नहीं किया उन्होंने घर-घर तक हिन्दी कविता की मदिरा को पहुँचाकर जन-साधारण में कविता के प्रति रुचि जाग्रत की । उन्होंने कविता की मदिरा दी है, मदिरा की कविता नहीं ।[4]

'मधुशाला' के मधुमय प्रांगण में मधु का प्याला लिये, साकियों के बीच नृत्य करते हुए तथा सुरा सुन्दरी के सौन्दर्योपासक मदांध कवि को हालावादी के

- -

1- सं॰ बाँके बिहारी भटनागर : बच्चनः व्यक्ति और कवि पृष्ठ-27

2- डॉ॰ सत्येन्द्र कुमार सिंह : हिन्दी के प्राचीन और आधुनिक कवि पृष्ठ-165

3- डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास §राजकमल प्रकाशन 1984 द्वितीय संस्करण§ नई दिल्ली पृष्ठ-276

4- सं॰ दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृष्ठ-89

विशेषण से विभूषित किया गया है । यह कवि की उपहासास्पद उपेक्षा है । कवि ने मधुशाला, हाला या प्याला का उपमान शराबी वातावरण निर्माण के लिये नहीं ग्रहण किया है अपितु उसकी 'हाला' में सामाजिक जीवन का हलाहल और मानव हृदय का हाहाकार भरा है । उसमें संघर्ष की सदा प्रवाहित सुरा सुखद साम्यवाद और समाजोत्थान का स्त्रोत भी समाहित है । हाला की हल्की कल्पना मानव के दुःखमय जीवन को विस्मृत करने में विशेष सहायक तथा अन्तर और बाह्य के सुन्दर समन्वय में सर्वाधिक सफल हुई है ।

इसकी सभी रूबाइयाँ प्रतीकात्मक हैं, जिनमें कवि ने शराब, सुराही, प्याला साकी और मीना को प्रतीक बनाया है । 'मधुशाला' में धर्म, समाज और काल की उद्दाम अवज्ञा है । इसमें ध्वनियों तथा प्रतिविम्बों का विशेष आकर्षण है । शिल्पविधान की दृष्टि से ध्रुव-अन्तरादि संगीत तत्वों का विशेष आकर्षण है साथ ही गेयत्व, अनूठी स्वर-लय एवं झंकृति है । गीत की आत्मपरकता तथा अनुभूति का रागात्मक उन्मेष सरल साधारण भाषा में किया गया है ।

<u>मधुबाला</u> :- 'मधुबाला' का प्रकाशन ई॰ स॰ 1936 में हुआ । इसमें 'प्रलाप' के बाद पन्द्रह कवितायें हैं । 'प्रलाप' में कवि के हृदय को निचोड़ने वाली पीड़ा और यथार्थ का पूर्णरूपेण रेखाँकन है । कवि मित्र श्रीकृष्ण की प्रेमिका प्रकाशो फरारी हालत में बच्चन के घर अकस्मात आ गई और रुग्णश्यामादेवी की अनुपस्थिति में गृहस्थी के कार्यों में हाथ बँटा-बँटाकर माता-पिता की भी स्नेहिल बन गई । धीरे-धीरे प्रकाशो बच्चन के निकटतर आती गई फलस्वरूप दोनों साथ-साथ स्त्रष्टा भोक्ता[1] बने । इस रोमांचक अनुभूति को ही 'मधुबाला' के गीतों में अभिव्यक्ति

1- बच्चन : बच्चन रचनावली {6} आत्मकथा पृष्ठ-216

मिली है । कवि ने स्वयं स्वीकार करते हुए कहा भी है- 'मधुबाला' के अधिकांश गीत- मैं निश्चित रूप से क्यों न कह दूँ कि एक-दो को छोड़ सब- उसी समय लिखे गए थे ।[1]

'मधुशाला' की रानी 'मधुबाला' का रूप-सौन्दर्य अनुपम है----अद्वितीय है । उनकी मधुबाला सौन्दर्य-साम्राज्ञीहै । रूप-लावण्य की अरुणिमा में यौवन का तारुण्य- कवि विमुग्ध है- सृष्टि मुग्ध और प्रकृति विमोहित सी । वह पीड़ितों की संजीवनी है । सोनजुही सी उसकी मुस्कान मन का सारा दर्द खींच लेने की क्षमता रखती है । वह अपने जादुई स्पर्श से जड़वत मानव हृदय को चिर-जीवन देने की सामर्थ्य रखती है । वह अनुपम और नैसर्गिक सुख - सिन्धु है ।

कवि ने शराब पीने के दुष्परिणामों का भी संकेत किया है । भाषा-लालित्य, ध्वन्यात्मकता, अनुप्रास की स्वाभाविक योजना शब्द-चित्र और सुन्दर शब्द - योजना दर्शनीय है ।

'मालिक मधुशाला' में रूढ़ि ग्रस्त व्यक्ति को क्रान्ति की प्रेरणा और जाति वर्ण, धर्म, सम्प्रदाय, लिंग, धन के आधार पर विभाजित समाज को एकता के सूत्र में बन्धन का उपदेश दिया है ।[2] 'मधुपायी' में धार्मिक, सामाजिक, नैतिक आदर्शों पर कड़ा प्रहार किया गया है । मधुपायी की इच्छा है- अब तो इस पृथ्वी तल पर ही । सुख, स्वर्ग बसाने हम आये ।[3] 'पथ का गीत' में बच्चन जी

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §7§ आत्मकथा पृष्ठ-217

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ मधुबाला पृष्ठ-86

3- वही पृष्ठ-88

का आत्मविश्वास प्रकट हुआ है- हम सब मधुशाला जायेंगे । आशा है मदिरा पायेंगे, किन्तु हलाहल ही यदि होगा । पीने से कब घबरायेंगे ।[1]
'सुराही' कविता में समाज के खोखले आदर्शों के प्रति आक्रोश है, साथ ही जीवन की वास्तविकता से साक्षात्कार कराया गया है ।

'प्याला' कविता में कवि ने क्षणभंगुर जीवन के सनातन सत्य को उभारा है- मिट्टी का तन, मस्ती का मन, क्षण भर जीवन मेरा परिचय ।[2] 'हाला' कविता में कवि ने मदिरा के साथ-साथ अपने विषय में फैले संशयों को भी वर्णित किया है ।[3] 'इस पार-उस पार' कविता, कवि की इस संसार के प्रति आसक्ति को प्रकट करती है और उस पार के प्रति गहन दुख और क्षोभ को व्यक्त करती है । इस गीत को आलोचकों ने पलायन वादी गीत की संज्ञा दे दी है । 'पाँच पुकार' कविता में कवि ने उन्मत्त वातावरण में मदांध सुरा प्रेमियों के समक्ष साक्षात् मृत्यु का चित्रण कर कविता में कारुणिक और भयानक दृश्य उपस्थित किया है । 'आत्म परिचय' में समाज की चिन्ता त्याग कर अपने मन की करने की कवि ने ठान ली है । सच्चे अर्थों में अपने दुःखों की पूर्ण अभिव्यक्ति इस गीत में हुई है । काव्याभिव्यक्ति के कठोर सत्य को उभारा है- मैं रोया, इसको तुम कहते हो गाना, मैं फूट पड़ा, तुम कहते, छन्द बनाना । क्यों कवि कहकर संसार मुझे अपनाए । मैं दुनिया का हूँ एक नया दीवाना ।[4]

1- बच्चन   बच्चन रचनावली §1§ मधुबाला   पृष्ठ-90
2- वही   पृष्ठ-95
3- वही   पृष्ठ-97
4- वही   पृष्ठ-112

'मधुबाला' में खोखले आदर्शों के विरुद्ध और आकुल यौवन एवं क्षण भंगुर जीवन के बिम्बों द्वारा क्रान्ति का सन्देश है साथ ही परलोक की चिन्ता किए बिना सगर्व संघर्षरत रहने की मंगलकामना है ।

मधु कलश :- ई. स. 1937 में 'मधुकलश' का प्रथम प्रकाशन हुआ । इसमें 12 गीत हैं 'मधुकलश' अस्तित्ववादी दर्शन का गीतमय रूपान्तर है । 'मधुकलश' के माध्यम से बच्चन ने एक प्रकार से अपने समालोचकों की कटु आलोचनाओं का उत्तर दिया है -

> 'मैं छिपाना जानता तो जग मुझे साधु समझता
> शत्रु मेरा बन गया है छलरहित व्यवहार मेरा ।[1]

'मधुकलश' शीर्षक कविता में समग्र सृष्टि की जीवन्तता और चैतन्यता को मुखरित किया है । जीवन के सत्यों को उभारा है-

> जीवन में दोनों आते हैं मिट्टी के पल, सोने के क्षण,
> जीवन में दोनों जाते हैं पाने के पल, खोने के क्षण ।[2]

'मेघदूत के प्रति' कविता में कवि का कालिदास के 'मेघदूत' के प्रति अनन्य अनुराग प्रकट होता है । कवि ने स्वयं स्वीकार किया है अपने चारों ओर के दुखद संसार से ऊपर उठने में 'मेघदूत' ने मेरी बड़ी सहायता की है ।[3]

'कवि का उपहास', 'कवि की निराशा', 'कवि की वासना', 'कवि का गीत' और 'पथभ्रष्ट' कविताओं में कवि ने अपने ऊपर लगाए गए वासना, पथ-

---

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ मधुकलश पृष्ठ-

2- वही पृष्ठ-127

3- वही पृष्ठ-120

भ्रष्टता और निराशा आदि आरोपों का दो टूक उत्तर दिया है । 'मॉफी' और 'लहरों का निमन्त्रण' रचनायें संघर्षों से जूझकर आगे बढ़ने की परिचायिका है । 'मधुकलश' की अन्तिम कविता 'गुलहजारा' में अपनी पत्नी श्यामा को मृत्युशय्या पर पड़े देख तथा उसकी यत्नज मुस्कान को देख कवि की पीड़ा इन शब्दों में अभिव्यक्त हो उठी है -

बीज के जो कोष बाकी थे, गया ले तोड़ माली
पीत होकर अब ठिठुरती पत्तियाँ हैं नोक वाली ।

सभी समालोचक श्री रामस्वरूप चतुर्वेदी 'मधुकलश' की कविताओं को बेजोड़ मानते हैं ।[1] पन्त जी के अनुसार- बच्चन की रचनाओं का सबसे बड़ा गुण यह भी है कि उसकी पंक्तियाँ बिजली की तरह कौंधकर मन में प्रवेश कर जाती हैं और अपने ही प्राणोन्मत्त प्रकाश के चांचल्य में स्मृति-पट पर बीच-बीच में चमक-दमक उठती है ।[2]

सारांशतः 'मधुकलश' तत्कालीन समाजदर्शन का स्पष्ट दर्पण है जिसमें मनुष्य की महत्वाकाँक्षा, साहसिकता और दुर्दयनीय सुखेषणा मे दर्शन होते हैं ।

<u>निशा - निमन्त्रण</u> :- स्वर्गागता श्यामा देवी को समर्पित यह काव्य-ग्रन्थ 1938 में प्रकाशित हुआ । इसमें सौ गीत हैं । इन गीतों में नियति की निर्ममता का भयंकर प्रहार और उसके कारण उठा मर्मभेदी चीत्कार ध्वनित होता है । पत्नी श्यामादेवी उन्हें छोड़कर चली गई । अतः वे भीषण दुख और घोर अवसाद में डूबने

1- नयी कविता - संयुक्तांक 5-6, रामस्वरूप चतुर्वेदी, पृष्ठ-88

2-'अभिनव सोपान' की भूमिका 'सोपान पर से': सुमित्रानन्दन पन्त पृष्ठ-23

उतराने लगे । उसी दुख और गहन वेदना की अभिव्यक्ति इन गीतों में हुई है । 'निशा-निमन्त्रण' कवि की नितान्त स्वयं की वेदना की अभिव्यक्ति है किन्तु यह कवि विशेष की विरह-वेदना न रहकर समस्त मानव जाति की विरह-व्यथा के गीत बनने के अधिकारी हुए, यह बच्चन की मुख्य विशेषता है और महत्त्वपूर्ण उपलब्धि भी है ।

जीवन-संगिनी श्यामा के बिछुड़ जाने पर कवि का हृदय अपनी असहायता पर रो उठता है -

> याद सुखों की आँसू लाती, दुःख की दिल भारी कर जाती
> दोष किसे दूँ जब अपने से अपने दिन बर्बाद करूँ मैं
> क्या भूलूँ क्या याद करूँ मैं ।[1]

'निशा-निमन्त्रण' के सौ गीत सन्ध्याकाल से लेकर प्रातःकाल तक की पृष्ठभूमि में लिखे गए हैं । दिवसावसान के साथ 'निशा-निमन्त्रण' का आरम्भ होता है । शनैः शनैः अंधकार बढ़ता जाता है और दीपक पर परवाने आने लगते हैं, गिरजे से घण्टे की टन-टन, रोने का स्वर, रात भर श्वान का भूँकना, बिल्ली का आउ-आउ करना कवि के विषाद को अभिव्यक्त करता है । 'निशा निमन्त्रण' के सभी गीतों में मानो साक्षात वेदना ही अश्रु प्रपात करती है । अन्तिम गीतों में कवि की जीवन के प्रति आशा और अभिलाषा द्रष्टव्य है ।

नीरज के विचार से 'सूक्ष्मता, सहजता, भावान्विति तथा प्रभावक्षमता की दृष्टि से 'निशा-निमन्त्रण' हिन्दी गीति काव्य की अमूल्यनिधि है ।---

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ निशा-निमन्त्रण, पृष्ठ-197 गीत-92

निशा निमन्त्रण सौ गीतों का एक महाकाव्य है ।[1] नीरज जी की यह बात साहित्य की कसौटी पर बिल्कुल खरी उतरती है । श्री नवल किशोर भाभड़ा के अनुसार 'निशा-निमन्त्रण' का मूल स्वर निराशा का है । किन्तु सच तो यह है कि यह स्वर दुःख अवसाद, वेदना और विरह-व्यथा का है । कुछ गीतों में स्मृतिजन्य विह्वलता है । नियति के निर्मम प्रहार की मर्मान्तक पीड़ा है, असामर्थ्य-बोध है, असहाय, अकेले, विधुर मानव का करुण-क्रन्दन है । किन्तु पलायनवादिता के दर्शन कहीं भी नहीं होते । डॉ॰ नगेन्द्र, डॉ॰ पंड्या और डॉ॰ जोशी सभी के विचारों से 'निशा-निमन्त्रण' अनुभूति, कला, कल्पना, वातावरण, भाषा, भाव और रागत्व की दृष्टि से एक सम्पन्न रचना है ।

शिल्प की दृष्टि से बच्चन की कृति 'निशा-निमन्त्रण' में प्रतीकों और विम्बों का चयन अत्यन्त सहज और प्रकृत ढंग से हुआ है । अधिकाँश प्रतीक प्रकृति से लिये गए हैं । जिसके जड़ और चेतन दोनों रूपों को बच्चन ने समान रूप से अपनाया है । अपने नितान्त एकाकीपन के दुःख को चेतन प्रतीक के द्वारा चित्रित किया है -

> अन्तरिक्ष में आकुल-आतुर
> कभी इधर उड़, कभी उधर उड़
> पंथ नीड़ का खोज रहा है पिछड़ा पंछी एक-अकेला[2]

सरल साहित्यिक भाषा में लिखे गए गीत भाषा, शैली-शिल्प, भाव, कल्पना, अनुभूति आदि की दृष्टि से 'निशा-निमन्त्रण' एक अद्वितीय गीति-काव्य है ।

1- सं॰ प्रो॰ दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन §नीरज का लेख§ पृष्ठ-97

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ निशा-निमन्त्रण, पृष्ठ-163 गीत-5

एकान्त - संगीत :- सन् 1938-39 में लिखित और सन् 1939 में प्रकाशित इस काव्य ग्रन्थ में सौ गीत हैं । निराश, एकाकी, और अन्तर्मन से टूटे हुए कवि का अन्तर्द्वन्द्व है । एक ओर कवि अपनी प्राण-संगिनी से सदा के लिये विच्छेदित हृदय की निराशा, विषाद और व्यथा से लड़ता है तो दूसरी ओर इस जर्जर समाज की मान्यताओं से लड़ता है -

> कितना अकेला आज मैं
> संघर्ष से टूटा हुआ, दुर्भाग्य से लूटा हुआ
> परिवार से छूटा हुआ, कितना अकेला आज मैं ।[1]

इन गीतों में नितान्त एकाकी कवि की करुण व्यथा का संगीतमय रुदन है । कवि अपने स्वप्नों को साकार न पा जीवन को निरर्थक समझने लगता है-

> मेरा तन भूखा, मन भूखा ।[2]
> व्यर्थ गया क्या जीवन मेरा ?
> प्यासी आँखे, भूखी बाहें,
> अंग-अंग की अगणित चाहें ।[3]

हारकर कवि कराह उठता है -

> अब तो दुख के दिवस हमारे ।[4]

फिर भी यह सर्व निरपेक्ष, सर्वस्वतन्त्र स्वयं भू मानव है जिसने परिस्थितियों के सामने घुटने नहीं टेके हैं और जिसने अपने महाद्रोह के झंड़े को अनन्तकाल के लिये सुदृढ़ गाड़ दिया है ।[5] एकाकी कवि सोचते हैं कि जीवन को शाप कहें या

1- बच्चन : बच्चन रचनावली (1) एकान्त संगीत, पृष्ठ-257 गीत-100

2,3- वही पृष्ठ-217, गीत-5, 6

4- वही पृष्ठ-222 गीत-1, 2

5- डॉ॰ रामरतन भटनागर : साहित्य संदेश, बच्चन विशेषांक, नवम्बर-दिसम्बर 1967, पृष्ठ- 203

वरदान । अतः समस्त विश्व शक्ति के समक्ष वे अपने पुर्ननिर्माण का विरोध करते हैं -

अब मत मेरा निर्माण करो
कुछ भी न अभी तक बन पाया, युग-युग बीते मैं घबराया

किन्तु अपने अस्तित्व की ओर संकेत कर कह उठते हैं -

कुछ मेरे भी वश में, मेरा कुछ सोच-समझ अपमान करो ।[1]

आधि, व्याधि, काल कर्म से ग्रस्त, जीवन को युद्ध क्षेत्र मान, संसार, समाज, नियति, ईश्वर तथा स्वयं से छन्द करते हुए कवि गा उठते हैं -

प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर ।
युद्ध क्षेत्र में दिखला भुजबल
रहकर अविजित, अविचल प्रतिपल ।[2]

स्वाभिमानी कवि संघर्षों से जूझते हुए आत्मसमर्पण नहीं करते और कह उठते हैं -

क्षतशीश मगर नतशीश नहीं ।
बनकर अदृश्य मेरा दुश्मन,
करता है मुझ पर वार सघन[3]

एकाकी क्षणों में जब उन्हें अपने अकेलेपन का बोध होता है और दो हृदय के मिलन की विफल आशा एवं प्रियतमा के अधर मधु में मिले गरल से कवि विकल हो उठते हैं । तब आशा की एक भी किरण नहीं दीखती । फिर भी एकान्त संगीत में कवि की अपराजेय जिजीविषा प्रकट हुई है । अतः कवि का मनुष्य अश्रु, स्वेद, रक्त से लथपथ होने पर भी चलता है ।[4]

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ एकान्त संगीत, पृष्ठ-215, गीत-1
2- वही पृष्ठ-254,,गीत-92
3- वही पृष्ठ-238, गीत-54
4- वही पृष्ठ-246, गीत-73

अग्निपथ का यह ओजस्वी कवि अविश्रान्त आगे बढ़ने की शपथ लेता है । एकान्त संगीत में किसी के समक्ष न झुकने और अन्त तक अविराम बढ़ते जाने की ओजस्वी वाणी मुखरित है ।

डॉ॰ भाटी के अनुसार 'एकान्त संगीत' के गीत निराशापरक हैं किन्तु निराशा के साथ-साथ आशा की नई किरण भी धीरज में दबे पैरों से दस्तक देती हुई प्रतीत होती है । डॉ॰ नगेन्द्र इसमें 'महान कविता' देखते हैं ।[1] श्री वीरेन्द्र कुमार जैन के अनुसार कवि ने एकात्मकता की एक अद्भुत लयकारी का सृजन किया है 'एकान्त संगीत' के गीतों में ।[2] डॉ॰ पटेल बच्चन की भाषा का मुख्य गुण प्रत्यक्षता और सरलता मानते हैं ।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि प्रस्तुत रचना में निराशा के साथ-साथ आशा और जिजीविषा है । प्रवाहमय भाषा, मुहावरे और रूपक, श्लेष की छटा भी द्रष्टव्य है । छायावादी प्रतीकों का भी प्रयोग यत्र-तत्र दर्शनीय है ।

आकुल अन्तर :- सन् 1940-42 में लिखित और 1943 में प्रकाशित इस कृति में 71 गीत हैं । इन गीतों में गहन अंधकार से बाहर झाँकने की कवि की व्याकुलता है । 'आकुल-अन्तर' वैयक्तिक विषाद से उबरकर और उभरकर गीत गाने का कवि का प्रबल प्रयास है ।[3]

यहाँ अपनी व्यथा विषाद से संत्रस्त कवि निराशा के गहन तिमिर से

- -

1- डॉ॰ नगेन्द्र : आस्था के चरण, पृष्ठ-420

2- सं॰ रमेश गुप्त : बच्चन : निकष पर पृष्ठ-98

3- डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-54

दूर आशा के सनातन सूर्य की ओर बढ़ने को प्रयत्नशील है । आकुल-अन्तर के गीतों में संघर्षों से जूझने की प्रेरणा है ।

वैयक्तिक दुःख-सुख से ऊपर उठकर कवि की दृष्टि बाह्य जगत की ओर चली जाती है - 'क्या तुझ तक ही जीवन समाप्त ।'[1] अब वह अपने जीवन का पृष्ठ उलट देने के लिये कहता है ।

निराश कवि का सिद्धान्तवादी दृष्टिकोण दर्शनीय है-

प्राणों का प्यारा धन-कंचन
सहसा अपहृत हो जाने पर
जीवन में जो कुछ बचता है
उसका भी है कुछ आकर्षण ।

कवि उच्छवास, आँसू, आग, धुएं, कीचड़ और कंटकों की विषण्ठा भूमि में मृगतृष्णा को देख बोल उठते हैं-

तुममें आग नहीं है तब क्या संग तुम्हारे खेलूँ ?[2]

किन्तु फिर भी कवि अपनी अन्तर्ज्वाला में प्रणय का अर्घ्य लेने को आकुल-व्याकुल है ।

'यह एक रश्मि-
पर छिपा हुआ है इसमें ही ऊषा बाला का अरुण रूप ।'[3]

कवि निराशावादी नहीं है इसलिये अन्तर्निहित नारी को, अस्वाभाविक बीमारी समझ, विषाद में से अस्तित्व की ऊँची आवाज उठाते हैं, पीड़ा की

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ आकुल अन्तर, पृष्ठ-287 गीत-46

2- वही पृष्ठ-270 गीत-7

3- वही पृष्ठ-298 गीत-68

अधिकता में कवि की छाती पत्थर की हो जाती है । इसी लिये संघर्ष के शिखर पर चढ़कर तीव्रतापूर्ण प्रबल, प्रचंड आवेश में नियति शासित और जग त्रासित को स्वाभिमान से जीने की उग्र प्रेरणा देते हुए बोल उठते हैं -

जब कि ध्येय बन चुका,
जब कि उठ चरण चुका
स्वर्ग भी समीप देख
मत ठहर, मत ठहर, मत ठहर ।[1]

राजानन्द और डॉ॰ जोशी इन गीतों में अनुभूति-अभिव्यक्ति की तीव्रता और स्वाभाविकता नहीं देखते । किन्तु उनका यह एकांगी दृष्टिकोण है । डॉ॰ सुधाबहन पटेल इन गीतों में प्रगति के सोपान पर चढ़ने की कवि की व्याकुलता देखती हैं । डॉ॰ कृष्ण चन्द्र पण्ड्या के विचार दर्शनीय हैं - तत्युगीन मानव-जीवन की अस्तित्व-सापेक्षिकता का अभिव्यंजनात्मक प्रस्तुतीकरण जितना इन गीतों में हुआ है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है । मधु की मादकता और निराशा की घुटन से टूटे और छले कवि के स्वर का इस प्रकार का उर्ध्वीकरण एक सुखद आश्चर्य का ही प्रतीक माना जाएगा ।[2]

इस प्रकार 'आकुल अन्तर' वैयक्तिक विषाद से उबरकर और उभरकर गीत गाने का प्रबल प्रयास है । सौन्दर्यकृति और क्षुधा-कृति की समस्या के चित्र तितली और बिस्तुइया के द्वारा प्रस्तुत किये हैं ।

राजानन्द जी के अनुसार 'आकुल अन्तर' के गीतों में भावुकता कम विवेक तथा तर्क अधिक है । कहीं-कहीं कवितायें कल्पना से दूर शुष्क तथा कहीं महान

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ आकुल अन्तर, पृष्ठ-297 गीत 65

2- बच्चन व्यक्तित्व एवम् कृतित्व, प्रो॰ कृष्णचन्द्र पृष्ठ-128

कथन बनकर रह गई हैं । किन्तु यह इनका एक पक्षीय दृष्टिकोण प्रतीत होता है । क्योंकि 'आकुल-अन्तर' के गीतों में निराशा नहीं आशा और आस्था है । अपने अस्तित्व के प्रति सजगता है । 'आकुल-अन्तर' आशा की सुनहली भोर के समीप और समीपतर पहुँच संघर्षों से जूझने की कविता है ।

सरल साहित्यिक भाषा के साथ मुहावरों का प्रयोग देखने को मिलता है । सादृश्यमूलक एवं अपह्नुति अलंकारों का प्रयोग यत्र-तत्र देखने को मिलता है ।

सतरंगिनी :- सन् 1942-44 के बीच लिखित और 1945 में प्रकाशित सात रंगों में रंगी इन्द्रधनुषी रचना है । 'सतरंगिनी' में कुल 50 कविताएं हैं । एक प्रवेश गीत है -

'इन्द्रधनुष की छाया में, और सात रंग §खण्ड§
प्रत्येक रंग के सात गीत, उसके सात-सात शेड ।

'सतरंगिनी' से बच्चन जी की कविता का तीसरा मोड़ परिलक्षित होता है । सतरंगिनी के विषय में स्वयं कवि के विचार- " 'सतरंगिनी' अंधकार के ऊपर प्रकाश, विध्वंस के ऊपर निर्माण, निराशा के ऊपर आशा और मरण के ऊपर जीवन की जीत का गीत है । यह कोई सस्ता आशावाद नहीं । यह 'अश्रु, स्वेद, रक्त' का मूल्य चुकाकर उपलब्ध किया गया है । इसने मेरा स्वर ही नहीं बदला, इसने मेरा जीवन भी बदला ।[1]

कवि का मानना है कि 'निशा-निमन्त्रण,' 'एकान्त संगीत', 'आकुल-अन्तर' उनके उस काल की अभिव्यक्तियाँ हैं जब उनके जीवन में पीड़ा, वेदना, निराशा, अवसाद, विषाद, अंधकार, एकाकीपन की लक्ष्यहीनता को प्राणों की

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ सतरंगिनी §भूमिका§ पृष्ठ-310

तरह अपनाने को वो विवश थे । और उन्हें जीवन और मृत्यु दोनों ही व्यर्थ प्रतीत होते थे । 'निशा-निमन्त्रण' में स्वप्न भी छल जागरण भी । की पूर्ण अभिव्यक्ति हुई है । किन्तु कवि ने स्वीकार किया है कि जीवन में सदा दुखी रहने का आदर्श नहीं बनाया जा सकता । यह जीवन की प्रवृत्ति के प्रतिकूल है । जीने वाले के लिये यह अस्वस्थ है, अस्वाभाविक है ।

तेजी से विवाह होने पर कवि के निराश, एकान्त और टूटे हुए जीवन में आशा और उल्लास का संचार हुआ उसी हर्ष और आनन्दातिरेक में 'सतरंगिनी' के गीत कवि की मधुर वाणी से निःसृत होकर लेखनी से पदबद्ध हो गए और यहाँ निराश कवि के उर में विहग गीत गुनगुनाने लगा है -

> काले घनों के बीच में, काले क्षणों के बीच में
> उठने गगन में, लो, लगी
> यह रंग-बिरंग विहंगिनी ! सतरंगिनी, सतरंगिनी ।[1]

उपर्युक्त पंक्तियों के विषय में कवि ने लिखा है- 'सतरंगिनी' तम भरे, गम-भरे बादलों के ऊपर इन्द्र धनुष रचने का प्रयास है- अवसाद के अन्धकार से प्रसन्नता की रंगच्छटा में आने का । सतरंगिनी आग से राग के संसार में पदार्पण का बोध कराती है ।[2]

प्रथम गीत 'इन्द्रधनुष की छाया में' एक सफल गीत है जो कवि-जीवन के परिवर्तनों को चित्रित करता है ।

पहले रंग में 'सतरंगिनी' आकाशीय इन्द्रधनुष न होकर पृथ्वी पर मधु हास बिखेरने वाली रंग बिरंगी विहंगिनी भी है । 'वर्षा समीर' एक विशुद्ध

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ सतरंगिनी, पृष्ठ-328, पहला रंग

2- बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर, पृष्ठ- 354

प्राकृतिक कविता है । जो अन्त में संसार के कटु अनुभवों को झेलती हुई पूर्णता को प्राप्त करती है । 'कोयल' कविता भी एक सुन्दर प्राकृतिक कविता है । जिसमें एक लघु कथा का कथानक दृष्टिगोचर होता है । 'पपीहा' एक लघु कविता है जिसमें मानव अस्तित्व और उसकी दुर्निवार मांग का संकेत है । 'जुगनू' कविता में विषम परिस्थितियों में भी आशा और दृढ़ विश्वास का परिचय मिलता है । 'नागिन' कविता में नागिन के प्रलयंकारी और भयंकर रूप वर्णन के साथ प्रमदा नारी के प्रतीक रूप में चित्रित किया है जो रहस्यमयी छलना है । 'मयूरी' एक प्रतीकात्मक लघु कविता होते हुए भी एक सफल और बहुचर्चित रचना है । मयूरी को प्रणय-परिणीता सौभाग्यवती नारी का प्रतीक माना गया है । 'मयूरी' {तेजी} के आगमन से कवि-जीवन में उल्लास भर जाता है । भाषा, शिल्प और भाव की दृष्टि से यह एक मनोहारी रचना है । 'प्रभाव की दृष्टि से 'नागिन' सशक्त रचना है ।[1] 'नागिन' की प्रशंसा करते हुए सुधाबहन पटेल ने भी लिखा है- 'खड़ी बोली काव्य में ऊँची शब्द-शिल्प-साधना एवं ओज शैली में माया का प्रभावपूर्ण अभिव्यंजन, अप्रतिम है ।[2]

प्रथम रंग की कविताओं से स्पष्ट होता है कि कवि के हृदय में प्रणय की भावनाएं उदबुद्ध हो रही हैं । मयूरी का मगन होकर नाचना और नागिन का फून्कार के साथ नर्तन करना भी उनके हर्ष और आह्वाद को व्यक्त करता है ।

द्वितीय रंग की कविताओं में विगत मधुर स्मृतियों से उबरने का प्रयास

1- श्री नवल किशोर भाभडा : बच्चन : जीवन और काव्य पृष्ठ-62

2- डॉ॰ सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृष्ठ-84

है । नवीन आशा का संचार हुआ है-

> है अंधेरी रात, पर दीवा जलाना कब मना है ?
> खोज मन का मीत कोई लौ लगाना कब मना है ?[1]

'जो बीत गई' कविता में भी आशा और विश्वास का रूप मुखरित हुआ है -

> जो बीत गयी सो बात गई
> जीवन में एक सितारा था, माना, वह बेहद प्यारा था,
> वह डूब गया तो डूब गया, अम्बर के आनन को देखो[2]

द्वितीय रंग की सभी कविताओं में जड़ता के विरुद्ध जीव की अमरशक्ति तथा विजय यात्रा के उद्‌गीत हैं ।

तृतीय रंग की कविताओं में नाश और प्रलय के साथ नवनिर्माण की सफल अभिव्यंजना है -

> नाश के दुख से कभी दबता नहीं निर्माण का सुख,
> प्रलय का निस्तब्धता से सृष्टि का नव गान फिर-फिर
> नीड़ का निर्माण फिर-फिर ! नेह का आह्वान फिर-फिर.[3]

चतुर्थ रंग की कविताओं में कवि की प्रणय-भावना सम्पूर्ण आवेग के साथ गुनगुना रही है । इन प्रेम-गीतों को गाकर मन प्रेम-रस से सराबोर हो जाता है -

> कौन जादू डालता है आज फिर मेरे नयन में ?[4]

प्रेम का दूसरा चित्र दर्शनीय है -

> छू गया है कौन मन के तार, वीणा बोलती है ![5]

1- बच्चन :	बच्चन रचनावली §1§ सतरंगिनी,	दूसरा रंग	पृष्ठ-340
2-	वही	वही	पृष्ठ-343-44
3-	वही	तृतीय रंग	पृष्ठ-349
4-	वही	चतुर्थ रंग	पृष्ठ-350
5-	वही	वही	पृष्ठ-352

पंचम रंगों की कविताओं में शूल सी चुभने वाली भूलों को सुधारने, कृतज्ञताज्ञापन और अभिसार के क्षणों को सर्वांश में भोगने की अभिव्यक्ति है । 'मुझे पुकार लो', 'कौन तुम हो' और 'जयमाल' प्रचलित कवितायें हैं । चिरतृषित अधरों पर सुधामयी एक बूँद की कामना करते हुए कवि ने लौटा लाओ की पुकार लगाई है -

> मैं तो बरन इतना कहता हूँ-वह एक बूँद लौटा लाओ,
> जो सुधामयी बन जाती है गिरकर अधरों से अधरों पर ।[1]

छठे रंग में लघु-लघु छन्दों में लिखी कविताओं में नूतन वर्ष के हर्ष, जीवन उन्मेद, प्रणय-पीर, स्नेह, वात्सल्य के गीत गाए गए हैं । कवि अपने प्रथम पुत्र अभिजाभ के जन्म दिवस पर निम्न पंक्तियों को लिपिबद्ध कर दिया-

> फल्ल कमल, गोद नवल, मोद नवल, गेह में विनोद नवल ।
> बाल नवल, लाल नवल, दीपक में ज्वाल नवल ।[2]

साथ में कवि ने अपने नवीन उत्तरदायित्वों पर भी दृष्टिपात किया है।

सातवेंरंग में लघु छन्दों में लिखी कविताओं में प्रेम, जग और जीवन की कुछ अनोखे ढंग से व्यंजना की है । यहाँ कवि का नया भावबोध दृष्टिगत होता है । शेष कविताओं में अदम्य साहस, आस्था और मांगलिक भाव के दर्शन होते हैं ।

निष्कर्षतः 'सतरंगिनी' की भूमिका में कवि ने लिखा है-सूनेपन और अंधकार की अतल गहराइयों में डूबी हुई मेरी आत्मा को किरण-कलरव के आँगन से कोई दुर्निवार पुकार सुनाई पड़ चुकी थी और मैं उसकी अवहेलना नहीं कर सकता ।

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ सतरंगिनी, पाँचवां रंग पृष्ठ-358

2- वही छटवाँ रंग पृष्ठ-360

उसके आगे कवि ने 'सतरंगिनी' के विषय में अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुये कहा है - मैं समझता हूँ कि जब मेरी जिजीविषा अंधकार से प्रकाश की ओर गई, तब मेरे कवि ने 'सतरंगिनी' के गीतों में मुझे सँभाला, मुझे बल दिया, मुझे प्रोत्साहन दिया । मैं सतरंगिनी के गीतों को अपने सबसे अधिक स्वस्थ्य गीतों में समझता हूँ ।[1]

डॉ. जोशी 'सतरंगिनी' को जीवन के दारुण दुःख के ऊपर सुख की मधुर अभिव्यक्ति मानते हैं ।[2]

वैभवपूर्ण भाव और शिल्प, प्रांजल भाषा, विरोधाभास, हेतूत्प्रेक्षा आदि के कारण 'सतरंगिनी' एक सफल काव्य-संग्रह है ।

हलाहल :- सन् 1936 के प्रारम्भिक महीनों से 1945 तक लिखते हुए यह कृति पूर्णता को प्राप्त हुई । कारण 'हलाहल' के पचास पद 1936 में ही लिखे जा चुके थे किन्तु कवि क्षय रोग से ग्रस्त हो गए । स्वस्थ्य होते ही उनकी पत्नी श्यामा ने चारपाई पकड़ ली और कवि ने यमराज के अन्तिम द्वार तक युद्ध किया किन्तु पराजय मिली । सन् 1940 में कवि, पन्त के साथ 8-ए. बेली रोड़ प्रयाग के 'बसुधा' में रहने लगे । वहाँ रहते हुए 'हलाहल' के पदों की संख्या 100 तक हो गई थी । किन्तु दीमकों ने 'हलाहल' की 'पाण्डुलिपि' को खा डाला था । बच्चन जी को बड़ी निराशा हुई और उन्होंने उस ओर से अपना ध्यान हटा लिया । इसके बाद पिता की मृत्यु, दूसरे विवाह, पुत्र जन्म, विश्व-संग्राम

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ सतरंगिनी §भूमिका§ पृष्ठ-311-12

2- डॉ. जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-61

अगस्त आन्दोलन, बंग दुर्भिक्ष आदि वैयक्तिक और सांसारिक घटनाओं ने उनका ध्यान आकर्षित किया । सन् 1944 में कवि की माता जी बीमार पड़ी और मार्च सन् 1945 में उनका स्वर्गवास हो गया । माताजी की बीमारी के समय उनकी चारपाई के आस-पास रहते हुए बच्चन को मृत्यु की नई व्याख्या समझ में आई । कवि ने स्वयं इस बात को पंक्तिबद्ध किया है - उनकी मृत्यु मेरे लिये जीवन की एक नवीन व्याख्या थी । मेरी आँखों के सामने मृत्यु का एक नया अर्थ खुल रहा था । ------ ऐसी परिस्थिति और मनः स्थिति में 'हलाहल' की पंक्तियाँ किसी विस्मृति-प्रदेश की प्रतिध्वनियों के समान, वर्षों के अंधकार को चीरती हुई मेरे कानों में गूँजने लगी ।[1]

पहले श्यामादेवी की मृत्यु का प्रभाव हलाहल की प्रेरणा थी, बाद में माता सुरसती की मृत्यु का प्रभाव भी संचित हुआ ।

'मधुशाला' की भाँति 'हलाहल' भी प्रतीक काव्य है । इसमें 148 पद हैं । 'हलाहल' में व्यक्तिवादी अस्तित्व बोध की अभिव्यक्ति हुई है । इसमें व्यापक जीवन दर्शन और दार्शनिक चिन्तन का प्रकटीकरण हुआ है । 'हलाहल' जीवन की कटुता और उसकी विषम-विकट परिस्थितियों का प्रतीक है । बच्चन जी संघर्ष को चुनौती मान आस्था पूर्वक कहते हैं -

हलाहल आया है यदि पास
हृदय का लोहू दूँगा तोल ।[2]

इन कविताओं में व्यक्ति मन की विजय और व्यक्तिवादी अस्तित्व बोध की सफल अभिव्यक्ति है । प्रारम्भिक पदों में हाला और हलाहल विषयक भाव-

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ हलाहल §भूमिका§ पृष्ठ-376-77

2- वही पृष्ठ-385, पद-33

धारा का अंकन है । कवि को मदिरा और हलाहल दोनों में मुक्ति दिखाई देती है । मधुपान करने के बाद कवि 'हलाहल' के द्वारा जीवनदान चाहता है ।[1] अतः वह प्रसन्न मन से 'हलाहल' पीने का आह्वान करता है ।[2] कवि के हृदय में 'एकला चलो रे' की शक्ति[3] और अमरत्व प्राप्त करने की आशा है ।

'स्वयं हो जाने को है सिद्ध हलाहल से तेरा अमरत्व ।[4]

'हलाहल,' मधु का सहजन्मा, उसका सहोदर है जिसे पीकर शिव अमर, असीम एवम् महिमावान है ।[5] हलाहल मरण का प्रतीक है । जगत् में सभी नष्ट हो जायेंगे पर कवि-मनुष्य के अपनी लघुता पर गर्व है । संक्षेप में, 'हलाहल' मधु के स्वप्न लोक से उतरकर जीव-के यथार्थ गरल का काव्य है ।

स्वयं कवि के अनुसार-'जीवन के सम्पूर्ण नाश में से सृजन का अदम्य स्वर कैसे उभर आता है- यही 'हलाहल' की प्रेरणा और भावभूमि है । मैं यह मानता हूँ कि मृत्यु काली चट्टान पर ही जन्म का अंकुर फूटता है । महाकाय अंधकार में भी किरण के मेंहदी रचे हाथ झाँक जाते हैं । जीवन शाश्वत है और अनश्वर है, वह सृजन को जीवन बनाए हुए है । ----मृत्यु की छाया में भी मनुष्य को जीना और गाना चाहिए ।[6]

सहल सरल भाषा में संदेह और विरोधाभास अलंकारों के प्रयोग से लाक्षणिकता और प्रभावशाली अभिव्यक्ति से यह एक सफल रचना है । अभिधा शैली में सम्पन्न यह काव्य सरल, सुगेय है ।

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ हलाहल पद-114 पृष्ठ-397
2- वही 33 पृष्ठ-385
3- वही 27 पृष्ठ-384
4- वही 137 पृष्ठ-400
5- वही 138 पृष्ठ-400
6- सुधाबहन पटेल : बच्चन जीवन और साहित्य पृष्ठ-92

बंगाल का काल :- सन् 1943 में लिखित और 1946 में प्रकाशित यह रचना कवि ने बंगाल के आधे करोड़ आदमियों को समर्पित की है, जो बंगाल के अकाल की क्षुधा-ज्वाल में स्वाहा हो गए । इसमें कवि ने सर्वप्रथम मुक्त छन्द का प्रयोग किया है । मुक्त छन्दों के विषय में स्वयं कवि ने अपने आश्चर्य को व्यक्त करते हुए कहा है- "यह भी एक रहस्य की बात है कि बंगाल के अकाल के प्रति जब मैं अपनी व्यग्रता और आवेश को वाणी देने लगा तो दस-बारह बरस की आदत और अभ्यास के बावजूद छन्दों की सारी कड़ियाँ तडककर टूट गईं । मैं मुक्त छन्द में लिख रहा था ।

यह रचना अकाल पीड़ित बंगाल की जनता के रूदन और उनकी दयनीय दशा पर आधारित है । कवि बंगाल की दयनीय दशा पर इतने विचलित नहीं हुए जितनी उनकी नपुंसक सहिष्णुता पर जिससे उसने मानवी स्वार्थप्रेरित इस दानवी ईति-भीति को मन मारकर झेल लिया ।[1]

सन् 1943 में बंगाल में अकाल से पचास लाख लोग काल के गाल में समा गए, इससे द्रवित हो कवि ने 'बंगाल का काल' की रचना की । कवि श्री बच्चन अपनी व्यग्रता को वाणी देने के लिये विवश हो गए और पूरी कविता, जो लगभग 1000 पंक्तियों में है, लगभग 36 घण्टों के अनवरत परिश्रम से लिखी गई ।

कवि ने बंग-देश के स्वर्णिम और स्वर्गिक अतीत की श्री-समृद्धि का वर्णन करते हुए इस दीन-दशा के मूल में छिपे कारणों को ढूँढा है -

> वही बंगाल-जिस पर छाए सजल घनों की छाया में लह-लहलहराते
> खेत धान के -दूर-दूर तक जहाँ कहीं भी गति नयनों की ।

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ बंगाल का काल §भूमि - पृष्ठ-406

जिसमें उगते-बढ़ते तरुवर, लदे दलों से फँदे फलों से,
सने कली-कुसुमों से सुन्दर ।

कवि ने सुजलाम्, सुफलाम्, मलयजशीतलाम, शस्य श्यामलाम् मातरम की दीन-क्षुधित नर-नारियों के करुण कृन्दन को निम्न पंक्तियों में व्यक्त किया है-

भरणी आज हो गयी हरणी, जल दे फल दे और अन्न दे
जो करती थी जीवन दान, मरघट सा अब रूप बनाकर,
अजगर-सा अब मुँह फैलाकर खा लेती अपनी सन्तान ।[1]

बच्चन भी भुजबल एवं क्रान्ति को श्रेष्ठ समझते हैं- 'निर्बल के बल हैं दो घूँसे । ---करो क्रान्ति का नारा ऊँचा ।[2] फ्राँस की घोर क्रान्ति का स्मरण दिलाकर कवि बंगाल निवासियों में साहस, और शक्ति का संचार करना चाहते हैं ।[3]

भूख को सहना भी पाप है और अपने अधिकारों के लिये अन्तिम क्षण तक संघर्ष करते रहना चाहिये । अन्न की बंचना ब्रह्म की वंचना है । सन्तोष को मरण समान घोषित किया है । कायरता को फटकारते हुए कवि ने कुत्ते से तुलना की है और अधिकारों से लड़ने की मांग की है । पश्चिम की कहावत 'गॉड हेल्प्स दोज, हू हेल्प देमसेल्व्ज ' को सीखने की प्रेरणा दी है ।

कविता में विभिन्न प्रतीकों अजगर, श्वान, स्यार, कंकाल, चील, कौए का संकेत देकर कवि ने अकाल की वीभत्सता को साकार रूप में अभिव्यंजित किया

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ बंगाल का काल §भूमिका§ पृष्ठ-420

2- वही पृष्ठ-425-27

3- वही पृष्ठ-430

है । मृत्यु का नग्न नर्तन भयानकता को जन्म देता है । अकाल की विभीषिका को रोंगटे खड़े कर देने वाली चित्रात्मक शैली में प्रस्तुत करना कवि का अनूठा कार्य है ।

डॉ॰ घोष, डॉ॰ नगेन्द्र, डॉ॰ वीरेन्द्र कुमार गुप्त और डॉ॰ भाभड़ा इसमें मार्मिकता कम और रिक्तता अधिक देखते हैं । किन्तु इन लोगों ने मार्मिकता और बंगनिवासियों के करुण-क्रन्दन को आत्मसात करने का प्रयास नहीं किया, ऐसा प्रतीत होता है । मेरे विचार से कवि की यह रचना बंगाल के अकाल पीड़ित निवासियों की मृत्यु को मूर्त रूप में दर्शाती है, रोंगटे खड़े कर देने वाली यह कृति एक स्मृति बनकर मानस-पटल पर छा जाती है ।

डॉ॰ पंडया 'इसमें देश-प्रेम, आत्म-गौरव, उद्‌बोधन, अनुभूति की गहराई और कथन की साफ गोई देखते हैं ।[1]

'बंगाल का काल' सामयिक भावना को लेकर लिखी गयी कलाकृति है पर वह अपने वैभव से देशकाल की सीमाओं को लाँघकर शाश्वत बन गई है, आज भी उसका महत्त्व है, कल भी उसका महत्त्व कम नहीं होगा । युग-युग तक वह मानव को जागृति का सन्देश देती रहेगी और उसे अपने अधिकारों के लिये लड़ने-मरने की प्रेरणा देती रहेगी ।[2]

मुक्त छन्द में लिखी यह कविता कहीं-कहीं गद्य के निकट पहुँच गई है । ओज और गांभीर्य का उत्कर्ष दृष्टव्य है । सहज, सरल, सुबोध प्रवाहमयी भाषा

1- डॉ॰ कृष्ण चन्द्र पंडया : बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृष्ठ-141

2- डॉ॰ दशरथ राम : लोकप्रिय बच्चन : सं॰ प्रो॰ दीनानाथ शरण पृष्ठ-79-80

है, अरबी, अंग्रेजी, फारसी और देशज शब्दों का प्रयोग है । कहावतों का प्रयोग हुआ है । राष्ट्रीय और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में इस कृति का स्थान सर्वोपरि है । डॉ॰ श्याम सुन्दर घोष इस काव्य को लीक से हटकर विशिष्ट स्थान का अधिकारी मानते हैं ।[1]

भूमिका के अन्त में कवि ने लिखा भी है- दुर्बलता, निर्जीवता, नपुंसकता और आत्महत्या से साहस, वीरत्व, पुरुषत्व और आत्म-बलिदान सदा अच्छे समझे जायेंगे ।[2]

खादी के फूल :- कविता लिखना कवि के जीवन की एक विवशता है, किन्तु अपनी इस विवशता का अनुभव कवि ने इतनी तीव्रता से कभी नहीं किया जितना बापू के बलिदान पर । बापू की हत्या के एक सप्ताह बाद ही सौ दिन के अन्दर बच्चन जी ने 204 कविताएं लिखी । कवि का कहना है कि उनके लिखने की प्रगति कभी इससे तेज नहीं रही । सन् 1948 में लिखित और प्रकाशित इस रचना में श्री बच्चन के 93 गीत हैं और शेष 15 गीत पन्त जी के हैं । गाँधी जी के प्रति उनके ये श्रद्धांजलि गीत हैं । स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण कवि गाँधी जी से बहुत प्रभावित थे । महात्मा गाँधी के असमय ही मार्मिक अन्त ने उन्हें झिंझोड़कर रख दिया ।

हत्या का प्रभाव कुछ इस प्रकार था- "हमारे लिये जिन्होंने गाँधी का नाम अपने बचपन से मन्त्र की तरह जपा था उनको देवता की तरह पूजा था,

---

1- डॉ॰ श्यामसुन्दर घोष : बच्चन का परवर्ती काव्य, पृष्ठ-17

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ बंगाल का काल §भूमिका§ पृष्ठ-413

उनका चमत्कारी प्रभाव अपनी आँखों से देखा था, उनसे ज्ञात-अज्ञात न जाने कितनी प्रेरणाएं ली थीं, यह कितना बड़ा आघात था, इसे आने वाली पीढ़ियां शायद ही जान सकेंगी ।"[1] बच्चन देश के दैदीप्यमान दीप का निर्वाण देख विक्षुब्ध हैं ।[2] वे गाँधी जी की श्रेष्ठता और उनके आदर्शों की अमरता बताकर नाथूराम गोड्से को दोष देते हैं । गाँधी जी की हत्या पर भारतमाता को अपराधिनी और लज्जित दर्शाते हुए कवि ने गर्व सहित ऊँचा शीश उठाने को भी कहा है । मानवता के आदर्श महात्मा गाँधी के प्रति कवि नतमस्तक हो जाता है।

सरल भाषा, दोहा और हरिगीतिका छन्दों से तथा कहावतों और मुहावरों से यह रचना परिपूर्ण है । उर्दू, फारसी शब्दों की भरमार है । संस्कृत पदावली का भी प्रयोग है ।

<u>सूत की माला</u> :- 'खादी के फूल' के साथ ही 'सूत की माला' भी 1948 में प्रकाशित हुई । इसमें बापू के बलिदान सम्बन्धी 111 गीत हैं । इसमें बापू के गोली लगने से लेकर उनकी समाधि, स्तम्भ स्तूप बनने तक की लटनाओं को अंकित किया है । 'सूत की माला' के अन्त में कवि अपने वैयक्तिक धरातल पर आसीन हो गए हैं ।[3] महात्मा गाँधी के निधन पर कवि का रुदन चिन्तनशीलता का परिचायक है । कवि बच्चन सत्य मार्ग दिखलाने वाले गाँधी की ज्वाला को प्रज्जवलित रखना चाहते हैं ।[4]

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §6§ नीड़ का निर्माण फिर पृष्ठ-473
2- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ खादी के फूल, गीत-16 पृष्ठ-461
3- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ सूत की माला, गीत-110 पृष्ठ-553
4- वही गीत- 82 पृष्ठ-538

कवि भेदभाव को दूर रखकर गाँधी के बलिदान और त्याग को पूत-पवित्र रखना चाहते हैं । गाँधी जी की मृत्यु पर मानो सम्पूर्ण प्रकृति भी रो पड़ी थी-

यह रात देश की सब रातों से काली,
भू के दीपों से झड़ी हुयी उजियाली,

नभ के तारे भी आँख आज मीचे-से, अवसाद सभी पर छाया एक निराला[1]
प्रकृति का रूदन इधर भी -
कैसा सहसा सब ओर अंधेरा छाया, रवि-शशि को जैसे राहु-केतु ने खाया,[2]

डॉ॰ पंड्या के मत से ये सभी गीत सरल भाषा और मार्मिक भावों को लिये हुए हैं । गीतों की लय में विलम्बित और द्रुत का ध्यान रखा गया है । कुछ गीत जितने मर्मस्पर्शी, हृदय उद्वेलनशील, झकझोरने वाले हैं उतने ही चिरस्मरणीय भी ।[3]

सरल सुबोध भाषा, उपमा, रूपक अलंकारों का प्रयोग, मुहावरों, कहावतों से परिपूर्ण 24 मात्रा के छन्द से युक्त 'सूत की माला' एक सफल रचना है ।

मिलन - यामिनी :- सन् 1950 में प्रकाशित इस रचना को कवि ने तीन खण्डों में विभक्त किया है, जो एक दूसरे से छन्द और चिन्तन की दृष्टि से पृथक हैं । 'मिलन-यामिनी' में 99 कविताएं हैं जो 33-33 के तीन भागों में विभक्त हैं । पहले और तीसरे भाग की कविताएं विशेष साँचे में ढली हुई हैं । कवि अपने मित्र श्री महाराज कृष्ण राजन के निमन्त्रण पर वायु-परिवर्तन और पूर्ण विश्राम के लिये भाँगड़ा गए थे किन्तु वहाँ के मनोरम वातावरण में वे अपने भावों को रोक न सके

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §1§ सूत की माला, गीत 55-26 पृ0-525-514
2- वही वही
3- डॉ॰ कृष्णचन्द्र पण्ड्या : बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृष्ठ-142

कवि ने स्वयं अपने अनियन्त्रण को 'मिलन-यामिनी' के 'आमुख' में स्वीकार किया है- "परन्तु इस मनोरम स्थान में जहाँ एक ओर तो हिमाच्छादित धवली धार पर्वतमाला खड़ी है और दूसरी ओर अनेक पहाड़ी नालों और झरनों से निनादित और अभिसिंचित काँगड़ा की उर्वरा घाटी फैली है जिसकी दक्षिणी सीमा पर व्यास नदी दूर दूध की रेखा के समान दिखायी देती है, मैं अपनी वाणी पर नियन्त्रण न रख सका ।"[1]

'मिलन यामिनी' के गीत आनन्द, मस्ती और आहलाद के गीत हैं । प्रस्तुत गीतों में मानवीय संवेदना, सहानुभूति और परदुःखकातरता की सहज अभिव्यक्ति हुई है । मिलन-भावनाओं की पूर्ण अभिव्यक्ति इन गीतों में हुई है। 'निशा निमन्त्रण' में खण्डित पुजारी की मग्न आराधना की आत्मपीड़ा है, 'मिलनयामिनी' में उसी पुजारी का आत्मसमर्पण, अर्चन-पूजन तथा आनन्दोत्सव है । तन्मय आनन्दोत्सव उसमें तन-मन, प्राण की भूख थी, इसमें तन, मन, प्राण की तृप्ति है । गीतों का कवि ने सृजन नहीं किया है वह स्वयं सर्जित हुए हैं । इन गीतों की विशेषता इसी में है कि ऐन्द्रिकता को माध्यम बनाकर अन्तर की गहरी से गहरी तह को स्पर्श किया गया है ।[2]

पहले भाग में 'आज' से प्रारम्भ होने वाले ।। गीतों में कवि ने अपनी अतृप्ति के भाव को मुखरित किया है । वे गत को भविष्य में बदल लेने की ठान लेते हैं ।[3] इन गीतों में कवि मिलन की तैयारी कर रहा है । संयोग श्रृंगार-

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ मिलनयामिनी §आमुख§ पृष्ठ-19

2- राजानन्द, साहित्य संदेश, नवम्बर-दिसम्बर 1967 पृष्ठ-194

3- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ मिलनयामिनी पृष्ठ-26-27 गीत-8, 9, 10

भावना को उद्दीप्त करने वाले प्राकृतिक वातावरण की रंगीन सृष्टि अनुपम है । यहाँ माँसलता एवं ऐन्द्रिक वासना के चित्र अवश्य हैं, किन्तु वह रीतिकालीन निम्न कोटि का श्रृंगार नहीं है ।[1] प्रणय-रस की प्राप्ति के लिये कवि स्वर्ग को भी ठुकराने योग्य समझते हैं । प्रेमी हृदय का अनन्त-अपार प्यार केवल क्षुद्र मोह और व्यसन मात्र नहीं है -

जो प्यार, अनन्त, अपार, अगाध उमड़ता है,
उसको कोई व्यामोह - व्यसन मत कह बैठे ।[2]

कवि की प्रिया स्वप्न और जागरण दोनों में छायी रहती है । 'मिलन-यामिनी' तन, मन और प्राण की तृप्ति है । कवि की अपनी उपलब्धि द्रष्टव्य है - मैं जलन का भाग अपना भोग आया । तब मिलन का यह मधुर संयोग आया।

'मिलनयामिनी' एक ऐसी गीत-सृष्टि है जहाँ वियोग विषाद के खंडित तारों को जोड़कर कवि ने संयोग के सितार के तार झंकृत किये हैं ।[4]

स्वयं कवि के ही शब्दों में 'मिलनयामिनी' राग के संसार को जीने भोगने की अनुभूति है ।[5] प्यार, जवानी जीवन के जादू से प्रभावित कवि ने 'मिलनयामिनी' के मध्य मार्ग में जीवन के ज्वार एवं आनन्द आह्लाद के सजीव चित्र अंकित किये हैं ।[6] प्राकृतिक वातावरण में कवि के मिलन-स्वप्न अंकित हैं ।

- -

1- डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-66
2- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ मिलनयामिनी पृष्ठ-41
3- वही पृष्ठ-31
4- जीवन प्रकाश जोशी, बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-66
5- बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर §बच्चन रचनावली 6 § पृष्ठ-485
6- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ मिलनयामिनी पृष्ठ-58, 59, 60 मध्य भाग

कुछ गीतों में संयोग श्रृंगार और मिलन की उद्दाम लालसा है-

> दाग पराग लगाकर तितली जहाँ नहीं लज्जित होती है,
> जहाँ पहुँचकर तन पुलकित, मन हो उठते मधु स्नात शिथिल से,
> कहाँ विमोहिनि ले जाओगी रिझा मुझे झंकृत पायल से ?[1]

उत्तर भाग के गीत कवि के दृढ़ विश्वास के गीत हैं जो विश्वास टूटा नहीं। संयोग श्रृंगार का साँगोपांग अंकन इस खण्ड में हुआ है -

> समीर वह चला कि प्यार का प्रहर, मिली भुजा-भुजा, मिले अधर अधर,
> प्रणय-प्रसून सेज पर गया बिखर, निशा सभीत ने कहा कि क्या किया !
> प्रकृति सुरम्य स्वप्न बीच खो गयी, गयी, कसक, गिरी पलक मुँदे नयन !
> कसी हुई तड़ित पयोद-पाश में, हुआ संयोग वासना-विलास में,
> प्रमत्त, स्वप्न-मग्न आँख अधमुँदी, प्रणय-घटा हृदय-गगन घुमड़चली ।[2]

कुछ गीतों में प्रकृति कवि की भाव-सहचरी बनकर मिलन के रंगों में रंगी है। अभिसार चित्र, भावानुकूल लघु गीत और प्रकृति के साथ गहन तारात्म्य है इनमें।

'मिलनयामिनी' के संयोग श्रृंगार सम्बन्धी गीत जितने कलात्मक एवं रागात्मक हैं वैसे अन्यत्र कम मिलते हैं।[3] 'कोमल शब्दावली, प्रणयोल्लास, परिष्कृत सौन्दर्य बोध, संगीतात्मकता के गुणों से युक्त छन्द भावोत्कट एवं कर्मभेदी प्रभाव के कारण 'मिलनयामिनी' श्रृंगार परक गीति विधा की अक्षय-धरोहर है।'[4]

1- बच्चन : बच्चन रचनावली (2) मिलनयामिनी, गीत 28 मध्यभाग पृ0-58, 5

2- बच्चन : बच्चन रचनावली (2) मिलनयामिनी पृ0-72, 73, 75, उत्तरभाग

3- डॉ. जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-67

4- डॉ. सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य, पृष्ठ-100

परिष्कृत भाषा में लिखी इस कृति में कलात्मक शिल्प और अभिव्यक्ति का सौष्ठव, प्रकृतिका मानवीकरण, मुहावरों-कहावतों के साथ लक्षणा और व्यंजना का विशेष प्रयोग मिलता है ।

<u>प्रणय - पत्रिका</u> :- सन् 1950 से 54 तक लिखी गई और 1955 में प्रकाशित इस प्रणय की पाती में 59 गीत हैं । अंग्रेजी-काव्य स्वाध्याय के लिये जब कवि 1952 मे इग्लैण्ड गए थे तब वहाँ से भेजी जो रचनायें पत्र-पत्रिकाओं में छपी उनसे 'प्रणय-पत्रिका' नाम और भी सार्थक हुआ । केम्ब्रिज जाने से पहले के 30 गीत और केम्ब्रिज से चलते समय वहाँ लिखी 111 कवितायें थीं । उन्हीं में से 59 गीत 'प्रणय-पत्रिका' के अन्तर्गत रखे गए हैं । प्रणय पत्रिका का मूल स्वर समर्पण है -

> अर्पित तुमको मेरी आशा और निराशा और पिपासा ।
> बाण-विद्ध मराल-सा मैं आ गिरा हूँ अब तुम्हारी ही शरण में।[1]

राग पर आधारित ये प्रणय-गीत निश्चय ही विरहमूलक 'प्रणय-पत्रिका' नाम से प्रेम की पातियों की सफल सार्थक व्यंजना करते हैं । इन पातियों में इग्लैण्ड प्रवासी कवि के हृदय की गहन वेदना, आत्मपीड़ा और पश्चाताप अभिव्यंजित हुआ है -

> बीन, आ देऊँ तुझे, मन में उदासी छा रही है ।
> लग रहा जैसे कि मुझसे आज सब संसार रूठा,
> लग रहा जैसे कि सबकी प्रीति झूठी प्यार झूठा,
> और मुझ सा दीन-मुझसा हीन कोई भी नहीं है ।[2]

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ प्रणय पत्रिका पृष्ठ-98 और 122गीत-10,4

2- वही पृष्ठ-96 गीत-6

अपने निराशा से भरे अतीत, आशाओं से युक्त भविष्य एवं संघर्ष और विश्वास वाले वर्तमान पर कवि की दृष्टि टिकी हुई है ।[1] कवि मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन पर प्रेम की महत्ता और चिर आवश्यकता पर बल डालते हैं । वे समाज के हास-उपहास और व्यंग्य से विचलित नहीं होते । आत्मविश्वास के साथ प्रणय की पातियों में अपना प्यार उड़ेलते हैं, प्राकृतिक उपमानों के प्रयोग से ये पातियाँ अत्यन्त सरस और गुणग्राह्य बन पड़ी हैं । कवि की सुधियों में अब 'निशा-निमन्त्रण' का देश नहीं है, मीठी पीड़ा है जिसका दर्द, पश्चाताप, विषाद, बन्धन सभी कुछ स्पृहणीय है जो मन का परिष्कार करने में समर्थ है । इसमें प्राण पक्ष प्रधान है । कवि के जिये, सहे, भोगे दुःख के कारण में कहीं भी कृत्रिमता नहीं है, मार्मिकता प्रधान गीत स्वतः निःसृत हैं । 'ये गीत सप्राण, स्वाभाविक और स्वस्थ हैं, जिनमें 'स्वकीया' को लेकर आकर्षण उत्पन्न किया गया है ।[2] बच्चन यहीं से समाजोन्मुख बनने लगे हैं । जोशी जी के अनुसार - 'रागात्मकता की दृष्टि से 'प्रणय-पत्रिका' का गीत-कुंज खड़ी बोली का पूर्ण गीतकुंज है ।'[3]

<u>धार के इधर - उधर</u> :- कवि के ही शब्दों में कृति का लघु परिचय 'धार के इधर-उधर' मेरी 1940 से 1956 तक की विशेष अवसरों पर अथवा विशेष मानसिक परिस्थितियों में लिखी हुई कविताओं का संग्रह है ।' 'बंगाल के काल

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ प्रणय पत्रिका, पृ0-96 गीत-6

2- विश्वंभर मानव : नई कविता नये कवि, पृ0-33

3- डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व, पृ0-150, 151

के बाद यह मेरी दूसरी रचना है जिसका सम्बन्ध प्रायः साम यिक परिस्थितियों अथवा घटनाओं से है । काव्य का काम है सामयिक को भी छूकर शाश्वत बनाना, कम से कम चिरजीवी बनाना ।

सन् 1940 से 56 तक लिखी गई और 1957 में प्रकाशित, इसमें 67 कवितायें हैं । इन रचनाओं में कवि का दृष्टिकोण 'स्व' से विकसित होकर 'पर' को निहारने लगा है । अब कवि अपने अन्दर ही अन्दर घुटने की आदत को छोड़कर कुछ बाहर भी देखने लगा है । आइरिस से निराशा मिलने पर कवि को एक और अंधकार दिखा था जो समस्त संसार में छा रहा था । कवि ने सोचा कि मेरा अंधकार तभी मिटेगा जब विश्व का अंधकार मिटेगा । इस प्रकार की अनुभूति से जो कविताएं उन्होंने लिखीं वे ही 'धार के इधर उधर' में प्रकाशित हुई । इन कविताओं में कवि का राष्ट्र प्रेम तो उभरा ही है । साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह, आपसी वैमनस्यता के प्रति भी क्षोभ है । 'रक्त स्नान' 'अग्नि परीक्षा,' 'युद्ध की ज्वाला,' 'मानव रक्त,' 'व्याकुल संसार,' 'मनुष्य की निर्ममता,' 'करुण पुकार' आदि कवितायें युद्ध पिपासु राष्ट्रों की पाशविक प्रवृत्ति से क्षुब्ध और विकल कवि का छोटा सा निष्फल होता प्रयास है । वे विश्व के इस कुरूप तथा विकृत चरित्र को परिष्कृत तथा संशोधित करना चाहते हैं साम्प्रदायिक दंगे और देश-विभाजन के लिये ब्रिटिश-शासकों की कुनीति पर निर्णय लेते हुए वे कहते हैं -

'यही स्वतन्त्रता-लता गया लगा, कि मुल्क ओर-छोर खून से रंगा,
बिखेर बीज फूट के हुआ अलग , स्वदेश सर्व काल को गया ठगा,
गरल गया उलीच नीच मूल में ।'[1]

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ धार के इधर उधर पृष्ठ-163

इसी प्रकार साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह, वैमनस्य, धर्मान्धता पर प्रहार करते हुए यथार्थवादी दृष्टि से कवि ने दार्शनिक सत्य को उभारा है -

"भूल गया है क्यों इन्सान ! सबकी है मिट्टी काया,
सब पर तम की निर्मम छाया, यहाँ नहीं कोई आया है ले विशेष वरदान ।
भूल गया है क्यों इन्सान ।[1]

सरल प्रवाहपूर्ण भाषा, संस्कृतनिष्ठ पदावली, 18 मात्रा वाले छन्द का प्रयोग, समर्थ भावमयता इस कृति की अपनी विशेषतायें हैं ।

<u>आरती और अंगारे :-</u> सन् 1950 से 57 के व्यापक काल में रचित 'आरती और अंगारे' 1958 में प्रकाशित हुई । इसमें 100 कवितायें संकलित हैं । इस कृति का पूर्व भाग है 'आरती' का और पश्च भाग है 'अंगारे' का । आरती और अंगारे का अद्भुत समन्वय है । पूर्व भाग में स्वजनों की आरती है तो उत्तर भाग में आक्रोश । रूढ़िवादियों के प्रति नवसुखमय समाज का स्वप्न है तो संघर्षों का आह्वान भी । इसके गीतों में बहुवर्णी छवियाँ हैं सबके अलग - अलग रंग हैं । अंगारे नवीन क्रान्ति और 'आरती' नये का स्वागत और पुराने के विदा गीत दोनों का ही प्रतीक बना है ।

पूर्व भाग में वेदव्यास, बाल्मीकि, जयदेव, चन्दबरदाई, विद्यापति, कबीर, जायसी, तुलसी, सूर, मीरा, केशव, रहीम, भारतेन्दु, मैथिलीशरण गुप्त, पं. जगन्नाथ, उमर खैयाम, मीर, गालिब, इकबाल, रवीन्द्र, विक्रमादित्य और ईट्स को कवि ने अपने भाव-सुमन श्रद्धांजलि स्वरूप अर्पित किये हैं।[2]

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ धार के इधर उधर,

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ आरती और अंगारे,

तत्पश्चात् कवि ने साँची अजन्ता, खजुराहो, भुवनेश्वर, काँगड़ा-कला आदि के शिल्पसाधकों, चित्रकारों के प्रशस्ति-गीत गाए हैं ।[1] दादा, दादी, माँ, पिता, भाई-बहिन, चम्पा श्यामा, शैशवकालीन भिक्षुक पिता की जन्मस्थली ललितपुर के प्रति कवि श्रद्धा से विनत होता है । ऐसा लगता है कि कवि इन सबसे प्रभावित, सहानुभूति पाते हुए साधारणीकृत हो गए हैं । इन गीतों में कवि का जिया-भोगा सारा परिवेश चित्रित है । कवि की चेतना सामाजिक, सांसारिक आघातों को सहन करती हुई कठोर से कठोरतर होने लगी है इसी-लिये उनके स्वर में योद्धा की हुँकार आने लगी है, सुखदुख की सघनता का सदैव स्वागत कर, निष्क्रियता का विरोध करते हुए कवि ने कर्मठता में विश्वास व्यक्त किया है ।[2]

व्यंग्य की तीक्ष्णता, व्यंजना के साथ लक्षणा का प्रयोग, नये प्रतीक, सरल तत्सम पदावली, प्रबल अभिव्यक्ति, उपमा, उत्प्रेक्षा अलंकारों के प्रयोग के कारण प्रस्तुत कृति का बच्चन के काव्य में महत्वपूर्ण स्थान है ।

<u>बुद्ध और नाचघर :-</u> सन् 1944 से 57 के बीच लिखित और 1958 में प्रकाशित इस कृति में 28 कविताएं संगृहित हैं । ये सभी कविताएं मुक्त छन्द में लिखी हैं। इसमें कथ्य और शैली का नया आयाम, विषय वैविध्य की अभिव्यक्ति दिखाई देती है । इसका विषय वैविध्य 'धार के इधर उधर' की तरह है । पूर्ववर्ती काव्य से भिन्न 'बुद्ध और नाचघर' वास्तव में अन्धानुकरण की भारतीय प्रकृति

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ आरती और अंगारे ,पृ0-207 से 211 तक

2- वही पृ0-228 गीत 54

को प्रदर्शित करती है ।

इस रचना में कवि की 'एप्रोच' नवीन के प्रति है और सामाजिक कुरीतियों और समकालीन बुद्धिजीवियों की कमजोरियों और गुण-अवगुणों आदि पर व्यंग्य 'बुद्ध और नाचघर' का सशक्त कथ्य है । 'सृष्टि', 'पूजा', 'तप' और 'वरदान' चिन्तन-प्रधान दार्शनिक कविताएं हैं । 'शोणित की प्यास' में त्रस्त मानवता अपनी रक्षा के लिए व्याकुल है । हिन्दू-मुसलमान में मानवता के अनुकूल सुख-स्नेह के वातावरण के निर्माण के लिये आह्वान किया गया है । 'दोस्तों के सदमें' में बुद्धिजीवियों की दमित एवं कुंठित भावनाओं को व्यक्त किया है । 'बुद्ध और नाचघर' शीर्षक कविता में कवि की अत्यन्त व्यंग्यात्मक शैली द्रष्टव्य है । इसमें कवि ने बुद्ध के सिद्धान्तों से अनभिज्ञ प्रदर्शनी-प्रवृत्ति और खोखली सभ्यता पर व्यंग्य पर व्यंग्य किये हैं ।[1] बुद्ध, धर्म एवं संघ की शरण में जाने वालों की चरम अवनति मद्य, माँस एवं नृत्य की शरण में जाने पर स्वयं ही हो गयी -

"मद्य शरणं गच्छामि,
मांसं शरणं गच्छामि
डांसं शरणं गच्छामि ।"[2]

इस कविता के पैने व्यंग्य पर स्वयं बच्चन चकित हैं- "इतना तीखा व्यंग मेरी लेखनी से आज तक नहीं उतरा । मैं खुद नहीं समझ पा रहा हूँ कि यह व्यंग्य बुद्ध पर है कि मानवता पर ।"[3]

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ बुद्ध और नाचघर पृष्ठ-348 से 353
2- वही पृष्ठ-353
3- बच्चन : प्रवास की डायरी पृष्ठ-263

'शैल विहंगिनी,' 'पपीहा,' और चीलकौए, चाँद और बिजली की रोशनी, दिल्ली के बादल, नागिन और देवकन्या प्रतीकात्मक व्यंग्य काव्य हैं ।

<u>त्रिभंगिमा</u> :- सन् 1958 से 60 के बीच लिखी गई कविताऐं 1961 में 'त्रिभंगिमा नाम से प्रकाशित हुई । इसमें 77 कविताएं हैं- 25 लोकधुनाश्रित गीत, 27 छन्दोबद्ध गीत और 25 मुक्त छन्द के गीत हैं । पहली भंगिमा की लोकधुनाश्रित कविताओं में ग्राम-जीवन और वातावरण के विविध पक्षों का उद्घाटन हुआ है । कुछ कविताएं आध्यात्मिकता के रंग में रंगी हैं । 'पगला मल्लाह,' 'धीमर की धरनी,' 'नीलपरी,' 'अनसँवरी,' 'आँगन का बिरवा,' 'आ गया घाट,' 'छोटी हुई दुनियां' आध्यात्मिकता को लिये हुए हैं । 'सोन मछरी', 'लाठी और बाँसुरी', 'माटी की महक', 'आज दीवाली', 'ढोलक लय', 'भीगी सहेलियाँ', 'किसानन का गीत', 'चिड़ियों का भाग' तथा 'महुआ के नीचे' में ग्राम्य जीवन तथा वातावरण चित्रित है ।

दूसरी भंगिमा की कविताओं में नियतिपरक, वैराग्यमूलक, लोकोत्तर भावों की प्रवृत्ति वाली कविताओं केसाथ युगाभिव्यक्ति के स्वर भी सुनाई पड़ते हैं । जोश का संचार करने वाले प्रयाणगीत सुन्दर हैं ।[1] तीसरी भंगिमा में तत्कालीन परिस्थितियों के प्रति कवि का तीव्र आक्रोश क्षोभ और विद्रोह व्यक्त है । इस भंगिमा की कविताओं में कला एवं साहित्य सम्बन्धी प्रौढ़ विचार हैं । कवि ने अपने युग जीवन की स्वार्थपरता, अवसरवादिता, शोषण,

---

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ त्रिभंगिमा पृष्ठ-404 से 405

राजनैतिक निष्क्रियता पर व्यंग्य किये हैं । 'त्रिभंगिमा' में व्यंग्य की मीठी-महीन मार का जादू यत्र-तत्र मंडित है ।[1]

सरल, तत्सम और संस्कृत निष्ठ भाषा में दृष्टान्त और अन्योक्ति अलंकारों से युक्त तथा अरबी और फारसी का सफल प्रयोग इस कृति में पाया जाता है । मुहावरों का प्रयोग बहुतायत से हुआ है । अंग्रेजी के शब्द और कहीं-कहीं वाक्यों का भी प्रयोग है । लोकधुनाधारित गीत शैली के लिये 'त्रिभंगिमा' सदैव स्मरणीय है ।

चार खेमे चौंसठ खूँटे :- प्रस्तुत कृति में 1960-62 की रचनाएं संगृहित हैं । त्रिभंगिमा में जो भंगिमाएं भीं वे यहाँ आकर संख्या में बढ़ गई हैं ।'काम की चौंसठ कलाओं' और 'तंत्र की चौंसठ योगिनिओं' की ओर संकेत करते हुए कवि ने भूमिका में पुस्तक के नामकरण की ओर संकेत किया है । इसमें चार प्रकार की खेमे की 64 कविताएं हैं । छन्दोबद्ध लयात्मक 13 गीत, लोकधुनाश्रित 14 गीत, मंच गान 2, मुक्त छन्दात्मक गीत 35। प्रथम खेमे की कविताओं में कवि को नई धरती और नए आसमान का निमन्त्रण है । इसमें कुछ आध्यात्मिक गीत हैं । कुछ गीतों में कवि की प्रभु-विनय विषयक भावना स्वाभाविक है ।

द्वितीय खेमें के लोकधुनों पर आधारित प्रत्येक गीतों के मूल में कोई न कोई विशेष विचार व्यक्त हुआ है । कुछ गीत सहज ग्रामीण-सादगी, वातावरण, संस्कृति, समता, समाजवाद और प्राकृतिक सौन्दर्य को अभिव्यक्त करते हैं ।

1- श्री हरस्वरूप पारीक : बच्चन का परवर्ती काव्य पृष्ठ-22

तीसरे खेमें में विदेशी शासक और स्वदेशी शासक दोनों ही जनहित का विचार नहीं करते । कवि ने जनता के हित चिन्तन को मुखरित कर अन्त में दोनों प्रकार के शासकों की कठोरता पर प्रहार किया है । 'जोते-बोए, जो सो खाए' कहकर कवि ने समाजवादी भावना व्यक्त की है ।

चतुर्थ खेमे की कविताएं सशक्त और प्राणवान हैं । इन कविताओं में सूक्ष्म चिन्तन, आत्मविश्लेषण, यथार्थवादी दृष्टिकोण एवं करारे व्यंग्य द्रष्टव्य हैं । प्रस्तुत कृति में कवि ने कर्मठता का पक्ष लेते हुए भाग्यवादिता और आलस्य वादी प्रवृत्तियों पर कटु आघात किया है -

> "भाग्य लेटे का सदा लेटा रहा है जो खड़ा है भाग्य उसका उठ खड़ा है
> चल पड़ा जो भाग्य उसका चल पडा ।[1]

दो चट्टानें :- सन् 1962-64 में लिखित तथा 1965 में प्रकाशित इस काव्य कृति पर बच्चन जी को 'साहित्य अकादमी' द्वारा सम्मान से विभूषित किया गया है । पुस्तक का शीर्षक लम्बी और अन्तिम कविता- सिसिफस बरक्स हनुमान के आधार पर रखा गया है । इसमें 53 कविताएं हैं । इनमें तीन कविताएं विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं -'दो चट्टानें,' 'खून के छापे' और 'सार्त्र के नोबेल पुरस्कार ठुकरा देने पर' । 'दो चट्टानें' एक प्रतीकात्मक कविता है। प्रतीक दन्तकथाओं से लिये गए हैं । यूनानी दन्तकथाओं के अनुसार मृत्यु को बन्दी बना लेने के अपराध में सिसिफस को यह दण्ड दिया गया था कि वह एक चट्टान को ठेलकर पर्वत की चौटी पर ले जाए और ऊपर से पुनः नीचे लुढ़क

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §2§ चार खेमे चौंसठ खूँटे पृष्ठ-53।

पड़े और फिर चट्टान को चोटी तक ले जाए और यह क्रम अनन्तकाल तक चले । कवि ने यूनानी एवं भारतीय कथाओं की आस्थाओं को स्पष्ट करते हुए विदेशी साहित्य परम्परा से प्रभावित होते हुए भी भारतीयता एवं संस्कृति की प्रशंसा की है ।

'दो चट्टानें' अथवा सिसिफस बरक्स हनुमार में मूल्य-विघटन अथवा मूल्यसंकट से ग्रस्त युग की समस्या का समाधान करने का प्रयास है । 'सिसिफस' व्यर्थ यान्त्रिक शक्ति और मूल्यहीन श्रम का प्रतीक है तो 'हनुमान' सार्थक एवं लोकोपकारी संजीवनी शक्ति का प्रतीक है । पश्चिमी परम्परा जहाँ अपने अहं भाव और छल छद्म के आधार पर मृत्यु को भी चकमा देना चाहती है वहाँ भारतीय परम्परा अपने अहं के विलीनीकरण द्वारा अपने आराध्य में भक्ति के सहारे चिर जीवन की कामना करती है । हनुमान ने भक्ति-भावना से वही अमरत्व माँग लिया था ।[1]

राष्ट्रीयता, समन्वयशीलता, समसामयिकता, जीवन मूल्य-मूल्यहीनता, मानव-अस्तित्व, आस्था और प्रेरणा, यथार्थवादी चेतना, व्यंग्य, जागृति, शक्तिपरकता और भाषागत सहजता इसकी विशेषताएं हैं । 'दो चट्टानें' कविता-संग्रह चिन्तन, कल्पना, भावाभिव्यक्ति और शब्द शिल्प की दृष्टि से एक सशक्त कृति है ।

सहज सरल भाषा सौष्ठव, नये उपमान, मुक्त छन्द, ध्वन्यात्मकता, विदेशी भाषा के शब्दों का प्रयोग व सशक्त प्रतीकों के कारण यह कृति बच्चन

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §3§ दो चट्टानें, §खून के छापे§ पृष्ठ-40-41

के परवर्ती काव्य में अविस्मरणीय है । जोशी जी के शब्दों में - इस कृति में कवि अपने वर्तमान युग जीवन का संश्लिष्ट, सूक्ष्म, समन्वित और समर्थ चित्रण करने में सामाजिक, राजनैतिक और इन सबसे ऊपर मानवीय दृष्टि से निर्विवाद रूप में सफल हुआ है ।[1]

बहुत दिन बीते :- सन् 1965-67 के बीच लिखित और 1967 में प्रकाशित इस काव्य संग्रह में 69 कविताएं हैं । इस साठोत्तरी रचना में कुछ पैंसठी और शेष आधुनिक मुहावरे में 'पैंसठोत्तरी' कविताएं हैं ।[2] कवि का कहना है कि "ये कविताएं मेरे साठ के निकट पहुँचते वर्षों की कविताएं हैं"।[3] किन्तु कवि ने वृद्धों की तुकबन्दी- साण तब पाण को उचित ठहराते हुए पाण बने रहने में ही सन्तोष व्यक्त किया है । इस संग्रह का नाम तुलसीदास की पंक्ति -'तुम बिन जिअत बहुत दिन बीते' के आधार पर रखा गया है अतः कवि तुलसीदास के भी ऋणी हैं ।[4] इस काव्य कृति में कवि ने समसामयिक परिवेश, राजनीतिक संघर्ष, विघटित मानव,-मूल्य और तत्कालीन सन्दर्भों को सहज ढंग से सीधी-सीधी शैली में और कहीं व्यंग्य का सहारा लेकर अभिव्यक्त किया है । अपने स्वभावानुसार कवि ने सांकेतिक, प्रतीकात्मक और व्यंजनापूर्ण इन तीनों गुणों से युक्त इस कृति का शीर्षक रखा है । 'बहुत दिन बीते' की सांकेतिक व्यंजना

- -

1- जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्त्व एवं कृतित्व पृष्ठ-116

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §3§ बहुत दिन बीते पृष्ठ-141

3- वही पृष्ठ-141

4- वही पृष्ठ-141

यह है कि रोमानी दृष्टिकोण और प्रणय की मृदुल स्वप्निल भावनाओं के आकर्षण को बीते बहुत दिन हो गए और अब वे सभी कवि के लिये आकर्षक विषय नहीं रहे हैं ।

डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी के अनुसार- कविताओं की अभिव्यंजना पद्धति की स्पष्टता और ऋजुता बच्चन के कवि संयम का प्रतीक है, कहीं पर अस्पष्टता की गाँठें नहीं हैं, कहीं पर प्लास्टिकी या नन्दनकानन के कुसमों से अभिव्यंजना की सजावट नहीं की गई है । अधिकाँश कविताओं का अन्त भी ऐसे नाटकीय ढ़ंग से होता है जिससे एक बारगी जग-जीवन का आस्तीन का साँप जैसा कोई सत्य या अजूबा आँखें नटेरता-सा बिल में घुस जाता है।[1]

सहज-सरल भाषा, अरबी, फारसी अंग्रेजी शब्दों के साथ नये प्रतीकों का प्रयोग, लघुछन्द और साँगरूपकों से यह कृति सजी हुई है । व्यंग्य का पुट सबल होने के कारण अभिव्यंजना अत्यन्त सशक्त बन पड़ी है ।

<u>कटती प्रतिमाओं की आवाज</u> :- ई॰ सन् 1968 में इसका प्रकाशन हुआ । इसमें 91 कविताएं हैं । यह निर्विवाद सत्य है कि संक्रमण और सन्त्रास में ही पुर्न-निर्माण के बीज छिपे होते हैं । स्वयं कवि ने इन 'कटती' प्रतिमाओं में 'बनती' प्रतिमाओं की ध्वनि मानी है । कवि ने इस प्रसन्नता को स्वयं 'अपने पाठकों से' में व्यक्त किया है - मैंने इसे 'कटती प्रतिमाओं की आवाज' कहा है, क्यों कि इसकी कविताएं लिखते हुए बारम्बार मेरा ध्यान उस विखण्डन, विघटन और बिखराव की ओर गया है जो आज हमारे बाहर, और

1- डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी, बच्चन व्यक्तित्व और कवित्व पृष्ठ-122

बाहर से अधिक भीतर चल रहा है । पर इस विघटन और विखण्डन के बीच कहीं कुछ विनिर्मित भी हो रहा है । मेरे सृजन में किसी अंश में यह प्रतिध्वनित भी हुआ है । मुझे प्रसन्नता है कि 'कटती' प्रतिमाओं में 'बनती' प्रतिमाओं की ध्वनि भी मिश्रित है ।[1] इस नाम का औचित्य इसी बात में निहित है कि कवि हमारे समाज की टूटती और खण्ड-खण्ड होती हुई प्रतिमाओं को आकार दे रहा है । 'चचा', 'दो रूप: दो सलूक', 'पका फल', 'नए पुराने', 'मध्यम पीढ़ी का वक्तव्य', 'दो पीढ़ियाँ', 'चार पीढ़ियाँ', आदि कविताओं में बदलते हुए मानवीय मूल्यों की टूटती हुई स्थिति, बदलते हुए मानवीय सम्बन्ध और नए पुराने का संघर्ष अंकित है । बच्चन जी नई-पुरानी पीढ़ी के बीच संतुलित समन्वय चाहते हैं । ऐतिहासिक परिवेश में लिपटा कवि का व्यंग्य पैना और मर्मबिधक है ।

'नई लीक' में जमाने की कशमकश को व्यक्त करते हुए कवि ने तीक्ष्ण वार से व्यंग्य किया है- 'तुम्ही नई लीक धरना' अपने बेटों से पूँछकर उन्हें पैदा करना ।[2] 'परिवार नियोजन', 'युगनाद', 'विश्वास-अविश्वास', 'खण्डित मूर्तियों की आवाज', 'महत्वाकांक्षा' आदि कविताओं में वर्तमानकालीन समस्याओं को प्रकट किया है ।

उभरते प्रतिमानों के रूप :- ई. सन् 1969 में 'उभरते प्रतिमानों के रूप' का प्रकाशन हुआ । प्रस्तुत काव्य-संग्रह 'कटती प्रतिमाओं की आवाज' संग्रह का ही

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §3§ कटती प्रतिमाओं की आवाज पृष्ठ-227

2- वही पृष्ठ-242

पूरक है । प्रथम संग्रह में विखण्डन, विघटन और बिखराव को रेखाँकित किया गया है और प्रस्तुत संग्रह में उक्त विघटन और बिखराव के बीच विनिर्मित नव्यसृजन को परिभाषित किया गया है । इसमें 71 कविताएं हैं । कुछ कविताएं विदेश -यात्रा से सम्बन्धित हैं । 'सीवान किनारे' की कविताएं 'वोलगा से गंगा तक', 'तिबलिसी पहाड़ी से', 'जिप्सी' और 'सुखूमी' शीर्षक तथा कुछ अन्य कविताएं इसी क्रम में हैं । 'तनाव' कविता में कवि ने समाज के निम्नतम् विघटित मूल्य का चित्रण करते हुए गिरे को उठाने की प्रेरणा दी है । 'रंगे सियार' और 'बंदरों का संघर्ष' द्वारा कवि ने युगीन विषमताओं पर व्यंग्य करते हुए मानवता को सजग किया है । 'छलयुग का कोरस' में देश की आर्थिक और घटिया राजनीति का स्पष्ट चित्र अंकित है । 'चाँदी की सीढ़ी' और 'गणपति-वाहन' में क्रमश : धनलोलुप और सृजन का संहार करने वाले कवि कलाकारों और मनुष्य के लोभ का बड़ा ही सजीव चित्रण हुआ है ।

हरस्वरूप पारीक मानते हैं कि- सही चुनाव प्रतीकों द्वारा अनुभूतियों की अभिव्यक्ति, मानव आस्था और आत्मा की आवाज से यह संग्रह परिपूर्ण है ।[1]

सरल भाषा, सूत्रात्मक शैली, मुहावरों और कहावतों का प्रचुर प्रयोग, प्रतीकात्मक अभिव्यंजना, व्यंग्य का पुट, अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग प्रस्तुत संग्रह में हुआ है । भाव और शिल्प की दृष्टि से यह सम्पन्न संग्रह है और कवि की आत्मा की आवाज है ।

1- हरस्वरूप पारीक : बच्चन का परवर्ती काव्य पृष्ठ-42-43

<u>जाल समेटा</u> :- ई. सन् 1973 में प्रकाशित प्रस्तुत ग्रन्थ की अधिकाँश कविताएं 1968 से 72 के बीच लिखी गई । इसमें 31 स्फुट कविताएं हैं । कुछ कविताओं में युग-जीवन और मानवीय मूल्यों के विघटन की व्यंग्यात्मक अभिव्यक्ति हुई है । 'एक पावन मूर्ति' इस कृति की उत्कृष्ट रचना है । इस कविता में कवि की जीवन-रस-आस्था और शिल्प की कारीगरी देखकर ही दिनकर सोनवलकर ने लिखा है कि 'कि बच्चन ने कविता को तपस्या की तरह जिया है ।'[1]

<u>असंकलित कविताएं</u> :- 'जाल समेटा' के बाद की कविताओं को कवि ने 'असंकलित कविताएं' शीर्षक देकर बच्चन रचनावली खण्ड तीन में प्रकाशित कराया । 'असंकलित कविताएं' संग्रह 1983 में प्रकाशित हुआ था । इन कविताओं में यथार्थबोध का स्पष्ट चित्रण है । 'हक' कविता में यह यथार्थ अपनी चरम सीमा पर मुखरित है- भिखमंगे के लड़कों ने अपने बाप से नाराज होकर एक दिन कहा, हमें हमारा हक दो, लाओ ! भिखमंगे ने अपना कासा थमा दिया कहा, जाओ माँगो, खाओ ।[2]

सरल साधारण भाषा में रचित यह कृति पूर्ण यथार्थपरक है ।

<u>अतीत की प्रतिध्वनियाँ</u> :- ई. सन् 1929 और ई. सन् 1933 के बीच 'अतीत की प्रतिध्वनियाँ' लिखी गयी है । इसमें 48 चतुष्पदियाँ हैं, जो बच्चन की

1- श्री दिनकर सोनवलकर : नया साहित्य, जून 1973 पृष्ठ-6

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §3§ असंकलित कविताएं पृष्ठ-411

तत्कालीन मनःस्थिति को समझने में सहायक हैं । 'अतीत की प्रतिध्वनियाँ' में कवि विगत काल में मिलन से दूर रहा है प्यार देने पर उसे पीड़ा, वेदना का दान मिला । ये कविताएं कवि के बीते जीवन की कहानी बताती हैं ।[1] दुःख से विगलित होकर कवि स्वयं अपने को विधाता की भूल समझता है-

'विश्व, तू मुझको न अपराधी बता । मैं विधाता की बड़ी सी भूल हूँ ।[2]

दुखी अवस्था में कवि प्रिया को सुखी देखना चाहता है यह प्रेम का सर्वथा उदात्त रूप है-'जा प्रिये तू भोग सुख-संसार को । मैं दुखों के स्वर्ग में सन्तुष्ट हूँ ।'[3] कवि ने आपदा को ही अपनी सम्पदा माना है ।

48 चतुष्पदियों के पश्चात् कवि ने 'मरघट' में 13 मुक्तक पद लिखे हैं। रचनाकौशल और भावोन्मेष की दृष्टि से इन पदों का बड़ा महत्व है । बच्चन की स्मृति में अटके 'मरघट' के पद हिन्दी काव्य की अमूल्य निधि हैं । प्रस्तुत काव्य-संग्रह की भाषा, शब्द सामर्थ्य, शैली और अभिव्यंजना अत्यन्त सशक्त है।

0 0 0 0 0 0 0
0 0 0 0 0
0 0 0
0

1- डॉ॰ के॰ जी॰ कदम : कवि श्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन पृष्ठ-114

2- बच्चन : बच्चन रचनावली (3) अतीत की प्रतिध्वनियाँ पृष्ठ-443

3- वही पृष्ठ-444

अ ध्या य - दो

भाव तत्व की दृष्टि से समग्र कृतित्व की समीक्षा

द्वि ती य - अ ध्या य

काव्य के भाव-तत्व (भाव पक्ष) से हमारा अभिप्राय काव्य के अंतरंग पक्ष से है, जिसे कविता की आत्मा उसकी आन्तरिक रूप रचना और सुषमा कह सकते हैं । चाहे प्राचीन कविता हो या नवीन उसमें भाव का अपना एक विशेष महत्व होता है क्यों कि भावों और विचारों से ही मानव जीवन का ताना-बाना तैयार होता है । प्राचीन पद्यति में कवि के भाव-पक्ष पर विशेष महत्व दिया जाता था और नौ रसों का विवेचन कवि की भावुकता की परीक्षा के लिये आवश्यक होता था किन्तु भौतिक युग है जिसमें विचारों की प्रधानता हो गयी है । जीवन ही कुछ ऐसा विश्रृंखल हो गया है कि पूर्ण रसात्मकता के क्षेत्र संकुचित हो गए हैं । वर्तमान जीवन की जटिलताओं ने भावों का पर्याप्त शोषण कर लिया है फिर भी समाज में उनका एकदम अभाव नहीं होता । भाव-तत्व के अन्तर्गत समग्र वर्ण्य-विषय का समावेश होता है, भाव-पक्ष की सर्वश्रेष्ठ समृद्धि रस-निष्पति है । भाव और रस का अभिन्न सम्बन्ध है अतः काव्य के भाव-तत्व का विवेचन रस विवेचन के बिना अपूर्ण ही होता है । भाव रस-कोटि पर पहुँचकर ही आस्वाद्य बनते हैं । स्थायी भाव को रस-स्थिति तक ले जाने में प्रमुख रस के अंग, यथा आलम्बन, उद्दीपन, संचारी भाव, अनुभाव आदि का उचित योगदान अत्यावश्यक है ।

काव्य के विधायक तत्वों में भाव-तत्व की स्थिति सर्वोच्च है । मनोवेग जिन्हें भाव ही कहा जाता है, काव्य के भाव पक्ष के प्राण है । काव्य के कल्पना तत्व, बुद्धि तत्व और शैली तत्व तीनों-भाव तत्वों पर आश्रित है । भावों का उदय अनुभूति से होता है । शुक्ल जी के अनुसार 'प्रत्यक्ष बोध,

अनुभूति और वेगयुक्त प्रवृत्ति इन तीनों के गूढ़ संश्लेषण का नाम भाव है ।[1]

काव्यशास्त्र में साधारणतया बयालीस भावों का उल्लेख किया गया है, जिनमें से नौ को आचार्यों ने स्थायी और शेष तैंतीस को संचारी भावों के नाम से अभिहित किया है । विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों के द्वारा स्थायी भाव जब पूर्ण परिपक्वावस्था को प्राप्त होता है तब उसकी संज्ञा 'रस' होती है । रस नौ हैं- श्रृंगार, करुण, शान्त, वीर, रौद्र, भयानक, वीभत्स, अद्भुत और हास्य । कुछ साहित्यकारों और आलोचकों ने वात्सल्य और भक्ति को भी 'रस' की संज्ञा प्रदान की है । प्रभावान्विति की दृष्टि से वात्सल्य और भक्ति पूर्णरूपेण रसोद्रेक में सक्षम हैं ।

बच्चन जी रस सिद्ध कवि हैं । उनके काव्य में करुण और श्रृंगार रस प्रमुख है और अन्य रस गौण रूप में प्रयुक्त हैं ।

<u>बच्चन के काव्य में रसाभिव्यक्ति</u> :- 'रस' काव्य का एक अनिवार्य और अभिन्न उपादान है । आचार्य विश्वनाथ ने रसयुक्त वाक्य को काव्य माना है । 'आकुल अन्तर' में बच्चन की भी रस को काव्य की आत्मा मानते हैं ।[2] उनके अनुसार- 'गीत रस हैं रस की वर्षा करते हैं, मनुष्य को रसग्राही बनाते हैं । रस जीवन की सहज-स्वाभाविक आवश्यकता है, सब अनुभव करते हैं ।[3] कवि की दृष्टि में 'कविता जब कवि की लेखनी से निकल गयी तो उसका अपना अस्तित्व हो जाता है, और पाठक से अपना सम्बन्ध स्थापित करने के लिये

1- डॉ. के. जी. कदम : कवि श्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन, पृष्ठ-232

2- बच्चन : आकुल अन्तर §खण्ड-1§ अपने पाठकों से पृष्ठ-262-263

3- बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ अपने पाठकों से पृष्ठ-86

उसे किसी का मुहताज नहीं होना चाहिये ।'[1] अपनी वार्ता को आगे बढ़ाते हुए रस-निष्पत्ति के सम्बन्ध में भी कवि ने अपने विचारों का अभिव्यक्तीकरण किया है, उनका मानना है कि- 'जहाँ तक कविता से रस अथवा आनन्द पाने का सम्बन्ध है, मैं अब भी समझता हूँ उसका प्रतिपादन कविता के बाहर से नहीं किया जा सकता । उसे तो कविता के अन्दर से ही लेना होगा । यदि इस रस अथवा आनन्द के स्त्रोत की खोज खुद की जाए तो उसमें कुछ विशेषता, कुछ विचित्रता और जुड़ती है । मेरी रचना उस रस का आभास अथवा संकेत कैसे देती है कि आप उसकी ओर आकर्षित होते हैं इसे मैं स्वयं नहीं जानता ।'[2] अतः रस की एकान्त सत्ता को कवि ने स्वीकार किया है इसी सन्दर्भ में हम बच्चन जी की काव्य कृतियों में प्रयुक्त रसों की विवेचना करेंगे ।

श्रृंगार रस :- श्रृंगार भावना विश्व की व्यापक भावना है केवल मनुष्य में ही नहीं अपितु पशु-पक्षियों में भी प्रेम और श्रृंगार का प्रदर्शन होते देखा जाता है, यदि हम प्रगतिशीलता की भी दृष्टि से विचार करें तो यथार्थवादी दृष्टि प्रेम और श्रृंगार को यथार्थ के परिवेश में देखती है । यही कारण है कि भारतीय साहित्य में आदिकाल से ही श्रृंगारिक भावना को लेकर अनेक ग्रन्थों का सृजन हुआ है । देव ने श्रृंगार के रस राजत्व को स्वीकार करते हुए कहा भी है-
'भूलि कहत नव रस सुनवि सकल मूल सिंगार ।'

श्रृंगार रस के दो पक्ष हैं- संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार । बच्चन जी के काव्य में दोनों पक्षों की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है ।

- -

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ अपने पाठकों से पृष्ठ-151

2- वही पृष्ठ-151

संयोग श्रृंगार :- रीतिकाल में श्रृंगार का जो परम्परित विवेचन हमें विभिन्न रूपों में देखने को मिलता है जिनमें नायक और नायिका के मिलन, बिछोह और क्रिया-व्यापार पाठकों के रति स्थायी को जाग्रत कर कामुकता की भाव दशा में ले जाते हैं उस प्रकार का श्रृंगार हमें बच्चन के काव्य में दृष्टिगोचर नहीं होता । बच्चन के काव्य में तेजी बच्चन से विवाह के उपरान्त कवि के जीवन में जो मधुर क्षण आते हैं उन मधुर क्षणों की अभिव्यक्ति कवि ने प्रकृति के कार्य व्यापारों के बीच श्रृंगारिक वर्णन में की है । कवि की 'मिलन यामिनी' कृति उनकी श्रृंगारिक भावनाओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति है जिसमें संयोग श्रृंगार के अन्तर्गत कवि ने प्रकृति के माध्यम से संयोग श्रृंगार के सुन्दर विम्ब उपस्थित किये हैं । यहाँ कवि की भावातिशयता दृष्टव्य है-

'कुसुम कली सुगन्ध सेज पर सजी,
मधुर-मधुर सुवर्ण पैजनी बजी,
पुलक प्रफुल्ल आज कामना सकल,
प्रणय सफल हुआ हृदय मिले पिघल ।
किरण खिली विहँस पड़ी मृणालिनी,
ध्वनित हुई विमुक्त भृंग - रागिनी,
हिली संकुच विलास -बाहु वासिनी,
सटे अधर, हुए नयन सजल ।'[1]

कवि के प्रणय-व्यापारों के साथ प्रकृति का कण-कण प्रेम की पींगें बढ़ा रहा है -यथा- 'हम अपनी मस्ती में, बहके मधुवात बही बहकी-बहकी
चुम्बन के स्वर-संकेतों पर वन की सारी चिड़ियाँ चहकी,
अनुकरण हमारे शब्दों का अस्फुट, लो, पल्लव दल करते,
साँसों से साँसे मिलती थीं, खुलकर खिलकर कलियाँ महकी,[2]

1- बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-74

2- वही पृष्ठ-48

प्रणय के प्रति कवि के विचार भी द्रष्टव्य हैं- 'भावना प्रेरित कविताएं लिखने के लिये प्रेमानुभूति अनिवार्य है, क्यों कि भावों की गहराइयाँ प्रेमानुभूति में ही छुई जा सकती हैं ।'[1]

डॉ॰ विनय से साक्षात्कार के समय बच्चन जी ने प्रेम भावना को अध्यात्म से संयुक्त करते हुए कहा है- 'प्रेम की अनुभूति ही एक स्तर पर जाकर अध्यात्म की अनुभूति हो जाती है ।'[2]

'निशा-निमन्त्रण' 'एकान्त संगीत' और आकुल अन्तर' कृतियाँ जहाँ प्रणय की वियोग कालीन छटपटाहट को अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं वहीं 'सतरंगिनी' और मूलरूप से 'मिलन यामिनी' तथा 'प्रणय पत्रिका' प्रेम की विशुद्ध मिलन भावनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करती हैं । श्रृंगार का एक रससिक्त पक्ष 'निशा-निमन्त्रण में दृष्टिगोचर होता है तो दूसरा रसोद्वेलित पक्ष 'मिलन यामिनी' में है । दोनों में अनुभूति की अतल गहराई है तथा अभिव्यक्ति में गीतिविधा की पूर्णता ।

'निशा-निमन्त्रण' में खण्डित पुजारी की मग्न आराधना की आत्म-पीड़ा है, 'मिलन-यामिनी' में उसी पुजारी का आत्म-समर्पण अचर्न पूजन तथा आनन्दोत्सव है तन्मय आनन्दोत्सव उसमें तन मन प्राण की भूख थी, इसमें तन, मन, प्राण की तृप्ति है । गीतों का कवि ने सृजन नहीं किया है वह स्वयं सृजित हुए हैं । इन गीतों की विशेषता इसी में है कि ऐन्द्रिकता को

1- बच्चन : टूटी-छूटी कड़ियाँ §खण्ड-6§ पृष्ठ-426

2- बच्चन : साक्षात्कार §खण्ड-9§ पृष्ठ-64

माध्यम बनाकर अन्तर की गहरी से गहरी तह को स्पर्श किया गया है ।'[1]

कवि की सर्वाधिक प्रिय पंक्तियाँ भी प्रेम से सम्बन्धित हैं- प्यार किसी को करना, लेकिन कहकर उसे बताना क्या ? मिलन और विरह के क्षणों की मादक स्मृतियों में डूबता हुआ भी कवि प्रणय को नहीं भूल पाया । सम और विषम सभी परिस्थितियों में कवि ने प्रणय के गीत गाए हैं । यही कारण है कि कवि को प्रणय की शक्ति पर अदम्य विश्वास है । यथा-

"मैं तमोमय ज्योति की पर, प्यास मुझको,
है प्रणय की शक्ति पर, विश्वास मुझको,
स्नेह की दो बूँद भी तो तुम गिराओ,
आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ ।
कल तिमिर को भेद मैं आगे बढ़ूँगा,
कल प्रलय की आँधियों से मैं लड़ूँगा,
किन्तु मुझको आज आँचल से बचाओ,
आज फिर से तुम बुझा दीपक जलाओ ।"[2]

बच्चन जी प्रेम पर अपना सर्वस्व न्योछावर कर देना चाहते हैं, यहाँ प्रणय की चरम सीमा परिलक्षित होती है-

"है निछावर प्रेम पर संसार मेरा,
प्रात-मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।"[3]

किन्तु कवि को प्रणय के क्षणों में किसी प्रकार का कोई बन्धन व नियंत्रण स्वीकार्य नहीं है-

---

1- राजानन्द, साहित्य संदेश, नवम्बर-दिसम्बर, 1967 §सुधाबहन पटेल§ पृष्ठ-194

2- बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-26

3- बच्चन : वही पृष्ठ-35

"जब करूँ मैं प्यार
हो न मुझ पर कुछ नियन्त्रण,
कुछ न सीमा कुछ न बन्धन,
तब रूकूँ जब प्राण, प्राणों से करे अभिसार ।
जब करूँ मैं प्यार ।"[1]

कवि ने प्रेम के मधुर व मादक क्षणों को संकट व संताप से परे अनुभव किया है और प्रेम की अजर अमरता की सत्यता को स्वीकार किया है यह कवि का नितान्त मौलिक दृष्टिकोण है –

'संकट – सन्ताप नहीं ।
प्रेम अजर, प्रेम अमर ।'[2]

कवि प्रकृति की शोभा को मानवीय भावभूमि पर उतारने में प्रवीण है । प्रकृति को इंगित कर कवि अपनी प्रिया से मनुहार कर रहा है-

"हम किसी के हाथ में साधन बने हैं
सृष्टि की कुछ माँग पूरी हो रही है,
हम नहीं अपराध कोई कर रहे हैं,
मत लजाओ और देखो उस तरफ भी-
प्राण, रजनी भिंच गयी नभ के भुजों में ,
थम गया है शीश पर निरूपम रूपहरा चाँद
मेरा प्यार बारम्बार लो तुम ।"[3]

बच्चन जी प्रेम चित्रण में स्वच्छन्दतावादी स्थान के कवि हैं । वे स्वस्थ दाम्पत्य प्रेम के कुशल चित्रकार हैं, उन्होंने यथार्थवादी ढ़ंग से प्रेम के मर्यादित चित्रण में ही गौरव अनुभव किया है । उनका प्रेम-चित्रण जीवन से

1- बच्चन : एकान्त संगीत (खण्ड-1) पृष्ठ-234

2- बच्चन : सतरंगिनी (खण्ड-1) पृष्ठ-361

3- बच्चन : मिलन यामिनी (खण्ड-2) पृष्ठ-56

कटा हुआ असामाजिक प्रेम नहीं है बल्कि एक भारतीय गृहस्थ द्वारा प्रदर्शित प्रणय है । अपनी पत्नी को ही प्रेयसी के रूप में कवि ने चित्रित किया है । बच्चन जी को प्रवास काल में अपनी प्रेयसी के अश्रु-पूरित नेत्र नहीं भूलते, कवि की विदाई पर उमड़ आए आँसुओं की स्मृति में 'बच्चन' जी ने निम्न पंक्तियाँ लिखी हैं-

"दूर क्षितिज तक फैले नीले शान्त जलधि के गीले तट पर,
प्रात-किरण से उतरा करतीं जो बूँदें उनकी आहट पर,
और झुके घन से जब मोती की लड़ियाँ धरती को छूतीं,
बिम्बित मेरे दृग में होते प्रिय तेरे नयन सनीर लजीले ।"[1]

अर्द्ध-रात्रि की निस्तब्धता में कवि अपनी प्रिया से मान-मनुहार कर रहा है । जब सारी दुनिया गहरी निद्रा में तल्लीन है तो यह आवश्यक नहीं कि उसकी प्रिया भी सो जाए । कवि चाहता है कि इस अँधेरी रात में वे दोनों प्रेमालाप करें । अपने एकाकी क्षणों में प्रिया की उसी पुरानी स्मृति में मान-मनुहार में कवि खो जाता है-

"इसीलिये क्या मैंने तुझ से साँसों के सम्बन्ध बनाए,
मैं रह-रहकर करवट बदलूँ तू मुख पर डाल केश सो जाए
रैन अंधेरी जग जा गोरी, माफ आज की हो बरजोरी,
सो न सकूँगा और न तुझको सोने दूँगा, हे मन - बीने ।"[2]

'प्रणय पत्रिका' सरसता और आकर्षक मिठास से भरी हुई, हृदय को अनुरंजित करने वाली कृति है इस कृति के गीतों में प्राकृतिक दृश्यों, बिम्बों तथा भावों की गुम्फित सृष्टि अत्यन्त रसमय और हृदयग्राही हो गई है ।

- -

1- बच्चन : प्रणय-पत्रिका {खण्ड-2} पृष्ठ-101

2- वही पृष्ठ-97

'कह रही है पेड़ की हर शाख अब तुम आ रहे अपने बसेरे' जैसी पंक्ति में जो प्रेम का आमन्त्रण और प्रतीक्षामय उल्लास है वह 'प्रणय-पत्रिका' की मूल संवेदना है ।

कवि अपनी प्रिया के प्रेम-स्नेह में डूब जाना चाहता है, प्रिया की मुस्कान पर कवि मुग्ध हो उठा है । जीवन की प्रेरणा शक्ति उनकी प्रिया ही है । संयोग श्रृंगार की कितनी रसमय अभिव्यक्ति है- यथा-

"मुसकरा दो कोटि किरणें टूट छहरें,
अश्रु की दो बूँद, मरु में सिन्धु लहरें,

बिन्दु से तुम सिन्धु की निधि आज तोलो
प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो ।

प्रेरणाओं की सरस अधिकारिणी तुम,
आज मेरे प्राण को कर दो ऋणी तुम,

स्नेह से अपने मुझे, सुभगे, भिगो लो,
प्राण, जीवन का नया अध्याय खोलो ।"[1]

दाम्पत्य जीवन में पत्नी के प्रति कवि का दृष्टिकोण बहुत स्वस्थ है वह नारी को अपने जीवन की संगिनी मानता है जो सुख और दुख दोनों ही परिस्थितियों में उसका सच्चे मित्र की भाँति साथ दे सके । अपनी पत्नी में ऐसे उदात्त गुणों का समावेश देखकर वह बरबस ही कह उठा है-

"झलक तुम्हारी मैंने पाई सुख-दुख दोनों की सीमा पर
ललक गया मैं सुख की बाँहों में जब जब उसने चुमकारा,
औ ललकारा जब-जब दुख ने कब मैं अपना पौरुष हारा,
आलिंगन में प्राण निकलते, खड्ग तले जीवन मिलता है,
दुनियाँ की नीची सतहों पर अलग-अलग सबकी परिभाषा,

हुआ न जिनका हास रुदनमय हुई न जिनकी आशा-निराशा,

1- बच्चन : मिलन यामिनी (खण्ड-2) पृष्ठ-28

वे छोटा सा हृदय परिधि भी छोटी सी नयनों की लाये,
मेरा तो दम ही घुट जाता ऐसे दिल के बीच समाकर
झलक तुम्हारी मैंने पायी सुख-दुख दोनों की सीमा पर ।"[1]

और कवि प्रेयसी के आगमन पर पाँवों की आहट पर सभी सुखों का बलिदान करने की कामना करता है ।[2] अपनी प्रिया के साथ बिताए पलों के उन्माद में डूबा कवि सुधियों की घाटी में चुपके से घुस जाता है प्रवासकाल में ऐसे ही संयोग के मादक क्षण कवि को शान्ति प्रदान करते हैं । यथा-

"था गगन कड़का कि छाती में तुम्हें मैंने छिपाया था,
थी गिरी बूँदें कि तुमने और मैंने संग नहाया था,
याद सतरंगी लिये हम इन्द्रधनु की साथ लौटे थे,
सुधि-बसे कितने क्षणों को आज फिर छेड़े हुए बादल,
आ गयी बरसात, मुझको आज फिर घेरे हुए बादल ।"[3]

कवि अपनी प्रिया से उल्लास के गीत गाने के लिये आग्रह कर रहा है-

"गीत गाओ कोकिला शरमा रही है,
सांस में मधु-मन्त्र शक्ति समा रही है,

आज तुम पतझार को मधुमास कर दो;
आज तुम उच्छवास को उल्लास कर दो

पास आओ चन्द्रमा के होंठ चूमूँ,
कुन्तलों के बादलों के साथ घूमूँ,

आज तुम पाताल को आकाश कर दो,
आज तुम उच्छवास को उल्लास कर दो ।"[4]

कवि अपनी प्रेयसी से मिलन के लिये आतुर है, और इसी आतुरता में

1- बच्चन :	प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§	पृष्ठ-123
2-	वही	पृष्ठ-124
3- बच्चन :	वही	पृष्ठ-104
4- बच्चन :	मिलन-यामिनी §खण्ड-2§	पृष्ठ-27-28

उसे प्रकृति के कण कण मे प्रणय की रागिनी बजती हुई प्रतीत हो रही है । अपनी मस्ती में बहका कवि अपने तन-मन की सुध भूला हुआ है और रात्रि को भी वासनामयी अनुभव कर रहा है । संयोग श्रृंगार का सुन्दर चित्र दृष्टव्य है - "यह कली का हास आता है किधर से
यह कुसुम का श्वास जाता है किधर से,
हर लता-तरु में प्रणय की रागिनी है,
आज कितनी वासनामय यामिनी है ।

दुग्ध उज्जवल मोतियों से युक्त चादर
जो बिछी नभ के पलंग पर आज उस पर
चाँद से लिपटी लजाती चाँदनी है,
आज कितनी वासनामय यामिनी है ।"[1]

प्रिया का सान्निध्य पाते ही कवि को समस्त वातावरण प्रेममय प्रतीत होने लगता है और अपने प्रणय-व्यापारों को कवि उच्च भावानुभूति में पहुँचकर समस्त प्रकृति में देखने लगता है । प्रणय के संयोगकालीन चित्रों की झाँकी प्रस्तुत करने में बच्चन जी सिद्धहस्त हैं । 'जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरत देखी तिन तैसी' वाली उक्ति कवि के ऊपर चरितार्थ होती है । दीर्घकालीन विरह-विषाद और एकाकीपन को भोगते हुए जब उसे अपनी प्रिया का नैकट्य प्राप्त हुआ तो मानों कवि को उसी समय ही सम्पूर्ण प्रकृति भी विरह वियोग से मुक्त हो प्रणय के गीत गाती हुई प्रतीत होती है-

"मधुवन के तरुवर से मिलकर भीगी लतर सलोनी,
साथ कुसुम के कलिका भीगी, कौन हुई अनहोनी,
भीग-भीग पी-पीकर चातक का स्वर कातर भारी,
सखि, भीग रही है रात कि हम-तुम भीगे,
सखि, अखिल प्रकृति की प्यास कि हम-तुम भीगे ।"[2]

1- बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-3।

2- वही पृष्ठ-59

कवि ने चाँदनी का एक मुग्धा नायिका के रूप में सुन्दर चित्रण किया है, जो सबसे बचते बचाते, छिपते-छिपाते नायक से मिलने के लिये आती है । चाँदनी का दबे पाँव आना और सहमना कवि ने अपनी प्रेयसी में पाया है । इन्हीं भावों को कवि ने शब्दों में बाँधा है । यथा-

"पिछले पहर दबे पाँवों से आती है चाँदनी सहमती,
हवा लदी फूलों की बू से चलती है पग-पग पर थमती,
आसमान पर पहरा देते ऊँघ रही तारों की आँखें,
औ' धरती के कण-कण में है मीठी नींद विलमती,
यही घड़ी है मन के ऊपर जब कोई प्रतिबन्ध नहीं है,
अब अपने सपनों से लिपटे मुक्त गगन के नीचे हम-तुम ।"
अस्त हुआ दिन, मस्त समीरण मुक्त गगन के नीचे हम-तुम ।"[1]

मिलन की रसीली यामिनी दिन की धूप व धूल-धक्कड़ सहने वाले मनुष्य को मानो प्रकृति का वरदान है, एक पुरस्कार है । संयोग-श्रृंगार-भावना को उद्दीप्त करने वाले प्रकृति के वातावरण की रंगीन सृष्टि अनुपम है । मिलन से जीवन पूर्ण बनता है । 'मिलन यामिनी' के उत्तर भाग में प्रकृति के माध्यम से कवि ने पूर्ण संयोग के निश्छल चित्र उतारे हैं जो कवि के शिल्प-सौष्ठव को प्रस्तुत करते हैं । 'मिलन यामिनी' में माँसलता एवं ऐन्द्रिय वासना के चित्र अवश्य हैं किन्तु वे रीतिकालीन निम्नस्तरीय श्रृंगार से नहीं हैं । न वहाँ घिसे पिटे उपमान हैं, न नख शिख के निर्जीव वर्णन हैं । 'मिलन यामिनी' के माँसल गीतों की मादक रंग-बिरंगी सृष्टि में मन बरबस विरमता है ।

'मिलन यामिनी' एक ऐसी गीत-सृष्टि है जहाँ वियोग-विषाद के खंडित तारों को जोड़कर कवि ने संयोग के सितार के तार झंकृत किये हैं ।[2]

1- बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-63

2- जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-66

इन गीतों में मिलन का मादक राग ही प्रधान है, जिसमें यौवनोचित उद्दीप्त भावनाएं कलात्मक अभिव्यंजना की रंगीन-मर्यादा-पोषित चूनर से आवरित हुई हैं जो शुचि सुन्दर हैं । इतना ही नहीं कवि ने 'मिलनयामिनी' में प्रेम-भावना को मधुरता व उज्जवलता प्रदान की है ।

उसने 'मिलन-यामिनी' के गीत आत्मिक मुक्ति के रस में डूबकर पूर्ण उल्लास के साथ कोकिल कंठों की सहजता से गाए हैं ।[1]

अपनी प्रेयसी के रूप-सौन्दर्य का चित्रण करते हुए वे एक सिद्ध हस्त चित्रकार प्रतीत होते हैं । प्रेयसी का सर्वांग कोमलता का प्रतिरूप है और कवि उस सौन्दर्य में डूब जाता है । मन्त्रमुग्ध सा कवि उसके सौन्दर्य का चित्रण करते हुए कहता है-

"तुम्हारे नील झील-से नैन, नीर-निर्झर-से लहरे केश,
तुम्हारे तन का रेखाकार वही कमनीय, कलामय हाथ,
कि जिसने रुचिर तुम्हारा देश रचा गिरि-ताल-माल के साथ,
करों में लतरों का लचकाव, करतलों में फूलों का वास,
तुम्हारे नील-झील-से नैन, नीर-निर्झर-से लहरे केश ।[2]

बच्चन की 'मधुशाला' प्रेम और रूप-सौन्दर्य की अत्यन्त लोकप्रिय रचना है, जिसमें नारी सौन्दर्य का चटकीला चित्रण आकर्षक बन पड़ा है-

मेंहँदी रंजित मृदुल हथेली पर, माणिक मधु का प्याला,
अँगूरी अवगुण्ठन डाले स्वर्ण-वर्ण साकी बाला,
पाग बैंजनी, जामा नीला डाट डटे पीने वाले,
इन्द्र धनुष से होड़ लगाती आज रंगीली मधुशाला ।[3]

- -

1- डॉ॰ रामेश्वर लाल खंडेलवाल : आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य — पृष्ठ-344
2- बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ — पृष्ठ-115
3- बच्चन : मधुशाला §खण्ड-17 — पृष्ठ-46

ऐसे अनेक मोहक चित्र कवि के काव्य में भरे पड़े हैं । प्रिया के रूप सौन्दर्य के अनेक चित्र चित्रकार ने अपने सधे हाथों से सँवारें हैं ।

प्राकृतिक व्यापारों में कवि को प्रणय-व्यापार की अनुभूति हो रही है । संयोग श्रृंगार का एक सुन्दर चित्र द्रष्टव्य है । यथा-

"विदग्ध भूमि व्योम को निहारती,
पिपासु कण्ठ मेघ को पुकारती,
भरा पयोद शुष्क भूमि हेरता,
कहाँ छिपी मिलन-घड़ी, लगे झड़ी ।
बयार घन-शुभागमन बता रही,
तड़ित गगन-अधीरता जता रही,
विनम्र अभ्र भू समग्र घेरता,
निकट हुई, मिलन घड़ी लगे झड़ी ।
भरा पयोद भूमि पर गया बिखर,
नहा निखिल दिगम्बरा उठी निखर,
मिले सिंगार और स्नेह देह धर,
अमर हुई मिलन घड़ी लगी झड़ी ।"[1]

<u>वियोग श्रृंगार</u> :- प्रेम के संयोग पक्ष के समान सरस और भावपूर्ण गीत कवि ने वियोग पक्ष के भी प्रस्तुत किये हैं । समय की विपरीत दिशा को इंगित कर कवि ने वियोग पक्ष को बड़ी गम्भीरता के साथ प्रस्तुत किया है-

'क्या हवाएं थीं कि उजड़ा प्यार का वह आशियाना,
कुछ न आया काम तेरा शोर करना, गुल मचाना ।'[2]

कवि सम्पूर्ण संसार में अपने आपको नितान्त एकाकी अनुभव करता है

1- बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-71-72

2- बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृष्ठ-340

और विरह में आहें भरता है -

> 'आँधी पानी झकझोर नहीं देते वन के तरू पातों को
> मानव की छाती भी, विरही समझा करते इन बातों को
> जर्जर-कातर अन्तर थर-थर काँपा करता, आहें भरता,
>
> भगवान किसी को वर्षा में मत बिलगाये ।
> क्या आज तुम्हारे आँगन में भी घन छाये ?'[1]

प्रिया से विछोह होने पर कवि एकाकी व चिंतामग्न है, समस्त प्रकृति के फलने-फूलने पर पतझर में भी बहार आने पर कवि व्याकुल है, क्यों कि कवि का एकाकी मन तो फिर भी अकेला ही रह गया है, हरियाली को देखकर विरही कवि के हृदय में हूक उठना स्वाभाविक है । कवि के ऐसे ही गीत वियोग श्रृंगार की पूर्ण रसात्मक दशा को उद्घाटित करते हैं । यथा-

> "सहसा बिरवों में पात लगे, सहसा बिरही की आग जगी ।
> कुछ अनजाने सुख से सिहरीं सब सूखी-भूखी शाखायें
> उन पर ऐसी लाली दौड़ी जैसे गालों पर शरमाएं,
> उस बाला के जिसका कोई मुख चुम्बन पहली बार करे,
> यह देख समा मेरी सहमी आँखों में आँसू भर आये,
> क्या था उस मादक लाली में, क्या उस मोहक हरियाली में,
> जिससे छाती में तीर चुभे, जिससे अन्तर में चाह जगी,
> सहसा बिरवों में पात लगे, सहसा बिरही की आग जगी ।'[2]

इसी प्रकार एक मनोवैज्ञानिक चित्रण देखें जहाँ पर कवि एक ऐसे अन्तस्तल के शोध में लगा है जहाँ बेबाकी से वह अपने अच्छे बुरे सभी कार्यों का लेखा-जोखा प्रस्तुत कर सके -

---

1- बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ पृष्ठ-105

2- बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-45

' अरे है वह अन्तस्तल कहाँ ?
अपने जीवन का शुभ सुन्दर
बाँटा करता हूँ मैं घर-घर,
एक जगह ऐसी भी होती,
निःसंकोच विकार-विकृति निज सब रख सकता जहाँ !
अरे है वह अन्त स्तल कहाँ ?'[1]

ऐसे ही भावपूर्ण गीत कवि ने अपनी अन्य कृतियों में प्रिया से बिछोह होने पर लिखे हैं, किन्तु वह विरह सारी उम्र का विरह था अतः वे गीत वियोग श्रृंगार के अन्तर्गत न आकर शोक भाव के अन्तर्गत आते हैं । कवि बच्चन की पूर्व पत्नी श्यामा का निधन असमय ही युवावस्था में हो गया था, यही कारण है कि वे स्वान्तः सुखाय अपना दुःख कागज से कहने लगे । 'निशा - निमन्त्रण', 'एकान्त-संगीत', 'आकुल-अन्तर' में उनका यह शोक उभरकर सामने आया है । उक्त कृतियों के गीत ऐसी सामान्य भाव-भूमि पर लिखे गए हैं कि उन गीतों में छिपा हुआ दर्द केवल व्यक्तिगत कवि बच्चन का दर्द न होकर सम्पूर्ण मानवों का दुखदर्द बन गया है । यह उनके भावपूर्ण गीतों की निजी विशेषता है । आज शत्-शत् कण्ठों से कवि का दर्द मुखरित हो रहा है । साधारणीकरण का इससे अच्छा उदाहरण अन्यत्र दुर्लभ है ।

<u>करुण रस :-</u> शोक स्थायी भाव से उत्पन्न होने वाले करुण रस की विद्वानों और कवियों ने व्यापक व्यंजना की है । दुख से ही कविता की उत्पत्ति मानने वाले अनेक कवियों में आदि कवि बाल्मीकि का नाम सर्वप्रथम हमारे मुख में आता है क्यों कि क्रौंच-वध से ही उनकी वाणी मुखर हो उठी और एक महा-

---

1- बच्चन : आकुल-अन्तर §खण्ड-1§ पृष्ठ-27।

काव्य 'रामायण' की उन्होंने रचना कर डाली । ' एको रस करुण एव' कहकर भवभूति ने करुण रस को रसराज की संज्ञा से विभूषित किया है ।

करुण रस के आस्वादन से सर्वाधिक आत्मिक एकता का आभास होता है । यही कारण है कि अनेक विद्वान इसे काव्य का मूलाधार मानते हैं । आधुनिक साहित्य में पंत का 'वियोगी होगा पहला कवि आह से उपजा होगा गान' कहना भी इसी ओर संकेत करता है । बच्चन जी ने भी करुण रस को श्रेष्ठ रस के रूप में स्वीकार किया है । 'सतरंगिनी' में अपने पाठकों से उन्होंने कहा भी है- "अवसाद के प्रति मनुष्य के आकर्षण को मैं समझता हूँ ।" वर्जिल ने लिखा था, 'सुन्त लैक्रिमे रेरुम' - 'देअर इज ए सेन्स आफ टियर्स इन थिंग्स ह्यूमन'- मानवता का सब कुछ अश्रु-स्नात ही है । भवभूति कहते हैं, "एकोरसः करुण एव' । शैली की यह पंक्ति प्रसिद्ध है, 'आवर स्वीटैस्ट सॉंग्स आर दोज दैट टेल आफ सैडेस्ट थाट ।' कभी मैंने भी इस विचार को इस प्रकार हिन्दी में पद्यबद्ध किया था ।

जिन गीतों में शायर अपना गम रोते हैं,
वे उनके सबसे मीठें नगमें होते हैं ।'[1]

कवि बच्चन ने इस बात को निम्न पंक्तियों में कितनी सुन्दरता के साथ अभिव्यक्त किया है । देखिये-

'मैंने पीड़ा को रूप दिया,
जग समझा मैंने कविता की ।'[2]

1- बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ अपने पाठकों से पृष्ठ-310-311

2- बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृष्ठ-95

और

'मैं रोया, इसको तुम कहते हो गाना,
मैं फूट पड़ा, तुम कहते, छन्द बनाना,
क्यों कवि कहकर संसार मुझे अपनाये,
मैं दुनियाँ का हूँ एक नया दीवाना ।'[1]

'निशा-निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत', और 'आकुल अन्तर' कृतियों के अधिकांश गीतों में बच्चन जी ने करुण रस की ही व्यंजना की है । यथा-

"था उजाला जब गगन में,
था अँधेरा ही नयन में,
रात आती है हृदय में भी तिमिर-अवसाद भरती ।
अब निशा नभ से उतरती ।"[2]

अपनी पत्नी श्यामा जी की मृत्यु से कवि का जीवन घोर एकाकीपन से घिर जाता है और वह गा उठता है-

'सत्य मिटा, सपना भी टूटा,
संगिन छूटी, संगी छूटा ।'[3]

सृष्टि के कण-कण से कवि के हृदय में करुणा जागृत होती है । प्रबल झंझावात से हारे हुए विवश पक्षियों के करुण क्रन्दन से कवि का हृदय शोक से आपूरित हो जाता है । पक्षी के उजड़े हुए नीड़ के द्वारा कवि ने अपने घर-परिवार के उजड़ने की बात कही है । पत्नी का वियोग सहने वाले विधुर हृदय कवि को समस्त संसार दुखी प्रतीत हो रहा है और दूसरों के दुख को

1- बच्चन : मधुबाला {खण्ड-1} पृष्ठ-112

2- बच्चन : निशा-निमन्त्रण {खण्ड-1} पृष्ठ-164

3- बच्चन : वही पृष्ठ-179

देखकर हँसने वालों पर कवि को क्षोभ हो रहा है । यथा-

'प्रबल झंझावात साथी !
देह पर अधिकार हारे,
विवशता से पर पसारे,
करुण रव-रत पक्षियों की आ रही है पाँत साथी !
हँस रहा संसार खग पर,
कह रहा जो आह भर-भर-
'लुट गये मेरे सजोने नीड़ के तृण-पात !' साथी !
प्रबल झंझावात, साथी !'[1]

अपने अकेलेपन अहसास मात्र से कवि का सारा विश्वास और उल्लास मानों खो गया है । पत्नी के निधन से विधुर कवि का हृदय चीत्कार कर उठता है । यथा-

'कितना अकेला आज मैं !
संघर्ष में टूटा हुआ
दुर्भाग्य से लूटा हुआ,
परिवार से छूटा हुआ, कितना अकेला आज मैं !
खोया सभी विश्वास है,
भूला सभी उल्लास है,
कुछ खोजती हर साँस है, कितना अकेला आज मैं !
कितना अकेला आज मैं !'[2]

'निशा निमन्त्रण' के पीछे नियति की कठोरता का निर्मम प्रहार और उसके कारण उत्पन्न मर्म भेदी चीत्कार की अनुभूतियाँ विद्यमान हैं । शोक विगलित हृदय से पत्नी के निधन पर कवि समय-साम्य की स्थिति की विवेचना कर रहा है । किसी के रोने पर कवि को अपनी यह काली रात याद आ गई

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृष्ठ-165

2- बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृष्ठ-257

है । कितना गहरा दर्द छिपा है निम्न पंक्तियों में । यथा-

'ऐसी ही थी रात अँधेरी,
जब सुख की, सुखमा की ढ़ेरी,
मेरी लूट नियति ने ली थी, करके मेरा तन-मन जर्जर !
कोई रोता दूर कहीं पर ।'[1]

साझं ढलते ही सभी लोग अपने घरों को लौटते हैं, आशा-विश्वास और उल्लास से उनके पदचाप अतिशीघ्र बढ़ते हैं । यहाँ तक कि पक्षी भी अपने गन्तव्य अपने सलोने नीड़ में शीघ्रातिशीघ्र पहुँचना चाहते हैं, क्यों कि उनके नन्हें-नन्हें नवजात कोमल बच्चे उनकी आशा में टकटकी लगाए बैठे होंगे, किन्तु कवि नितान्त एकाकी है वह अनुभव करता है कि उससे मिलने के लिये कोई भी व्याकुल नहीं है, किसी के भी हृदय में कवि के लिये कोई तड़प या ललक नहीं है । कवि की यही तड़प, यही दर्द करुणा में पाठक को डूबा देती है -

"दिन जल्दी-जल्दी ढ़लता है !
हो जाय न पथ में रात कहीं,
मंजिल भी तो है दूर नहीं-
यह सोच थका दिन का पन्थी भी जल्दी-जल्दी चलता है !
बच्चे प्रत्याशा में होंगे,
नीड़ों से झाँक रहे होंगे-
यह ध्यान परों में चिड़ियों के भरता कितनी चंचलता है !
मुझसे मिलने को कौन विकल ?
मैं होऊँ किसके हित चंचल ?
यह प्रश्न शिथिल करता पद को भरता उर में विह्वलता है !
दिन जल्दी-जल्दी ढ़लता है ।"[2]

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृष्ठ-175

2- बच्चन : वही पृष्ठ-161

अन्धकार होते ही छाया भी मनुष्य का साथ छोड़ देती है, इस बात से कवि बहुत दुखी है क्यों कि रात्रि में तो सभी के मिलन की घड़ी होती है और यहाँ एक मौन छाया ही कवि का संबल बनी हुई थी वह भी सांझ ढलते ही किनारा कर गई कवि का यही दुख दृष्टव्य है-

"रवि रजनी का आलिंगन है,
संध्या स्नेह-मिलन का क्षण है,
कान्त प्रतीक्षा में गृहिणी ने, देखो, घर-घर दीप जलाया ।
जग के विस्तृत अन्धकार में,
जीवन के शत-शत विचार में,
हमें छोड़कर चली गयी, लो, दिन की मौन संगिनी छाया ।
साथी अन्त दिवस का आया ।"[1]

विरह भावनायें कवि के हृदय में भारी चट्टान से दबी हुई थी, जब वह चट्टान खिसकी तो अनेकानेक शोक विगलित भावपूर्ण गीत निकल पड़े । पक्षी का प्रतीकात्मक प्रयोग कर कवि ने अनेक स्थानों पर अपना विम्ब प्रस्तुत किया है । पक्षी अन्तरिक्ष में व्याकुल है- उसके सामने अनन्त आकाश है । उसका कभी इधर और कभी उधर उड़ना अतिशय व्याकुलता का द्योतक है । पक्षी की ही भाँति कवि का हृदय भी विषम परिस्थितियों में अकेलेपन से व्याकुल है । यथा-

"अन्तरिक्ष में आकुल-आतुर,
कभी इधर उड़, कभी उधर उड़,
पन्थ नीड़ का खोज रहा है पिछड़ा पंछी एक अकेला ।
बीत चली सन्ध्या की बेला ।"[2]

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृष्ठ-161

2- बच्चन : वही पृष्ठ-163

सामान्यतः 'निशा-निमन्त्रण' में विषाद, पीड़ा, गहरी उदासी एकाकीपन और असहाय के भाव तो निरूपित हुए ही हैं । प्रकृति-सौन्दर्य और कल्पना के मधुगुंजित स्वप्न भी यहाँ आकार पा सके हैं । प्रकृति को उद्दीपनकारी स्थिति में तो कितने ही कवियों ने उपस्थित किया है, किन्तु एक विरही के हृदय और जल भरे बादल की स्थिति का साम्य निम्नांकित पंक्तियों से अच्छा और कहाँ मिलेगा -

"आज मुझसे बोल बादल !
तम-भरा तू, तम-भरा मैं,
गम-भरा तू, गम-भरा मैं,
आज तू अपने हृदय से हृदय मेरा तोल बादल !
आज मुझसे बोल बादल !"[1]

मन्दिर-मस्जिद और गिरजे से आती हुई श्रद्धालुओं की ध्वनि से कवि का हृदय शोक विगलित हो रहा है और उसे अपना घर-मन्दिर तथा प्रतिमा याद आने लगी । कवि की स्मृतिजन्य विह्वलता शब्द-शब्द से टपकती है, असहाय होकर कवि यहाँ वहाँ निगाहें दौड़ाता रहता है । वातावरण से उद्दीप्त हो उठी भावनाओं को कवि ने बहुत सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है-

"मेरा मन्दिर था, प्रतिमा थी,
मन में पूजा की महिमा थी,
किन्तु निरभ्र गगन से गिरकर वज्र गया कर सबका खण्डन !
गिरजे से घण्टे की टन-टन !
जब ये पावन ध्वनियाँ आतीं,
शीश झुकाने दुनियाँ जाती,
अपने से पूछा करता तब, करूँ कहाँ, मैं, किसका पूजन ?
गिरजे से घण्टे की टन-टन ।"[2]

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृष्ठ-177

2- बच्चन : वही पृष्ठ-167

'निशा-निमन्त्रण' का एक-एक गीत 'एकान्त संगीत' का हर स्वर और 'आकुल अन्तर' का प्रत्येक स्पन्दन इस वेदना की सजीव मूर्ति है । बच्चन का कवि जीवन के उल्लास से जहाँ उल्लसित होता है वहीं विषाद से उसका मन विषण्ण भी हो उठता है । अपनी प्रिय पत्नी के देहान्त के बाद कवि की कृतियाँ जीवन और जगत की नश्वरता पर प्रहार करने लगीं और कवि शोक की चरम सीमा को लाँघकर मृत्यु का वरण करना चाहता है, प्रस्तुत गीत में करुण रस की चरम परिणति दर्शनीय है । यथा-

"आओ, सो जायें, मर जायें !
स्वप्न-लोक से हम निर्वासित,
कब से गृह-सुख को लालायित,
आओ निद्रा-पथ से छिपकर हम अपने घर जायें !
आओ, सो जायें, मर जायें !"[1]

कवि का तन और मन दोनों ही भूखे हैं, हृदय भी तृषित है । अपनी पत्नी की याद करके कवि दुखी है । कवि एकान्त क्षणों में पत्नी की गोद में सिर रखकर सोना चाहता है, जहाँ उसे अमित प्यार मिल सके, वह स्वच्छन्द प्रणय की कामना करता है । किन्तु उसकी कामना मात्र कामना ही रह जाती है जबकि यह आकांक्षा तो हर गृहस्थ की होती है किन्तु कवि इस प्रेम से वंचित है, कवि का दुख द्रष्टव्य है -

"आँखों में भरकर प्यार अमर,
आशीष हथेली में भरकर,
कोई मेरा सिर गोदी में रख सहलाता, मैं सो जाता !
कोई गाता, मैं सो जाता !"[2]

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण {खण्ड-1} पृष्ठ-170

2- बच्चन : एकान्त संगीत {खण्ड-1} पृष्ठ-216

और अपनी अभिलषित मनोवांछा की पूर्ति न होते देख कवि त्राहि-त्राहि कर उठता है-

"त्राहि-त्राहि कर उठता जीवन ।
जब उर की पीड़ा से रोकर,
फिर कुछ सोच-समझ चुप होकर,
विरही अपने ही हाथों से अपने आँसू पोछ हटाता,
त्राहि-त्राहि कर उठता जीवन ।
पन्थी चलते-चलते थककर
बैठ किसी पथ के पत्थर पर
जब अपने ही थकित करों से अपना विथकित पाँव दबाता,
त्राहि-त्राहि कर उठता जीवन ।"[1]

कतिपय स्थानों पर कवि बहुत अधिक दुखी और भावुक हो उठा है और सामान्य-सी बात भी बहुत सरस और भावपूर्ण लगने लगती है । साधारण भाषा में लिखित इस गीत में कवि अपने ही मन से बरबस पूँछ रहा है -

"मैं अपने मन से पूँछा करता ।
निर्मल तन, निर्मल मन वाली,
सीधी-सादी, भोली-भाली,
वह एक अकेली मेरी थी, दुनिया क्यों अपनी लगती थी ?
मैं अपने से पूँछा करता ।"[2]

पत्नी को प्रेयसी मानने वाले कवि बच्चन अपने प्रणय और प्रिया के सानिध्य की स्मृतियों में डूब जाते हैं, मानों अपनी प्रिया से वार्तालाप कर रहे हों -

---

1- बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृष्ठ-239

2- बच्चन : आकुल-अन्तर §खण्ड-1§ पृष्ठ-271

"प्रेयसि, याद है वह गीत ?
गोद में तुझको लेटाकर,
कण्ठ में उन्मत्त स्वर भर,
गा जिसे मैंने लिया था स्वर्ग का सुख जीत !
है न जाने तू कहाँ पर ,
कण्ठ सूखा, क्षीणतर स्वर,
सुन जिसे मैं आज हो उठता स्वयं भयभीत !
तू न सुनने को रही जब,
राग भी जब वह गया दब,
तब न मेरी जिन्दगी के दिन गये क्यों बीत !
प्रेयसि, याद है वह गीत ?"[1]

कई बार लगता है 'निशा निमन्त्रण' मात्र विरह विषाद के गीतों का संग्रह ही नहीं है, अपितु एक असहाय, अकेले, विधुर मानव की मानसिक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उतरे शब्द-चित्रों का सजीव अंकन भी है ।[2]

जब सम्पूर्ण संसार निद्रा की गोद में मीठे-मीठे स्वप्नों में खोया हुआ है तब कवि का शोक विगलित हृदय और अश्रुपूरित नेत्र विश्व का निरीक्षण कर रहे होते हैं -

"विश्व सारा सो रहा है !
हैं विचरते स्वप्न सुन्दर,
किन्तु इनका संग तजकर
व्योम व्यापी शून्यता का कौन साथी हो रहा है !
भूमि पर सर, सरित्, निर्झर,
किन्तु इनसे दूर जाकर,
कौन अपने घाव अम्बर की नदी में धो रहा है ?
न्याय -न्यायाधीश भू पर,
पास, पर इनके न जाकर,

1- बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृष्ठ-220-221

2- डॉ. जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ-46

कौन तारों की सभा में दुःख अपना रो रहा है ?
विश्व सारा सो रहा है ।"[1]

अपने दुख में कवि को प्रकृति का कण-कण दुखी व वेदनामय प्रतीत होता है । रात रोती हुई प्रतीत होती है । कवि कभी उल्कापात देखता है तो कभी टूट रहे तारे को देखता है । कुत्तों का रात-रात भर भोंकना और बिल्ली का आऊ-आऊ कर रोना रात्रि की निस्तब्धता में कवि के दुख और वेदना को बढ़ा रहे हैं और कवि बरबस पुकार उठता है-

"क्या भूँलू क्या याद करूँ मैं !
अगणित उन्मादों के क्षण हैं
अगणित अवसादों के क्षण हैं
रजनी की सूनी घड़ियों को किन-किन से आबाद करूँ मैं !
क्या भूलूँ क्या याद करूँ मैं ।"[2]

'गुलहजारा'[3] कविता में कवि का यह दुख अधिक उभरकर सामने आया है । श्यामा को गुलहजारा का प्रतीत मानकर कवि ने अपने भावों को वाणी दी है । कवि की असीम करुणा निम्न पंक्तियों में साकार रूप में उभरकर सामने आयी है -

"क्या कंकड़-पत्थर चुन लाऊँ ?
यौवन के उजड़े प्रदेश के
इस उर के ध्वंसावशेष के
भग्न शिला-खण्डों से क्या मैं फिर आशा की भीत उठाऊँ ?
क्या कंकड़-पत्थर चुन लाऊँ ?

- -

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृष्ठ-174

2- वही पृष्ठ-179

3- बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृष्ठ-146-147

यौवन के उजड़े प्रदेश के
इस उर के ध्वंसावशेष के
भग्न शिला-खण्डों से क्या मैं फिर आशा की भीत उठाऊँ ?
क्या कंकड़-पत्थर चुन लाऊँ ?
स्वप्नों के इस रंगमहल में
हँसू निशा की चहल-पहल में ?
या इस खण्डहर की समाधि पर बैठ रुदन को गीत बनाऊँ ?
क्या कंकड़-पत्थर चुन लाऊँ ?
इसमें करुण स्मृतियाँ सोयीं,
इसमें मेरी निधियाँ सोयीं,
इसका नाम-निशान मिटाऊँ या मैं इस पर दीप जलाऊँ ?
क्या कंकड़-पत्थर चुन लाऊँ ?"[1]

इस प्रकार बच्चन की पीड़क अभिशप्त अनुभूतियाँ और विषाद व्यक्तिगत होते हुए भी समस्त मानव जाति का बन पड़ा है । कवि के समस्त काव्य में करुण रस की अजस्र धारा के दर्शन मिलते हैं । 'बंगाल का काल' कृति में कवि बंगवासियों की अगण्य मृत्यु से शोक संतप्त हो उठा । लगभग पचास हजार मनुष्यों के काल-कवलित हो जाने पर कवि का हृदय करुणा से भीग उठा और उसने 'बंगाल का काल' जैसी अनूठी कृति की रचना ऐसी ही शोक मनःस्थिति में की । 'खादी के फूल' और 'सूत की माला' काव्य कृतियों में कवि गाँधी जी की नृशंस हत्या पर दुखी हैं उसका हृदय चीत्कार कर रहा है। बापू की निर्मम हत्या पर लिखे गीत ऐसे प्रतीत होते हैं मानो प्रत्येक गीत में कवि का हृदय रुदन कर रहा है । इस प्रकार बच्चन जी करुण रस के श्रेष्ठ कवि हैं ।

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण ॥खण्ड-1॥ पृष्ठ-195

वीर रस :- वीर रस में उत्साह की प्रधानता रहती है । इसी उत्साह को लेकर बच्चन जी जगत में निरन्त संघर्षों पर विजय प्राप्ति का नाद लगाते हैं ओज उनके स्वर में, वाणी में प्रखरता है, राह में चलने की ललक है और गिर-गिरकर पुनः साहस के साथ उठकर निर्भीकता से चलने का उत्साह है-

"पथ पर पड़ी हुई चट्टानें,
दृढ़तर हैं वीरों की आनें,
पहले सी अब कठिन कहाँ है-ठोकर एक लगाओ ।
तन में ताकत हो तो आओ ।
राह रोक है खड़ा हिमालय,
यदि तुममें दम, यदि तुम निर्भय,
खिसक जायगा कुछ निश्चय है-घूँसा एक लगाओ ।
तन में ताकत हो तो आओ ।"[1]

'अग्निपथ[2] और 'प्रार्थना मत कर' [3] शीर्षक गीतों में कवि का यही जोशोखरोश मुखरित हुआ है । 'बंगाल का काल' काव्यकृति उत्साह की भावना जागृत करने के लिये ही कवि ने लिखी है । ताकि बंगवासी अपने अधिकारों की रक्षा हेतु क्रान्ति का नाद ऊँचा कर सकें । पेरिस के अकाल ग्रस्त नागरिकों के विद्रोह का चित्रण कर कवि ने बंगालवासियों को उत्साहित किया है -

"और बढ़े फिर उसी ओर को
भरे जोश में,
भरे रोष में,

1- बच्चन : आकुल अन्तर {खण्ड-1} पृष्ठ-295

2- बच्चन : एकान्त संगीत{खण्ड-1} पृष्ठ-246

3- बच्चन : वही पृष्ठ-254

जैसे सावन की बरसाती
नदी बाढ़ पर, जल-मदमाती,
हिल्लोलित कल्लोलित होती,
और ढहाती कूल किनारे ,
और बहाती तट-वृक्षों को,
बढ़ा पाट सी चौड़ी छाती
चली जा रही हो अबाध गति
अम्बधि से मिलने को ।"[1]

'बंगाल का काल' सामयिक और राष्ट्रीय भावना को लेकर लिखी गई कृति आज चिरस्मरणीय रहने वाली जागृत पुस्तिका है । कवि ने दुर्वलता, निर्जीवता, नपुंसकता और आत्महत्या से साहस, वीरत्व, पुरुषत्व और आत्म-बलिदान को श्रेष्ठ प्रतिपादित किया है । यही गुण इसका मूलमन्त्र है । अतः बच्चन के काव्य में वीर रस की कविताएं भी बहुतायत में मिलती हैं जो कवि के आन्तरिक उत्साह की द्योतक हैं । उनकी कविताओं में ओज की प्रधानता है, उत्साह का साम्राज्य है । पेरिस की क्षुधाग्रस्त अकाल पीड़ित जनता एक बाढ़ में उमगती हुई नदी के समान पूरे वेग से अपने राजा-रानी से विद्रोह करने के लिए बढ़े चले जा रहे हैं । अपनी वीरता से लड़-भिड़कर पेरिस की जनता ने अपना अधिकार प्राप्त किया । कवि बंगाल की जनता को प्रेरित कर रहा है कि भूख की ज्वाला सहने वाला पापी है, भगवान उन्हीं की मदद करता है जो अपनी मदद स्वयं करते हैं । निर्बल के बल राम नहीं होते, निर्बल के बल दो घूँसे हैं । कुत्ता भी अपने अधिकारों पर लड़ मरता है, फिर तुम लोग तो इन्सान हो । अपना बल, पराक्रम और बुद्धि को पहचानों ।

1- बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृष्ठ-435-436

असन्तोष करना सीखो, सन्तोष प्रगति के मार्ग में बाधक होता है क्रान्ति करो, असन्तोष का नारा लगाओ । कवि ने विद्रोह करने की प्रेरणा दी है–

"साथ बढ़ो औ' साथ रहो,
साथ रहो औ' साथ कहो,
साथ उठाओ एक निनाद
साथ उठाकर अपने हाथ,
अपनी रोटी, अपना राज,
इन्कलाब जिन्दाबाद !
अपनी रोटी अपना राजू –
इस नारे को अपना करके
धर्म युद्ध के लिये चल पड़ो ।"[1]

'दो चट्टानें' काव्यकृति में हनुमान जी ने सीता को विराट रूप दिखाया, हनुमान के कार्य में पूर्ण उत्साह की अभिव्यंजना । रावण का बाग उजाड़ना व राक्षसों का बध करना भी वीरता का द्योतक है–

"हनूमान ने सीता माँ को अपना रूप विराट दिखाया,
लंकेश्वर का बाग उजाड़ा,
रावण सुत अक्षय समेत बहु राक्षस मारे
छोड़ विभीषण का घर सारी लंका दाही ।"[2]

शत्रु को ललकारते हुए क्रान्तिकारी कवि की निम्न पंक्तियाँ सराहनीय हैं, जो वीर रस में सराबोर हैं, कवि के उत्साह में रंचमात्र की कमी नहीं है, पूर्ण उत्साह और जोश के साथ कवि गा उठता है–

"पच्छिम से घन अन्धकार ले उतर पड़ी है काली रात,
कहती मेरा राज अकण्टक होता जब तक नहीं प्रभात ।

1– बच्चन : बंगाल का काल § खण्ड–1 § पृष्ठ–441

2– बच्चन : दो चट्टाने §खण्ड– 3 § पृष्ठ–135

एक झोपड़ी में उठती है एक दिए की मद्धिम जोत-
अग्नि वंश की सब सन्तानें, सूरज हो चाहे खद्योत ।
दूर अभी किरणों की बेला, दूर अभी ऊषा का द्वार,
बाड़व दीपक शीश उठाता कँपता तम का पारावार ।
हर दीपक में द्रव विस्फोटक हर दीपक द्युति की ललकार,
हर बत्ती विद्रोह पताका, हर लौ विप्लव की हुँकार ।"[1]

बच्चन जी का दृढ़ विश्वास है कि एक दिन घायल हिन्दुस्तान उठेगा । साठ करोड़ जनता की अभिलाषा पूर्ण हुई और देश को गुलामी की जंजीरों से मुक्ति मिली । कवि आजाद हिन्दुस्तान का आह्वान कर रहा है -

"याद वे जिनकी जवानी खा गयी थी जेल की दीवार
याद, जिनकी गर्दनों ने फाँसियों से था किया खिलवार,
याद, जिनके रक्त से रंगी गयी संगीन की खर धार,
याद, जिनकी छातियों ने गोलियों की थी सही बौछार,
याद करते आज ये बलिदान, हमको दुख नहीं अभिमान,
है हमारी जीत आजादी, नहीं इंग्लैण्ड का वरदान,
कर रहा हूँ आज मैं आजाद हिन्दुस्तान का आह्वान ।"[2]

कवि स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये क्रान्ति की ज्वाला जलाता है और निरन्तर गति से वह अपने लक्ष्य पर अग्रसर होने के लिये कृत संकल्प है । देश के सैनिकों को वे ओजस्वी स्वर में सुई की नोंक के बराबर भूमि भी न त्यागने का संकल्प दे रहे हैं । उनका उत्साही स्वर मानों युद्धभूमि में शंखनाद कर रहा है-

"निहत्थ एक जंग तुम अभी लड़े, कृपाण अब निकालकर हुये खड़े
फतह तिरंग आज क्यों न फिर गड़े, जगत प्रसिद्ध शूर तुम सभी
जवान हिन्द के अड़िग रहो डटे, न जबतलक निशान शत्रु काहटे,

1- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृष्ठ-148

2- बच्चन : वही पृष्ठ-151

हजार शीश एक ठौर पर कटे, जमीन खन्त-रूण्ड-मुण्ड से परे,
तजो न सूचिकाग्र भूमि भाग भी ।"[1]

रौद्र रस :- रौद्र रस वीर रस का पोषक है, जिसे डा॰ भगवानदास तिवारी ने वीर रस का विकसनशील रस कहा है ।[2] मानव के रौद्र रूप का एक चित्र द्रष्टव्य है-

'वह व्यक्ति बना
जो खड़ा हो गया तनकर
पृथ्वी पर अपने पटक पाँव
डाले फूले वक्षस्थल पर माँसल भुजदण्डों का दबाव
जिसकी गर्दन में भरा गर्व
जिसके ललाट पर स्वाभिमान
दो दीर्घ नेत्र जिसके जैसे
दो अंगारे जाज्वल्यमान
जिसकी क्रोधातुर श्वासों से दोनों नथने हैं उठे फूल
जिसकी भौहों में, मूँछों में हैं नहीं बाल, उग उठे शूल
दृढ़ दन्त पंक्तियों में जकड़ा कोई ऐसा निश्चय प्रचण्ड
पड़ जाय वज्र भी अगर बीच हो जाए टूटकर खण्ड-खण्ड ।'[3]

बच्चन जी समाज की दुर्व्यवस्था पर क्षुब्ध हो जाते हैं । कवि की दृष्टि में मनुष्य का सम्मान समय पर होना चाहिये यह गलत है कि यदि संस्थाएं धन सम्पन्न हैं तो प्रतिभावान व्यक्तित्व को खरीदना चाहें । सार्त्र के नोबेल पुरस्कार ठुकरा देने पर कवि ने भी सहमति व्यक्त की, साथ ही संस्थाओं के प्रति आक्रोश व्यक्त किया-

- -

1- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड§2 पृष्ठ-159-160

2- डॉ॰ भगवान दास तिवारी : भूषण साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अनुशीलन पृष्ठ-944

3- बच्चन : आकुल-अन्तर §खण्ड-1§ पृष्ठ-292

'संस्थाएं' हों भले ही विश्व-वन्दित- । यह नहीं अधिकार
उनको । क्यों कि उनके पास धन-बल । जिस समय चाहे
दिखाएं मान-टुकड़ा । और प्रतिमा द्रुम हिलाती ।
दौड़ उनके पाँव चाटे ।'[1]

भयानक रस :- बच्चन जी ने भयानक रस की भयानकता को 'बंगाल का काल' में साकार रूप से चित्रित किया है । 1943 में पड़े बंगाल के अकाल के महा-विनाशकारी महाताण्डव को सजीव रूप में कवि ने लिपिबद्ध किया है । लगभग आधे करोड़ नर-नारी और निरीह बच्चे महाकाल के गाल में समा गये, जिससे कवि बंगवासियों की नपुंसक सहिष्णुता पर क्षुब्ध हो उठा । मृत्यु के ताण्डव का भयानक रूप दृष्टव्य है -

"भूख ही होती लो भोजन
मृत्यु अपना मुख शत योजन
खोलती
खाती और चबाती
मोद मनाती
मग्न हो मृत्यु नृत्य करती
नग्न हो मृत्यु नृत्य करती
देती परम तुष्टि की ताल
पड़ गया बंगाल में काल
भरी कंगालों से धरती
भरी कंकालों से धरती ।"[2]

एक स्थान पर कवि ने अपनी कल्पना एक प्रेत से की है । प्रेत को प्रतीक मानकर कवि ने अपने नीरस जीवन की एकरसता और हृदय की कठोरता का

1- बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृष्ठ-94

2- बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृष्ठ-417

परिचय दिया है -

"मुझको प्यार न करो, डरो ।
जो मैं था अब रहा कहाँ हूँ ?
प्रेत बना निज घूम रहा हूँ
बाहर ही से देख न आँखों पर विश्वास करो
मुर्दे साथ चुके सो मेरे,
देकर जड़ बाँहों के फेरे
अपने बाहुपाश में मुझको सोच-विचार भरो,
मुझको प्यार न करो, डरो ।"[1]

<u>वीभत्स रस</u> :- कवि ने वीभत्स रस के भी अनेक चित्र खीचें हैं जो अपनी रसात्मकता में बहुत ही सफल सिद्ध होते हैं । हिटलर की क्रूर पाशविक दानवता को वीभत्स और घिनौने रूप में चित्रित किया है -"नाकों में बरबस घुस जाने वाली । एक चिरायंध फैल गयी है टेबिल भर पर । और प्रविष्ट हुई जाती है प्राणों में भी । दुर्वह, दुःसह । दम घुटता है । क्या कोई नर-माँस का लोथड़ा भून आग में आगे प्रस्तुत किया गया है ।"[2]

आजादी के चौदह वर्ष बीत जाने पर भी देश का कोई विकास नहीं है, इस तथ्य को कवि ने वीभत्स रूप में चित्रित किया है, पंक्तियाँ प्रतीकारात्म हैं- "और वह रावण कि जिसके पाप की मिति नहीं । अपने अनुचरों के वंशजों के संग । खुलकर खेलता, भोले-भालों का रक्त पीता । अस्थियाँ उनकी पड़ी चीत्कारतीं । कोई न लेकिन कान करता ।"[3]

1- बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृष्ठ-255

2- बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-3§ पृष्ठ-307

3- बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-528

कवि ने दूषित और विषाक्त वातावरण को चित्रित किया है । दीपक-पतिंगे की प्रेम कहानी द्वारा कवि ने उत्सर्ग की घिनौनी तस्वीर निम्न प्रकार से चित्रित की है- "लाट के नीचे बड़ी तादाद में । लाशें पड़ी हैं । रात के बलि पन्थियों की । ज्योति के अनुरागियों की । प्रेम के बलिदानियों की । जो कि अपनी श्वास । अर्पित इष्ट को कर । मांस पंछी को परोसे ।"[1]

अद्भुत रस :- 'दो चट्टानें' कृति में कवि ने अद्भुत रस का अद्भुत ही सामंजस्य किया है । सिसिफस के मृत्यु को बन्दी बनाने पर मिले दण्ड में अद्भुत रस का ही सम्मिश्रण है - "और जीवन के सहज औ' स्वस्थ क्रम को । तोड़ने का दण्ड । सिसिफस को मिला । प्लूटो तथा उसके त्रिगुण निर्णायकों से । एक अनगढ़ संगमरमर की । बड़ी चट्टान को वह । ठेलकर ले जाय । गिरि के श्रृंग धुर पर ।और जब पहुँचे वहाँ पर । लुढ़कती नीचे गिरे वह । और सिसिफस फिर उसे ले जाय ऊपर । और निरवधि काल तक । अविरत अहर्निश क्रम चले यह ।"[2]

लक्ष्मण के शक्ति लगने पर हनुमान का द्रोणाचल को समूल उखाड़ लाना भी आश्चर्य और विस्मय का प्रतीक है-

"एक रात में हनूमान । द्रोणाचल को जड़ से उखाड़कर । उत्तर से दक्षिण को लाये । -----संजीवनी का पर्वत तब से । एक हाथ पर नित्य उठाये । उसे संतुलित किये गदा से ।"[3]

- -

1- बच्चन : त्रिभंगिमा (खण्ड-2) पृष्ठ-445

2- बच्चन : दो चट्टानें (खण्ड-3) पृष्ठ-120

3- बच्चन : वही पृष्ठ-136

हास्य रस :- यद्यपि बच्चन जी जीवन के गीत गाने वाले और जीवन की यथार्थता से जूझने वाले कवि हैं उन्हें हास्य से कोई प्रयोजन नहीं, फिर भी यत्र-तत्र कुछ कविताएं हास्य का पुट संजोए हुए हैं- "मैंने छत पर पहुँचकर । सीढ़ी को उपेक्षा से देखा । उसने कहा । अच्छा उतरना ।"[1]

'दो नंगे' कविता का भाव हँसी में डूबा होने पर भी कहीं गहरे पर मन की सोच को विवश करता है । हास्य के पुट के साथ-साथ बात में बहुत गम्भीरता है- "पूछते हो । तुम उसके साथ । नंगे नहाते हो । क्या मजा पाते हो ? । मजा यही पाता हूँ । कि वह मेरी मैल छुड़ाता है । मैं उसकी मैल छुड़ाता हूँ ।"[2]

रोआब गाँठने वाले तैराकों पर कवि ने व्यंग्य किया है । पंक्तियाँ कुछ ऐसी बन पड़ी हैं कि बरबस ही हँसी आ जाती है - "पानी तो अब छिछला है । पर तैराक अपना रोआब । जमाये हुए हैं । कि छिछले में तैरना ज्यादा मुश्किल काम है । और इनके बाद । आने वाले तैराक । शायद यह घोषित करेंगे। कि खुश्की में तैरना । सबसे मुश्किल ।"[3]

शान्त रस :- निर्वेद या राम दोनों में से कोई भी स्थायी बन सकता है । बच्चन जी जीवन के कवि हैं - जहाँ पर अशान्ति की दौड़ धूप है, संघर्षों का मेला है और दुखों के झंझावात का प्रवाह है किन्तु फिर भी वे सूक्ष्म द्रष्टा हैं और जब कभी धर्म, अध्यात्म और दर्शन के क्षेत्र में प्रविष्ट होते हैं तो शान्त

- -

1- बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-3§ पृष्ठ-359

2- बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृष्ठ-237

3- बच्चन : वही पृष्ठ-251

रस की अजस्र धारा ही फूट पड़ती है । हनुमान जी की रामचन्द्र जी के प्रति भक्ति-भावना है । हनुमान जी की भक्ति भावना द्रष्टव्य है -

"कथा राम की जहाँ कहीं भी होती है
वे छद्मवेश, अपरूप धारकर
सुनने जाते,
और जहाँ उनकी सेवा की चर्चा आती,
अश्रु बहाते-
हाय, अभी तक
सेवक-सेव्य अलग ही
एक नहीं हो पाये ।"[1]

शान्त रस में डूबा हुआ समर्पण का एक भाव द्रष्टव्य है-

"हनूमान ने देख राम को
कल्प-कल्प के अपने स्वामी को पहचाना ।
एक दृष्टि में
एक ओर से हुआ समर्पण
कर्म-वचन-मन पूर्ण समर्पण
एक ओर से शरण में ग्रहण ।
भक्त और भगवान मिल गये,
पम्पासर में सहसा शत-शत कमल खिल गये ।"[2]

रात्रि के निस्तब्ध वातावरण में सर्वत्र मौन का साम्राज्य देखकर कवि गीत गाकर सोई हुई शान्त रजनी को जगाना चाहता है-

"मौन है आकाश, धरती मौन सारी,
नींद की छायी हुई सब पर खुमारी,
रात चुप है कुछ विगत सुधियाँ संजोती,
आज आ गाएं, जगाएं रात सोती ।"[3]

1- बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृष्ठ-129

2- बच्चन : वही पृष्ठ-134

3- बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-32

अतः बच्चन के काव्य में शान्त-रस की भावना भी देखने को मिलती है । यह बच्चन की विशेषता है कि वे जिस रस का चित्रण करते हैं उसको साकार रूप में उपस्थित कर देते हैं ।

वात्सल्य रस :- हिन्दी साहित्य के आरम्भ से ही वात्सल्य का वर्णन किसी न किसी रूप में प्राप्त होता है । सूरदास तो वात्सल्य रस के सिरमौर हैं, उन्होंने कृष्ण की बाल-लीलाओं का जो चरम उत्कर्ष प्रस्तुत किया है, वह स्मरणीय है । वात्सल्य के भी दो भेद-संयोग वात्सल्य और वियोग वात्सल्य हैं । यद्यपि बच्चन जी का वात्सल्य से कोई विशेष लगाव नहीं है, किन्तु उन्होंने एकाध दृश्य इसके भी खींचे हैं । गाँधी जी के विलायत प्रस्थान पर भारत माता की विदा शीर्षक कविता में गाँधी जी के प्रति भारत माता का हृदय वात्सल्य से कूट-कूटकर भरा हुआ है और वह पुत्र से बिछुड़ने की स्मृति मात्र से दुखी हैं -

> "सुना है जब से मेरा लाल विलायत जाने को तैयार,
> सिकुड़ता जाता है हृतपात्र, उमड़ती आती है जल धार ।
> हृदय अथवा मेरा सुकुमार सुकोमल विरह-वहिन की याद,
> से हुआ जाता तरलीभूत, नयन तक लाता नीर-विषाद ।"[1]

भारतमाता विदाई के क्षणों में उसी प्रकार द्रवित है जिस प्रकार एक माँ अपने पुत्र की विदाई में द्रवित हो उठती है । पुत्र की यात्रा बाधा रहित हो इसके लिये भारतमाता अनेक मंगल कामनायें करती है तथा शुभ-शकुन-सूचक प्रतीकों की अभिलाषा रखती है -

- -

1- बच्चन : प्रारम्भिक रचनायें भाग दो §खण्ड-3§ पृष्ठ-513

"पोत पर होने को आरूढ़ चले जब मेरा 'मोहन' लाल,
शकुन मंगल-सूचक सब ओर दिखयी पड़ते हों उस काल ।
सिन्धु से भरकर घर में नीर सुहागिन आती हों उस काल,
चला आता हो माली एक लाल फूलों की लेकर माल ।
पक्षियाँ श्यामा कलकण्ठ पड़े दिखलायी बायीं ओर,
सामने से आते हों गाय, बैल, बछड़ों के सुन्दर ढ़ोर ।
चबाते आते हों हर एक सिन्धु-की हरी-हरी सी घास,
किनारे फुदक रही हों मीन, पकड़ जाने का जिन्हें न त्रास ।"[1]

कवि का हृदय भारतीय संस्कृति का स्पष्ट दर्पण है । हमारे भारतीय समाज में उपर्युक्त सभी उपमान शुभ-सूचक माने जाते हैं । बच्चन जी सभी सगुन-सूचक प्रतीकों को शुभ मानते हैं, यह कवि का भारतीय संस्कृति के प्रति एक अनन्य अनुराग है, जो वात्सल्य के माध्यम से टपक पड़ा है ।

इसी प्रकार गाँधी जी के जन्मदिन पर भारतमाता अपनी बधाई को दूरस्थ गाँधी जी तक प्रेषित करती हैं । सम्पूर्ण प्रकृति से भारतमाता हर्षोल्लास के गीत गाने के लिये संदेश देती हैं, क्यों कि आज दो अक्टूबर है, उसके पुत्र मोहन का जन्मदिन । माता का मातृत्व छलका पड़ रहा है-

'पकड़ बिठलाती अपनी गोद पास यदि होते मेरे लाल,
फेरती सिर आशिष के हाथ चूमती तेरे दोनों गाल ।'[2]

इसी प्रकार कवि बच्चन ने अपनी नातिन चिरंजीव श्वेता की वर्षगाँठ पर कुछ कविताओं का संकलन भेंटस्वरूप आशीष व प्यार के साथ दिया था । इन कविताओं में बच्चों के मनोरंजन के लिये पक्षियों और जानवरों की सुन्दर-सुन्दर कविताएं हैं, जो बालसुलभ मन को अनचाहे में ही आकृष्ट कर लेती हैं ।

- -

1- बच्चन : प्रारम्भिक रचनायें भाग दो {खण्ड-3} पृष्ठ-514

2- बच्चन : वही पृष्ठ-519

यहाँ भी कवि का वात्सल्य प्रेम ही परिलक्षित होता है, जो किसी न किसी रूप में प्रकट हो जाता है । बच्चों की खुशी के लिये मानों कविताओं में कवि भी बच्चा बन गया है ।

<u>भक्ति रस :-</u> बच्चन जी के काव्य में भक्ति-भाव के अनेक भावुक चित्र दृष्टिगत होते हैं । 'दो चट्टानें' कविता हनुमान के प्रति भक्ति भावना को ही दर्शाती है- "यही देव है । जिसे हमारा । श्रद्धा विष्य-समर्पित हो अब । इसी देव को नमन करो सब । वहन करेगा यही तुम्हारे, मेरे, युग का भोग-क्षेम ।"[1]

'मातृमन्दिर' कविता का भाव भी भक्ति-रस में डूबा हुआ है- "माँ तेरे विशाल मन्दिर में । कोई धन इच्छा से आता । कोई यश पर आँख लगाता । कोई सुख को ध्येय बनाता मैं निष्काम भाव से आऊँ । माँ तेरे विशाल मन्दिर में । कोई क्षण दो क्षण को आता । कोई घड़ियाँ चार बिताता । कोई दो दिन मन बहलाता, पर मैं अटल समाधि लगाऊँ ।"[2] 'मन्दिर का दिया'[3] कविता में कवि की भक्ति साकार हो गयी है ।

इस प्रकार बच्चन जी के काव्य में सभी रसों की अजस्र धारा बहती है । करुण और श्रृंगार बच्चन के काव्य में मुख्य रूप से प्रयुक्त हैं । डॉ॰ इन्दुबाला दीवान ने उन्हें रसवादी सिद्ध करते हुए लिखा है- "उनका पद्यबंध सहज सरल है । रचना चाहे छन्दबद्ध हो या मुक्तक, बच्चन का प्रयास रसवादी रहा है।"[4]

1- बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृष्ठ-137

2- बच्चन : प्रारम्भिक रचनायें भाग दो §खण्ड-3§ पृष्ठ-250-251

3- बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृष्ठ-183

4- डॉ॰ इन्दुबाला दीवान : बच्चन:अनुभूति और अभिव्यक्ति पृष्ठ-79

बच्चन एक रससिद्ध कवि हैं । यही कारण है कि उनके काव्य के अनुशीलन से पाठक को शीघ्र रसाभास होता है और वह तन्मयता से बच्चन के काव्य में डूब जाता है ।

अन्य स्फुटिक भावों का विश्लेषण

मानव प्रेम :- मानव के प्रति बच्चन जी का अपना दृष्टिकोण है- "मैंने मानव के हृदय को देखा है । मेरी कविता के विषय हैं मनुष्य के दुख, सुख, शोक, विषाद, हर्ष, विमर्ष, संघर्ष, उसके मन-प्राणों का मन्थन । अभिनेता मेरी कविता के मंच का केवल इन्सान है- इन्सा नियत है-उसकी नियत भी नियति भी ।"[1] समस्त सृष्टि में बच्चन जी के लिये मनुष्य से बढ़कर कोई नहीं है, यही कारण है कि 'मानव' बच्चन के काव्य का मुख्य विषय है ।

मनुष्य का जन्म लेने के लिये तो देवता भी तरसा करते हैं और टकटकी लगाकर निर्निमिष नेत्रों से मनुष्य के क्रिया-कलापों का निरीक्षण करते हैं । ऐसे ही भावों को कवि ने वाणी दी है-

"चली सदा से जो आयी है मानव की गर्वीली थाती,
तरसा करती जिसको पाने को देवों की वन्ध्या छाती,
लेती है अवतार अमरता जिसके अन्दर से धरती पर
एक पीर ऐसी अपनाऊँ, भूमि लगे स्वर्गों से प्यारी ।
एक गीत ऐसा मैं गाऊँ, भूमि लगे स्वर्गों से प्यारी ।"[2]

कवि ने मनुष्य में ही भगवान के दर्शन कर लिये हैं । नर में नारायण का निवास मानना भारतीय संस्कृति की निजी विशेषता है । ऐसे ही भाव

1- बच्चन : सतरंगिनी (खण्ड-1) अपने पाठकों से पृष्ठ-315

2- बच्चन : आरती और अंगारे (खण्ड-2) पृष्ठ-223

कवि की कविता में भी व्यक्त हुए हैं -

"यह आदर्श प्रेम का मान,
कभी न चल सकता था उस पर
मैं ईश्वर से स्नेह लगाकर,
इस कारण मनुष्य में मैंने ढूँढ लिया भगवान ।"[1]

बच्चन का मानना है कि मानवता की उपेक्षा करके कोई भी महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं किया जा सकता ।[2] 'आरती और अंगारे' कृति कवि के हृदयस्थ मानवीय प्रेम को ही दर्शाती है । कवि का हृदय मानव-प्रेम से कूट-कूट कर भरा है यही कारण है कि वह आज के खिन्न, खण्डित और विश्रंखल मानव का उत्थान कर मानवता की सेवा की कामना करता है । -

"आज मानव-मनस,
इतना खिन्न, खण्डित, विश्रंखल है
बाँध यदि उसको सकूँ कुछ देर को मैं
किसी थिर, सन्तुलित, निष्ठायुत समर्पित एक से तो
मनुजता की कम नहीं सेवा करूँगा ।"[3]

मानवता के अमर गायक बच्चन जी को मनुष्य हर स्वरूप में पवित्र लगता है- "मनुष्य विश्व प्रेम में पगा हुआ, मनुष्य आत्म युद्ध में लगा हुआ, हरेक प्रण प्रयास में ठगा हुआ, मनुष्य हर स्वरूप में पवित्र है।"[4]

<u>भ्रातृ - प्रेम :-</u> बच्चन जी एकाकी जीवन जीने के आदी नहीं थे, उन्हें सामाजिक और पारिवारिक प्रेम में ही सन्तोष मिलता है । उनका हृदय

- -

1- बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं भागएक §खण्ड-3§ पृष्ठ-497
2- बच्चन : साहित्य संदेह-बच्चन विशेषांक, नव, दिसं, 1947 पृष्ठ-231
3- बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृष्ठ-107
4- बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-78

मानवीय राग प्रेम से भरा पूरा है । यही कारण है कि अपने अध्ययन और अध्यापन के दिनों में कवि ने अनेक मित्रों का साथ प्राप्त किया और उनसे प्रगाढ़ मैत्री के सम्बन्ध स्थापित किये । कवि ने अपनी अनेक कृतियों को अपने मित्रों को ही समर्पित किया है, यह उनके सख्य और भ्रातृ भाव को ही पोषित करती है ।

बच्चन जी के लघु भ्राता शालिग्राम का असमय ही निधन हो गया, जिससे कवि का हृदय हाहाकार कर उठा, क्यों कि कवि ने भाई को भाई न समझकर दाहिनी भुजा समझा था, जिस प्रकार से मनुष्य की एक भुजा टूट जाने पर गहन पीड़ा होती है, वैसी ही पीड़ा को कवि ने भाई की मृत्यु पर झेला । अपनी वेदना को कवि ने निम्न पंक्तियों में वाणी प्रदान की है, जो उनके अटूट भ्रातृ-प्रेम की परिचायक हैं-

"हाय, शालिग्राम, तुम भाई न थे, तुम दाहिनी थे बाँह मेरी
था कहा तुमने कि, बीती को भुलाना, आँख से आँसू बहाते,
वे अलग होते नहीं जो एक माँ की कोख से हैं जन्म पाते,
हम लड़े पर वक्त पड़ने पर हमेशा साथ हम थे, एक हम थे,
हाय, शालिग्राम, तुम भाई न थे, तुम दाहिनी थे बाँह मेरी ।"[1]

<u>मातृ भूमि के प्रति प्रेम :-</u> कवि को अपनी जन्मस्थली के कण-कण से अगाध स्नेह है । अपने जन्म स्थान इलाहाबाद में बचपन में देखे हुए भिखारी तक पर कवि ने कविता लिखी है । अपने माता-पिता, दादी-दादा, बुआ, भाई-बहिन सभी का कवि ने गुणगान 'आरती और अंगारे' काव्यकृति में किया है।

1- बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृष्ठ-217

विकास के प्रत्येक आयाम का सेहरा कवि ने अपनी जन्मस्थली इलाहाबाद के सिर पर बाँधा है -

"और यहीं के मिट्टी-पानी से विरचित है मेरी काया,
अरे पूर्वजो, किस तप-बल से था तुमने वह पुण्य कमाया,
ऊँचा से ऊँचा भी अन्तिम बार यहाँ रजकण बन आता ?
भारत की धरती के ऊपर चल आयी यह रीति सगर से ।
गाता हूँ अपनी लय-भाषा सीख इलाहाबाद नगर से ।
भारद्वाज मुनि जहाँ बसे थे उसी जगह पर आते-जाते
मेरी आधी उम्र चुकी है लिखते पढ़ते और पढ़ाते
जिस बोली में गंगा-जमुना आपस में बोला करती हैं,
जाड़ा, गर्मी, बरसातों में जिस गति से डोला करती है,
नकल उसी की मैंने की है अपने शब्द, पदों छन्दों में
मेरी स्वर लहरी आयी है गंग-जमुन की लहर अमर से
गाता हूँ अपनी लय-भाषा सीख इलाहाबाद नगर से ।"[1]

<u>विश्व-प्रेम :-</u> कवि अपनी जन्मस्थली अपने देश के साथ-साथ विश्व प्रेम में भी पगा हुआ है । विश्व के अन्य राष्ट्रों के प्रति भी कवि के हृदय में प्रेम व ऐक्य की भावना है । 'भारत-नेपाल-मैत्री संगीत' कविता में कवि के ऐसे ही हृदयोद्गार मुखरित हुए हैं । कवि आशंका, भय, भेद को निकालकर शान्ति और प्रेम से जीने का संकेत देता है । भारत-नेपाल की मित्रता का कवि सच्चे हृदय से अभिनन्दन करता है -

"एक साथ जय हिन्द कहें हम, एक साथ हम जय नेपाल,
एक दूसरे को पहचाने आज परस्पर हम जयमाल,
एक दूसरे को हम भेंटे फैला अपने बाहु विशाल,
अपने मानस के अन्दर से आशंका, भय, भेद निकाल ।

1- बच्चन : आरती और अंगारे (खण्ड-2) पृष्ठ-22।

खल-खोटों का छल पहचानें, हिल-मिल रहने का बल जानें,
एक दूसरे को सम्माने,
शान्ति-प्रेम से जीने, जीने देने के विश्वासी हम ।
जग के सबसे ऊँचे पर्वत की छाया के वासी हम ।"[1]

बच्चन जी को युद्ध की पिपासा रखने वाले विश्व-विजय की कामना करने वाले राष्ट्रो से बहुत घृणा है । कवि का हृदय करुणा विगलित होने लगता है, क्यों कि जिस पृथ्वी पर सुनहली फसलें होनी चाहिये, आज वहाँ अणु-परमाणु बम तथा संगीनों की फसलें उगाई जा रही है । कवि समस्त विश्व में प्रेम-शान्ति और ऐक्य की स्थापना चाहता है । किन्तु इसके विपरीत रक्त पिपासु राष्ट्रों की घृणित दुर्भावना को देखकर कवि का हृदय दुखी हो उठता है-

"पृथ्वी क्या इसलिए बनी थी,
विश्व-विजय की प्यास जगाये,
सेनाओं की बाढ़ उठाये,
हरा शस्य उपजाना तजकर,
संगीनों की फसल उगाये,
शान्तियुक्त श्रम-निरत-निरन्तर मानव के दल को डरपाये ।"[2]

कवि ने अनेक कवितायें विदेशी वस्तुओं, व्यक्तियों और स्थानों के बारे में लिखी हैं जो 'उभरते प्रतिमानों के रूप' में संग्रहीत हैं । ये सभी कविताएं कवि के विश्व प्रेम की भावना को उजागड़ करती हैं । कवि की 'चौसठ रूसी कविताएं' भी इसी प्रेम का प्रतीक हैं । कवि ने रूस के अनेकानेक प्रसिद्ध कवियों की प्रसिद्ध चौंसठ कविताओं का हिन्दी में अनुवाद किया है । 'भाषा अपनी भाव पराये' कवि की अनूदित कृति ही है ।

- -

1- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृष्ठ-172

2- बच्चन : वही पृष्ठ-144

<u>प्रकृति प्रेम</u> :- कवि के प्रकृति-चित्रण पर सविस्तार चर्चा मैं अगले अध्याय में करूँगी, यहाँ अति सूक्ष्म में बच्चन जी के प्रकृति प्रेम पर प्रकाश डाल रही हूँ । यूँ तो कवि ने अनेक स्थानों पर अपने आपको प्रकृति का प्रेमी या सफल चितेरा नहीं कहा है । परन्तु कवि की दृष्टि प्रायः सौन्दर्यप्रिय होती है और वह जहाँ कहीं भी प्रकृति की मनोरम झाँकी देखता है अपनी कलम बरबस उठा लेता है । आलम्बन के रूप में प्रकृति की प्रातः बेला का सुन्दर चित्र दृष्टव्य है -

'शुरू हुआ उजियाला होना ।
हटता जाता है नभ से तम,
संख्या तारों की होती कम,
उषा झाँकती उठा क्षितिज से बादल की चादर का कोना ।
शुरू हुआ उजियाला होना ।
ओस कणों से निर्मल-निर्मल,
उज्ज्वल-उज्ज्वल, शीतल-शीतल,
शुरू किया प्रातः समीर ने तरू-पल्लव-तृण का मुँह धोना ।
शुरू हुआ उजियाला होना ।'[1]

प्रकृति चित्रण के सुन्दर-सुन्दर चित्र कवि ने 'मिलन-यामिनी' के अन्तर्गत खींचे हैं जो बहुत ही मोहक और रमणीय हैं । प्रकृति प्रेम का एक उदाहरण दृष्टव्य है-

"किरण छिपी तड़ाग अन्तराल में,
सिमट गयी सरोजिनी मृणाल में,
अगीत हो गया, सभीत भृंगदल,
प्रणय सजग हुआ, हृदय हुए विकल ।
कुसुम-कली सुगन्ध सेज पर सजी,
मधुर-मधुर सुवर्ण पैंजनी बजी,

1- बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृष्ठ-191

पुलक प्रफुल्ल आज कामना सकल,
प्रणय सफल हुआ, हृदय मिले पिघल ।
किरण खिली, विहँस पड़ी मृणालिनी,
ध्वनित हुई विमुक्त भृंग-रागिनी
हिली सकुच विलास बाहु-वासिनी,
सटे अधर हटे, हुए नयन सजल ।"[1]

<u>श्रद्धापरक कविताएं :-</u> बच्चन जी ने अपनी काव्यकृति 'आरती और अंगारे' में महाकवियों, कलाकारों, चित्रकारों और शिल्पकारों के साथ-साथ अपने पूर्वजों का कवि ने सम्मान किया है । बच्चन जी की कुछ कविताएं ऐसी हैं जिन्हें हृदय के उदान्त भाव श्रद्धा की कोटि में परिगणित किया जा सकता है । महाकवि तुलसीदास के प्रति कवि ने अपनी श्रद्धांजलि व्यक्त करते हुए उनके चरणों में नमन किया है-

"बारम्बार प्रणाम तुम्हे रामचरित के अमित पुजारी ।
उचित यही था, प्रथम तुम्हारे चरणों में मैं शीश नवाता,
पर न दिया वह अवसर तुमने, हे भारति के भाग्य-विधाता,
तुमने अपने राम-सिया में, रसिया सब जग देख लिया था,
कितने नयन विशाल तुम्हारे, कितना गहिर-गंभीर हिया था ।"[2]

मीराबाई के प्रति कवि की श्रद्धा दर्शनीय है-

"सूली ऊपर सेज सजाकर तू अपने पी के संग सोई,
मिलन-घड़ी में गाया तूने जो फिर क्या गायेगा कोई,
गाना दूर अभी तो तुझसे मुझे सीखना है तुतलाना,
शूल-फूल, कलि, ओस, दूब-दल तक सीमित मेरी नादानी,
मीरा मेरे मन का मन्दिर करता है तेरी अगवानी ।"[3]

- -

1- बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-74

2- बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृष्ठ-198

3- बच्चन : वही पृष्ठ-200

कवि ने मैथिलीशरण को हिन्दी के पितामह के रूप में प्रस्तुत किया है- जिन्होंने हिन्दी भाषा को सजाया, सँवारा और पूर्ण वैभव प्रदान किया । हिन्दी के हितैषी मैथिलीशरण गुप्त के प्रति कवि ऋणी है, क्यों कि खड़ी बोली हिन्दी को गौरवपूर्ण स्थान दिलाने के लिए गुप्त जी ने आजीवन सतत् साधना की । गुप्त जी के प्रति श्रद्धानत कवि की निम्नांकित पंक्तियाँ बहुत ही भाव-पूर्ण बन पड़ी हैं-

"मैंथिलीशरण थे हिन्दी के हित आये ।
पड़ी हुई थी एक बालिका अनचाही असहायी,
अल्पवयस की, देख विवश ही कवि-छाती भर आयी,
मिथिलापति मैंथिलि, कण्व मुनि शकुन्तला को जैसे,
वैसे ही उसको गोद उठा घर लाये ।
मैंथिलीशरण थे हिन्दी के हित आये ।
तुतलाने वाली को क्रमशः गाना गीत सिखाया,
औ' घुटनों चलने वाली को नर्तन-कुशल बनाया,
आजीवन साधना उन्हीं की आज खड़ी बोली जो
युग, देश-प्रकृति, संस्कृति के साज सजाये ।
मैंथिलीशरण थे हिन्दी के हित आये ।"[1]

गाँधी जी की मृत्यु पर भी कवि ने भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित की है, जो दो कृतियों में पूर्णता प्राप्त करती है । 'खादी के फूल' और 'सूत की माला' कवि की श्रद्धापरक कविताएं हैं ।

<u>दर्शन की भावना</u> :- बच्चन की प्रारंभिक कृतियों में दार्शनिक भावना का समावेश देखा जाता है । चिन्तनशील होने के कारण कवि ने जीवन के रहस्यों व सत्यों पर गूढ़ दृष्टिपात किया है । अद्वैतवादी भावना अनेक स्थलों पर

1- बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृष्ठ-202

प्रस्फुटित हुई है । यथा–

"ईश-जीव में भेद नहीं है,
जहाँ जीव है ईश वहीं है,
'प्रेम' 'प्राण' तुम दोनों मेरी-शंकर वचन प्रमाण-"[1]

मधुशाला में इस अद्वैतवादी भावना के दर्शन अनेक स्थानों पर होते हैं–

"इस उधेड़बुन में ही मेरा सारा जीवन बीत गया–
मैं मधुशाला के अन्दर या मेरे अन्दर मधुशाला ।"[2]

ईश्वर सर्वव्यापक है, इस सिद्धान्त की पुष्टि करते हुए बच्चन जी ने कहा है –

"पथिक बना मैं घूम रहा हूँ सभी जगह मिलती हाला ।"[3]

कवि का भावुक मन साकार-निराकार की भावना में डूबा हुआ आश्चर्य-चकित है और वह विस्मित होकर वायु से अनायास कह उठता है–

"साकार वृक्ष से निराकार
तुम निकल हुई कैसे बयार ?
सब ओर तुम्हारा अब प्रसार
इस नभ-मण्डल के आर-पार ।"[4]

बच्चन जी ने 'प्याले' को जीवन का प्रतीक मानकर उसकी क्षणभंगुर विनाशशील नश्वरता के द्वारा मानव-जीवन की क्षणिक सत्ता को प्रतिपादित किया है । कवि के अनुसार इस संसार में सभी मरणशील व विनाशशील हैं, एक मृत्यु ही अन्तिम और शाश्वत सत्य है, बाकी सभी कुछ असत्य है, धोखा है,

- -

1- बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं भाग एक §खण्ड-3§ पृष्ठ-47।

2- बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू01।9 पृष्ठ-62

3- बच्चन : वही रू047 पृष्ठ-5।

4- बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं भाग दो §खण्ड-3§ पृष्ठ-54।

दृष्टि भ्रम है । यथा-

"मिट्टी का तन, मस्ती का मन, क्षणभर जीवन-मेरा परिचय ।"[1]

बच्चन जी ने मनुष्य की जिजीविषा को भी वाणी प्रदान की है । यह तो प्रत्येक मनुष्य जानता है कि उसका जीवन सीमित व क्षणिक है, विनाशशील है, किन्तु फिर भी मनुष्य के हृदय में अमर रहने की अमिट लालसा हर समय करवटें बदलती रहती है-

"है ज्ञात हमें नश्वर जीवन,
नश्वर इस जगती का क्षण-क्षण,
है किन्तु अमरता की आशा
करती रहती उर में क्रन्दन ।"[2]

कवि बार-बार मनुष्य को सचेत कर रहा है-

"तन की क्षणभंगुर नौका चढ़कर,
है यात्री, तू आया ।"[3]

इस प्रकार बच्चन के काव्य में दर्शन के साथ-साथ रहस्यवादी तथा आध्यात्मिक भावनाएं भी प्रचुर मात्रा में सर्वत्र व्याप्त हैं जिनका उल्लेख हम अगले अध्याय में करेंगे, किन्तु यहाँ कवि की असीमित भाव राशि से प्रतीक रूप में कुछ भाव-सुमनों का चयन कर उनके रसात्मक बोध एवं उनकी गुरु-गम्भीरता का विवेचन करने का प्रयास मैंने किया है ।

0 0 0 0 0 0 0
0 0 0 0 0
0 0 0
0

1- बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृष्ठ-95

2- बच्चन : वही पृष्ठ-88

3- बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृष्ठ-127

अध्याय – तीन

कल्पना तत्त्व की दृष्टि से "बच्चन" कृतित्त्व की समीक्षा

कल्पना - तत्त्व

सौन्दर्यशास्त्र में कल्पना का प्रमुख स्थान है और महत्त्व भी अत्यधिक है । कल्पना अंग्रेजी शब्द 'इमेजिनेशन का पर्यायवाची है जिसका शाब्दिक अर्थ है 'सृष्टि करना' । कल्पना के विषय में सौन्दर्यशास्त्र के अतिरिक्त मनोविज्ञान में भी पर्याप्त चिन्तन मनन किया गया है । कल्पना कवि कलाकार की सृजन शक्ति का नाम है । जिसके बिना नवनिर्माण कर सकना संभव नहीं है । भारतीय साहित्यशास्त्र में काव्य कृतियों के अन्तर्गत जिस प्रतिभा या शक्ति का विवेचन दीर्घकाल तक हुआ है वह कल्पना ही है । पं. बलदेव उपाध्याय तथा अन्य मनीषियों की यह स्पष्ट धारणा है कि पाश्चात्य आलोचना का 'इमेजिनेशन' भारतीय साहित्यशास्त्र की प्रतिभा ही है ।[1]

काव्य की सृजन शक्ति के रूप में भारतीय काव्यशास्त्र में प्रतिभा प्रतिष्ठित है और पाश्चात्य चिन्तन परम्परा में कल्पना । प्रतिभा और कल्पना में अन्तर स्पष्ट करते हुए डॉ. निर्मला जैन ने निष्कर्ष दिया है कि- प्रतिभा में भावपक्ष प्रधान है और कल्पना में बोध पक्ष प्रधान है । इसके अतिरिक्त पश्चिम में कल्पना जिस नूतन सृष्टिविधायिनी शक्ति के रूप में निरूपित की गई है, वह भारतीय प्रतिभा की अपूर्व सृष्टि की तुलना में नवीनता के प्रति अधिक आग्रहशील है । कल्पना और प्रतिभा का यह अन्तर वस्तुतः आधुनिक रोमान्टिक और प्राचीन क्लासिकी दृष्टि का है ।[2]

1- बलदेव उपाध्याय : भारतीय साहित्यशास्त्र, प्रथम खण्ड पृष्ठ-423

2- डॉ. निर्मला जैन : रस सिद्धान्त और सौन्दर्यशास्त्र पृष्ठ-415

पाश्चात्य काव्यशास्त्र में कल्पना पर विचार करने वाले विचारकों की सुदीर्घ परम्परा है । इनके एडीसन कॉलरिज, वर्डसवर्थ, शैली, कीट्स आदि के नाम प्रमुख हैं । एडीसन ने अपने कल्पना से बंधी विचारों में उसके ऐन्द्रिय पक्ष, और विशेषकर चाक्षुष, पर बल देकर आगे अनने वाले चिन्तकों को चिन्तन की एक राह दिखलायी । कॉलरिज की कल्पना लोकोत्तर निर्माणात्मक शक्ति की पर्याय है । यही कल्पना काव्य में सौन्दर्य की सृष्टि करती है । कॉलरिज का कथन है कि- 'आनन्द काव्य में कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं है, वह सौन्दर्य पर आश्रित है और सौन्दर्य कल्पाशक्ति पर आश्रित है ।'[1]

कॉलरिज ने दृष्टा और दृश्य के विरोधी गुणों में सन्तुलन स्थापित करने का कार्य कल्पना माना है ।[2]

कॉलरिज की कल्पना विषयक विचारधारा का सौन्दर्यशास्त्रीय महत्व उनके विरोधियों तक ने स्वीकार किया है ।

भारतीय काव्यशास्त्र में कल्पना के स्थान पर प्रतिभा को महत्व दिया गया है । आलोचकों की धारणा है कि- "काव्य में रस ध्वनि तत्व के दृष्टा आचार्यों की प्रतिभा सम्बन्धी धारणा अपने आप में इतनी पूर्ण है कि पाश्चात्य काव्यालोचकों की कवि-कल्पना §पोएटिक इमेजिनेशन§ की सभी विश्लेषण दृष्टियाँ इसमें समा जाती हैं और तब भी इसके लिए यही कहा जा सकता है कि यह इन सब कल्पनाओं से परे किन्तु इन सब कल्पनाओं का अक्षय स्रोत है ।"[3]

1- पं. जगन्नाथ तिवारी : अभिनन्दन ग्रन्थ में आचार्य नंददुलारे बाजपेई का लेख- पाश्चात्य समीक्षा: सैद्धान्तिक विकास पृष्ठ-500

2- बायोग्राफिया लिटरेरिआ अध्याय चौदह पृष्ठ-11, 12

3- डॉ. सत्यव्रत सिंह : हिन्दी काव्य प्रकाश, भूमिका पृष्ठ-14

भामह ने काव्यहेतुओं के प्रसंग में प्रतिभा को श्रेष्ठतम माना है । रुद्रट ने प्रतिभा के स्थान पर शक्ति शब्द का प्रयोग किया है । राजशेखर ने भी प्रतिभा को महत्त्व दिया है ।

अभिनव गुप्त द्वारा विवेचित प्रतिभा का स्वरूप कॉलरिज इत्यादि पाश्चात्य आलोचकों की मान्यताओं के बहुत निकट हैं । जिसमें प्रतिभा को नव-नव रूप विधायिनी मानसिक शक्ति के रूप में माना गया है । प्रतिभा अपूर्व वस्तु निर्माण क्षमा प्रज्ञा । तस्या विशेषो रसावेश वैशद्य-सौन्दर्य काव्य निर्माणक्षमत्वम् ।'[1]

हिन्दी के आधुनिक आलोचकों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के कल्पना पर मौलिक ढंग से विचार किया है इससे पूर्व बाबू श्यामसुन्दरदास ने कल्पना का विवेचन करते हुए लिखा है- "विज्ञान में जो बुद्धि है, दर्शन में जो दृष्टि है, वही कविता में कल्पना है ।"[2] परन्तु ऐसे कथनों से कल्पना के स्वरूप पर कोई विशेष प्रकाश नहीं पड़ता । आचार्य शुक्ल ने कल्पना की परिभाषा करते हुए लिखा है- "जो वस्तु हमसे अलग है, हमसे दूर प्रतीत होती है उसकी मूर्ति मन में लाकर उसके सामीप्य का अनुभव करना ही उपासना है । साहित्य वाले इसी को भावना कहते हैं और आजकल के लोग कल्पना ।"[3]

शुक्ल जी उसी काव्य को श्रेष्ठ मानते थे जो विम्ब ग्रहण कराए । कल्पना के बिना रूपविधान, जिससे बिम्व ग्रहण होता है सम्भव नहीं है । कल्पना

- -

1- ध्वन्यालोकलोचन-अभिनवगुप्त, अनुवादक, जगन्नाथ पाठक- चौखम्बा विद्याभवन, पृष्ठ- 93

2- श्याम सुन्दर दास : साहित्यालोचन पृष्ठ-78

3- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : चिन्तामणि पहला भाग, पृष्ठ-154

दो प्रकार की होती है- विधायक और ग्राहक । कवि में विधायक कल्पना अपेक्षित होती है और श्रोता या पाठक में ग्राहक ----- योरोपीय साहित्य मीमाँसा में कल्पना को बहुत प्रधानता दी गई है । है भी यह काव्य का अनिवार्य साधन, पर है साधन ही, साध्य नहीं ।[1]

कल्पना के सम्बन्ध में डॉ॰ नगेन्द्र की मान्यता भी आचार्य शुक्ल जैसी ही है । उन्होंने कल्पना के विषय में लिखा है कि "कल्पना उस शक्ति का नाम है जो पहले कवि को वर्ण्य-विषय का मनसा साक्षात्कार कराती है और फ़िर भाषा में चित्रात्मकता का समावेश कर श्रोता के मनः चक्षु के सामने भी उसे प्रत्यक्ष कर देती है ।[2]

छायावादी कवियों ने कल्पना का तात्त्विक विश्लेषण तो कहीं नहीं किया है परन्तु यत्र-तत्र काव्य में उसके महत्त्व तथा उपयोगिता पर विचार व्यक्त किये हैं । प्रसाद जी स्वीकार करते हैं कि- कल्पनाशक्ति के द्वारा ही कवि मधुरजगत की सृष्टि करने में समर्थ होता है ।[3]

निराला ने कविता को 'कल्पना के कान की रानी' कहा है ।' उनकी दृष्टि में कल्पना से अधिक महत्त्व अनुभूति और चिन्तन का है । पन्त का काव्य सुन्दर से सत्य की ओर प्रयाण की कथा है । उनकी दृष्टि में कल्पना सौन्दर्य सृष्टि में सहायक मुख्य उपकरण है । पन्त ने काव्य में कल्पना के विषय में लिखा है कि- "मैं काव्य में कल्पना के सत्य को सबसे बड़ा सत्य मानता हूँ ।

1- आचार्य रामचन्द्रशुक्ल : चिन्तामणि, पहला भाग पृष्ठ-154
2- डॉ॰ नगेन्द्र : काव्य में उदात्त तत्त्व, भूमिका पृष्ठ-19
3- 'आह कल्पना का यह सुन्दर यह जगत मधुर कितना होता ।
सुख-स्वप्नों का दल छाया में पुलकित हो जगता-सोता ।।'
जयशंकर प्रसाद : कामायनी पृष्ठ-37

मेरी कल्पना को जिन-जिन विचारधाराओं से प्रेरणा मिली है, उन सबका समीकरण करने की मैंने चेष्टा की है ।[1] पन्त ने कल्पना का काव्य में अत्यधिक महत्त्व स्वीकार किया है । महादेवी वर्मा मानती हैं कि- "कलाकार यदि सत्य अर्थों में कलाकार हो तो वह कल्पना को सौन्दर्यमय आकार देगा, उसमें वास्तविकता का रंग भरेगा और उससे जीवन-संगीत की सुरीली लय की सृष्टि कर लेगा ।[2]

महादेवी जी ने कल्पना को अत्यधिक महत्त्व देते हुए भी उसे अनुभूति से निम्न माना है ।

छायावाद के आलोचकों ने कल्पना को वस्तु जगत् का विरोधी मानकर उसके पतन का एक प्रमुख कारण कल्पना की अतिशयता भी स्वीकार किया है । जबकि वास्तविकता यह है कि सभी छायावादी कवि कल्पना को काव्य कला का तत्व स्वीकार करते हुए भी उसे उतनी प्रमुखता नहीं प्रदान करते जितनी अनुभूति को । कल्पना के लिये कल्पना उनका उद्देश्य नहीं अपितु अनुभूति को ही सौन्दर्य प्रदान करने के हेतु ही उन्होंने कल्पना को ग्रहण किया है ।[3]

चूँकि बच्चन जी छायावादियों की तरह कल्पना लोक के कवि नहीं है उनके काव्य में जीवन के यथार्थ के दर्शन होते हैं इसलिये उनके काव्य में स्वतन्त्र कल्पनाओं का अध्ययन तो सम्भव नहीं है पर उन्होंने प्रकृति, जीवन, जगत, और राष्ट्र इत्यादि के बारे में जो सौन्दर्यमयी कल्पनाएं की हैं उन्हीं को आधार

- -

1- आधुनिक कवि : दो पृष्ठ-19

2- महादेवी वर्मा- सन्धिनी, भूमिका पृष्ठ-14

3- डॉ॰ सुरेश चन्द्र त्यागी : छायावादी काव्य में सौन्दर्य दर्शन पृष्ठ-

मानकर हम उनके काव्य में कल्पना-तत्त्व का विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे । अनुभूति और चिन्ता के अनुरूप ही बच्चन की कल्पना भी ऋजु-सरल है उसमें छायावादी कल्पना के ऐश्वर्य का नितान्त अभाव है । प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी की तुलना में बच्चन की कल्पना कितनी अबोध है राजभवन की किसी विदग्धा प्रौढ़ा के समक्ष जैसे कोई अर्द्ध-शिक्षित मुग्धा ।[1]

काव्य में कल्पना का स्थान 'बच्चन' जी स्वयं निर्धारित करते हुये कहते हैं- "मैंने केवल कल्पना को बहुत ऊँचा स्थान नहीं दिया । यदि आप मेरे पूर्ववर्ती कवियों को देखें- जैसे 'प्रसाद', 'निराला', 'पन्त', 'महादेवी' को- तो आप पायेंगे कि उनके यहाँ कल्पना का प्राचुर्य है । लेकिन इनके बाद आने वाले कवि मेरे समवर्ती, जीवन के अधिक निकट हैं । उनके यहाँ कल्पना भी जीवनानुभूतियों पर आधारित है । हमारी कविता केवल कल्पना की नहीं हमारी भोगी-झेली अनुभूतियों की उपज है । आस्कर वाइल्ड ने कहा था- 'जीवन साहित्य का अनुसरण करता है ।' मैं कहना चाहूँगा, 'साहित्य जीवन का अनुसरण करता है ।'[2]

छायावाद का कवि तो अनुभूति की रिक्तता को कल्पना के फूलों का चिन्तन के धूपछांही आवरण अथवा कला की रेशमी जाली से ढ़क लेता था । परन्तु बच्चन इस कला से अनभिज्ञ हैं । कविता में विचार और भावना के सामंजस्य और सन्तुलन को भी कविवर बच्चन जी ने अभिव्यक्ति प्रदान की है-

---

1- सं. प्रो. दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन §नगेन्द्र§ पृष्ठ-108

2- बच्चन : बच्चन रचनावली §खण्ड-9§ साक्षात्कार, पृष्ठ-157

कविता में विचार एवं भावना हमेशा विद्यमान रहते हैं । कभी भावना प्रबल होती है तो कभी विचार कविता पर हावी हो जाता है । भावना में बहना नदी में बहने की तरह है और बुद्धि का अनुसरण पहाड़ पर चढ़ने जैसा । भावना विश्वास माँगती है और बुद्धि सतर्कता ।[1]

यूँ तो बच्चन जी जीवन के गीत गाने वाले कवि हैं, जीवन के सुख-दुख ही उनकी अनुभूति और अभिव्यक्ति के विषय हैं किन्तु कल्पना की अनिवार्यता को भी उन्होंने एक साक्षात्कार के समय रेखाँकित करते हुए कहा है-'कविता के लिए किसी न किसी तरह की कल्पना जरूरी है ।'[2] किन्तु कवि ने जीवन की वास्तविकताओं को भी इंगित किया है, कवि का मानना है कि कोरी कल्पना के सहारे जीवन नहीं काटा जा सकता अपने मन्तव्य को शब्दों की डोरी से कवि ने इस प्रकार बाँधा है- "परिवर्तनशील जीवन ही कवि की प्रेरणा है और व्यापक अर्थों में कल्पना कविता के लिये जरूरी है । × × × × पर क्यों कि जीवन की वास्तविकताओं ने हम आँख नहीं चुरा सकते, इस लिये कल्पना की दुनियाँ में जी भी नहीं सकते ।[3] अतः डॉ. सुरेश चन्द्र गुप्त का यह कथन सर्वथा सत्य है- 'बच्चन की रचनाओं में केवल कल्पना का विकास नहीं है, वे सत्य के आलोक से सहज मुखरित हैं । उनके काव्य में जीवन की अनुभूतियों का जीवन्त चित्रण इसका प्रमाण है ।'[4]

- -

1- बच्चन : बच्चन रचनावली §खण्ड-9§ साक्षात्कार पृष्ठ-141

2- बच्चन : वही पृष्ठ-36

3- बच्चन : वही पृष्ठ-37

4- डॉ. सुरेश चन्द्र गुप्त : आधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त पृष्ठ-480

बच्चन जी यथार्थ धरातल के कवि हैं, कल्पना से उनका अधिक सम्बन्ध नहीं है परन्तु जीवन और जगत के सभी आयामों पर कवि ने लेखनी उठाई है और चूँकि जब वे एक कवि हैं तो कल्पना भी कविता के साथ-साथ चलेगी । कवि को अपने देश और देश की सभी वस्तुओं से अपार स्नेह है । देशप्रेम के अगाध सागर में डूबता उतरता कवि कल्पना लोक में खो जाता है और कामना करने लगता है-

"काव्य-कल्पना के डैनों पर चढ़ मैं उड़ता जाऊँ,
बहुत दूर जाकर भी अपने भारत को न भुलाऊँ ।
कल्पवृक्ष के अमर फलों को नित्य भले ही खाऊँ,
मातृभूमि की खट्टी-कच्ची बेरों पर ललचाऊँ ।
नभ से चाहे चुन-चुन तारे भौंह, कपोल सजाऊँ,
देख जहाँ पाऊँ भारत-रज बरबस लोट लगाऊँ ।
प्रकृति पुजारिन से सूरज की नित्य आरती पाऊँ,
पर भारत-झोपड़ियों में लख दीप शलभ बन जाऊँ ।

बहुरंगी सन्ध्या के घन पर चाहे आसन पाऊँ,
मातृभूमि की देखूँ तितली बस पीछे पड़ जाऊँ ।
नीहारों की ले फुलझड़ियाँ नभ में नित्य घुमाऊँ,
मातृभूमि के पाऊँ जुगनू उनकी याद भुलाऊँ ।
गगन-सिन्धु विद्युत-लहरों पर खेलूँ, धूम मचाऊँ,
एक बूँद स्वाती गंगा जल पर चातक-सा धाऊँ ।
जीवन से ऊबा, इच्छा है जन्म न फिर मैं पाऊँ,
पर यदि जन्म पड़े लेना ही भारत में ही आऊँ ।"[1]

'झूला' शीर्षक कविता में कवि ने मातृभूमि से ममता करने वाले देश-भक्त की सराहना की है । वह राष्ट्रभक्ति के गीत गाता हुआ झूला झूलना चाहता है । यहाँ कवि की वात्सल्य से सराबोर कोमल-कल्पना दृष्टव्य है -

---

1- बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं भाग दो §खण्ड-3§ पृष्ठ-52।

" देश भक्त के उर में नित्य
मातृभूमि की बनकर ममता,
मातृभाव, आजादी, समता,
झूलूँ गाता गीतों में सब उनके उज्ज्वल कृत्य ।"[1]

मानव-स्वतन्त्रता का सन्देश प्रसारित करने के लिये 'बच्चन' जी एक नूतन युग के लिए नए राग की कामना करते हैं । 'बच्चन' जी मनुष्य को अतीत के गौरव पर गौरवान्वित तो देखना चाहते हैं परन्तु उस प्राचीन कीर्ति से सन्तुष्ट नहीं देखना चाहते हैं क्यों कि सन्तोष प्रगति के मार्ग को अवरुद्ध कर देता है । अतः नित्य नूतन, चिर नवीन और महान कर्म को प्रेरित करता हुआ उनका यह गीत कल्पना से रंजित है-

"नूतन युग का हो नया राग,
ले अनिल चले नूतन पराग,
उज्ज्वल अतीत से हो सगर्व
पर जगे हृदय में नयी आग,
प्राचीन कीर्ति से हो न तुष्ट
हम रचें नित्य नूतन महान ।
रे पांचजन्य ! कर पुनः गान ।
यह धुन सुनकर सजवीर वेश,
सज्जित हो संयम से अशेष,
हम चलें विश्व को देने को
मानव स्वतन्त्रता का संदेश,
कर्तव्य मार्ग पर दृढ़ रहना,
हो एक ध्येय, हो एक ध्यान ।
रे पांचजन्य, कर पुनः गान ।
हो पूर्ण विश्व आलस्य हीन,
हों सब सत्कृत्यों में प्रवीण,
हम जन्म सिद्ध अधिकारों को
लें एक दूसरे से न छीन,

1- बच्चन : पारंभिक रचनाएं भाग एक §खण्ड-3§ पृष्ठ-490

पर पाप-शत्रुओं के ऊपर
हो खुली नित्य नंगी कृपाण,
रे पांचजन्य, कर पुनः गान ।"[1]

सन् 1942 में लिखी 'घायल हिन्दुस्तान' शीर्षक कविता में कवि आजादी का आह्वान कर रहा है । देश का सम्पूर्ण वातावरण भय व आतंक में डूबा हुआ है, चारों ओर अन्धकार छाया हुआ है, ऐसे औदास्यपूर्ण बोझिल वातावरण में भी कवि कल्पना लोक में खो जाता है और अटल विश्वास के साथ कह उठता है-

'मुझको है विश्वास किसी दिन घायल हिन्दुस्तान उठेगा ।
दबी हुई, दुबकी बैठी हैं कलरवकारी चार दिशाएं,
ठगी हुई, ठिठकी-सी लगतीं हैं नभ की चिरगतिमान हवाएं,
अम्बर के आनन के ऊपर एक मुर्दनी-सी छायी है,
एक उदासी में डूबी हैं तृण-तरुवर-पल्लव-लतिकाएं,
आँधी के पहले देखा है कभी प्रकृति का निश्चल चेहरा ?
इस निश्चलता के अन्दर से ही भीषण तूफान उठेगा ।
मुझको है विश्वास किसी दिन घायल हिन्दुस्तान उठेगा ।'[2]

स्वतन्त्रता प्राप्त होते ही सम्पूर्ण देश में हर्षोल्लास का वातावरण छा जाता है, सम्पूर्ण देशवासी आनन्द विभोर हो उठते हैं किन्तु कवि का दूरदर्शी सजग मन चेतावनी दे उठता है । कवि ने देशवासियों को सचेत करते हुए आजादी की भारी जिम्मेदारी को उठाने के लिये मजबूत और बलिष्ठ बनने को आगृत किया है । यहाँ भी कवि की परिकल्पना में आजादी कोई हल्का फूल नहीं है जिसे जो चाहे उठा ले वह एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है । उसकी रक्षा करने के लिये हर

- -

1- बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग दो §खण्ड-3§ पृष्ठ-554-555

2- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृष्ठ-149

पल तत्पर व सजग रहना चाहिये । कवि की यही कल्पना दृष्टव्य है-

"कटीं बेड़ियाँ औ' हथकड़ियाँ, हर्ष मनाओ, मंगल गाओ,
किन्तु यहाँ पर लक्ष्य नहीं है, आगे पथ पर पाँव बढ़ाओ,
आजादी वह मूर्ति नहीं है जो बैठी रहती मन्दिर में,
उसकी पूजा करती है तो नक्षत्रों से होड़ लगाओ ।
हल्का फूल नहीं आजादी, वह है भारी जिम्मेदारी,
उसे उठाने को कन्धों के भुजदण्डों के बल को तोलो ।
एक और जंजीर तड़कती है, भारत माँ की जय बोलो ।"[1]

कवि भारत की गणतन्त्र पताका के अजर और अमर रहने की कामना करने लगता है । सूरज और चाँद जब तक इस संसार में हैं तब तक कवि पताका को फहरते हुए देखना चाहता है । यह कल्पना कवि के राष्ट्र-प्रेम की सुन्दर अभिव्यक्ति है-

"उगते सूरज और चाँद में है जब तक अरुणाई,
हिन्द महासागर की लहरों में जब तक तरुणाई
वृद्ध हिमाचल जब तक सिर पर श्वेत जटाएं बाँधे
भारत की गणतन्त्र पताका रहे गगन पर छाई ।"[2]

कवि भारत और नैपाल की मैत्री पर अपने गीत को संगीत बद्ध कर देता है । धर्म और सद्भावना के रूप में कवि प्रगाढ़ मैत्री में बँध जाना चाहता है । जिसका एक छोर यदि पशुपतिनाथ से जुड़ा है तो दूसरा छोर रामेश्वरम् तक जाता है । कवि इस पावन मैत्री के लिये पावन कल्पना का ही आश्रय लेता है-

"पशुपतिनाथ जटा से निकले जो गंगा की पावन धार,
बहे निरन्तर, थमे कहीं तो रामेश्वर के पाँव पखार,
गौरीशंकर सुने कुमारी कन्या के मन की मनुहार ।
गौतम-गाँधी-जनक-जवाहर त्रिभुवन-जन-हितकर उद्गार,

- -

1- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृष्ठ-167

2- बच्चन : वही पृष्ठ-173

दोनों देशों में छा जाये, दोनों का सौभाग्य सजायें,
दोनों दुनियाँ को दिखलायें,
अपनी उन्नति, सबकी उन्नति करने के अभिलाषी हम ।
जग के सबसे ऊँचे पर्वत की छाया के वासी हम ।"[1]

'मधुशाला' जैसी काव्यकृति में भी कवि की देशभक्ति सराहनीय है । मादक कल्पनाओं में डूबा हुआ भी कवि का हृदय राष्ट्र-प्रेम की भावना से आन्दोलित होने लगता है और वह हाला, प्याला, साकी की कल्पना वीर-वेश के साथ करने लगता है । 'मधुशाला' के मध्य कवि का ऐसी कल्पना में खो जाना आश्चर्यजनक ही नहीं असाधारण प्रतिभा का परिणाम है-

"धीर सुतों के हृदय-रक्त की आज बना रक्तिम हाला,
वीर सुतों के वर शीशों का हाथों में लेकर प्याला,
अति उदार दानी साकी है आज बनी भारतमाता,
स्वतन्त्रता तृषित कालिका बलिवेदी है मधुशाला ।"[2]

सन् 1943 में पड़े बंगाल के अकाल पर काल कवलित आधे करोड़ मनुष्यों की निर्मम मृत्यु पर कवि का कोमल मन करुणा से आपूरित हो जाता है और उसकी कल्पना मानों बंगालवासियों की मृत्यु पर करुण क्रन्दन कर उठती है, एक-एक शब्द से कवि की कल्पना चीत्कार करती हुई प्रतीत होती है । 'बंगाल का काल' आज इतिहास की वस्तु बनकर रह गया है, परन्तु अपने वैभव से देश-काल की सीमाओं को लाँघकर शाश्वत बन गया है । दुर्वलता, निर्जीवता, नपुंसकता और आत्महत्या से साहस, वीरत्व, पुरुषत्व और आत्मबलिदान सदैव अच्छे माने जायेंगे । अकाल के समय कवि बंगाल में नहीं था किन्तु कल्पना के द्वारा कवि ने

- -

1- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृष्ठ-172

2- बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू0-45 पृष्ठ-51

ऐसे वीभत्स चित्र अंकित किये हैं मानों मृत्यु का आँखों देखा हाल सुना रहा हो, यह कवि की विलक्षण कल्पना-प्रतिभा का ही परिणाम है । मृत्यु का विम्ब दृष्टव्य है-

"भूख ही होती, लो, भोजन !
मृत्यु अपना मुख शत योजन
खोलती,
खाती और चबाती,
मोद मनाती,
मग्न हो मृत्यु नृत्य करती ।
नग्न हो मृत्यु नृत्य करती ।
देती परम तुष्टि की ताल,
पड़ गया बंगाले में काल,
भरी कंगालों से धरती,
भरी कंकालों से धरती ।"[1]

मृत्यु की भयानकता को सिद्ध करने के लिये कवि ने कठोर शब्दों और भयानक उपमानों का प्रयोग किया है । अन्यत्र एक चित्र कल्पना प्रसूत भावों को रूपायित कर रहा है । यथा-

"भरणी आज हो गयी हरणी,
जल दे, फल दे और अन्न दे
जो करती थी जीवन दान,
मरघट-सा अब रूप बनाकर,
अजगर-सा अब मुँह फैलाकर
खा लेती अपनी सन्तान ।
बच्चे और बच्चियाँ खाती,
खाती युवक युवतियाँ खाती,
खाती बूढ़े और जवान

1- बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृष्ठ-417

निर्ममता से एक समान,
बंग भूमि बन गयी राक्षसी-
कहते हो लो कटी जवान ।"[1]

बंगालवासियों की अकर्मण्यता और नपुंसकता पर कवि को क्षोभ है अपने रोष को प्रकट करते हुए कवि कहना चाहता है कि जब एक पशु तक अपने अधिकारों के लिये सजग है, उसकी रक्षा कर सकता है तो एक मनुष्य यूँ अकर्मण्य क्यों बैठा है ? क्यों अपने अधिकारों की रक्षा नहीं करता । कवि की कल्पना विम्ब ग्रहण कराने में पूर्ण सफल हुई है । यथा-

"एक क्षीण काय कुत्ते के आगे,
से भी अगर उठा ले कोई
उसकी सूखी हड्डी - रोटी,
शेर की तरह गुर्राता है,
कान फटक कर,
देह झटककर
विद्युत गति से
अपना थूथन ऊपर करके,
लम्बे, तीखे
दाँत निकाले
रोटी लेने वाले की छाती के ऊपर
चढ़ जाता है,
बढ़ जाता है
ले लेने को अपना हिस्सा,
कोता किस्सा -
पशु को भी आता है अपने
अधिकारों पर लड़ना-मरना
जो कि आज तुम भूल गये हो,
भूखे बंग देश के वासी ।"[2]

- -

1- बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृष्ठ-420

2- बच्चन : वही पृष्ठ-424-425

बच्चन जी का किसानों के प्रति अनन्य अनुराग था । यही कारण है कि उनके लोकगीतों में ग्रामीण जीवन की झाँकी देखने को मिलती है । खेतों की मिट्टी की सोंधी महक उनके शब्द-शब्द से निःसृत होती है । जिस प्रकार से खेतों के हरियाने पर किसान का मन-मयूर नाच उठता है, उसी प्रकार कवि की कल्पना भी नितान्त ग्रामीण वातावरण से जुड़ गई है और वह उत्तर प्रदेश की लोकधुन में शब्दों को बाँधता हुआ गा उठता है । यथा-

"खेत हरियाए तो मन हरियाए ।
ओ, आँधी हर-हर ,
ओ, बिजली चम-चम,
ओ, बदरा गड़-गड़,
ओ, बरखा झम-झम,
खेत पिये पानी तो जियरा जुड़ाए ।
खेत हरियाए तो मन हरियाए ।
हे, जेठऊ काटें,
हे, देवरा काटें,
हे, सैंयाँ माड़े,
हे, भैया माड़ें,
धान घर आये तो गान घर आए ।
खेत हरियाए तो मन हरियाए ।" [1]

कवि की कल्पना प्राचीन कहावतों पर भी विचरण करती रही है । कवि का मानना है कि अनाज से चिड़ियों का भाग §हिस्सा§ निकाल देना चाहिये ताकि वे खाकर तृप्त व सन्तुष्ट हो जायें और दुआयें दें, जिससे कभी न अकाल पड़े । अपनी इसी कल्पना को कवि ने शब्दों में अभिव्यक्ति इस प्रकार प्रदान की है -

---

1- बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृष्ठ-378

"चिड़ियों का भाग निकाल रे, चिड़ियों का ।
आयी फसल घर,
जौ, गेहूँ, अरहर,
दाता हुआ है दयाल रे ।
× × × ×
चिड़ियाँ अघायें
जो दें दुआएं,
पड़ता नहीं है अकाल रे ।"[1]

पूँजीपति और शोषित जनता के वैषम्य की खाई को कवि पाट देना चाहता है । कवि का मन्तव्य है कि देर है अन्धेर नहीं है, अतः पूँजीपति के साथ विद्रोह करो और जो जोते-बोए, वही खाए । इसी वैषम्य पूर्ण यथार्थ को कवि ने कल्पना मिश्रित रूप प्रदान किया है-

"हाथ न हटने पायें हल के हत्थे से
धरा कड़ी हो
धूप बड़ी हो,
धूप कड़ी हो ।
श्रम के फल के बीच न कोई खाने वाली
शक्ति खड़ी हो ।
भू पुत्रों की उम्र बड़ी हो ।
उम्र बड़ी हो ।"[2]

बच्चन जी सोंधी-सोधी माटी की महक में ऐसे डूब जाते हैं कि यही पुकार उठते हैं कि -

"जिसे माटी की,
जिसे माटी की महक न भाये,
उसे नहीं जीने का हक है ।"[3]

1- बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृष्ठ-379

2- बच्चन : चार खेमें चौसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-518

3- बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृष्ठ-371

किसानों के साथ-साथ कवि का ग्राम्य जीवन प्रिय हृदय भी वर्षा के मंगल के गीत गाने लगता है । भावुकता में मग्न होकर कवि ने अपनी रचना को मनोहर कल्पनाओं से सुसज्जित किया है-

"फूटे, क्यारी
नव नर-नारी,
बहकें, चहकें, मधुमय स्वर से,
घन बरसे ।
घन बरसे, भीग धरा गमके,
घन बरसे ।
नव धान उठे,
नव गान उठे,
सबके खेतों से, सब घर से,
घन बरसे ।"[1]

अभावों की दुनिया में व्यक्ति की क्या स्थिति होती है इसका सही चित्रण कवि ने अनेक स्थानों पर किया है, किन्तु इस अभाव और बेचारगी तथा गरीबी में भी कितना आत्मसंतोष, कितना अगाध प्रणय और कितनी अगाध ममता का साम्राज्य है, कि सब कुछ नैसर्गिक प्रतीत हो रहा है । कवि की अनुभूति और कल्पना का सम्मिश्रण दृष्टव्य है । यथा-

"कितने घर, कितनी झोपड़ियों में
माटी के दिवले जलते,
जिनके उजियारे में धनियाँ
धान पकातीं,
होरी अपनी गोरी का घूँघट सरकाता,
होरिल अपनी माँ का आँचल ।
दीपक की लौ से जोड़ा है
मानवता ने कितना नाता ।
कितना नाता ।"[2]

1- बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे {खण्ड-2} पृष्ठ-50।

2- बच्चन : बहुत दिन बीते {खण्ड-3} पृष्ठ-163

बच्चन जी ने जीवन को बहुत नजदीक से देखा है, उनकी काव्य कृतियाँ जीवन की सफल झाँकी प्रस्तुत करने में पूर्ण समर्थ हैं, चूँकि जीवन के सुख-दुख को कवि ने स्वयं भोगा व झेला है अतः उनकी कविताओं में अनुभूति का ही समावेश है किन्तु कल्पना का पुट भी उस अनुभूति में मिश्रित है । यथा-

"जीवन हँसी भी, जीवन रुदन भी,
जीवन खुशी भी, जीवन घुटन भी,
जो न जीवन की,
जो न जीवन की गत पर गाये
उसे नहीं जीने का हक है ।"[1]

अन्यत्र एक स्थान पर भी कवि ने जीवन की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए कुम्हार के चाक चलने की अद्भुत कल्पना द्वारा जीवन के दोनों रूपों का उद्घाटन किया है-

"चाक चले चाक !
जीवन दो फाँक -
आधे में रोदन है, आधे में राग !
चाक चले चाक ।"[2]

कवि ने स्वयं स्वीकार किया है कि 'जीवन में दोनों आते हैं, मिट्टी के पल, सोने के क्षण, ऐसी पंक्तियाँ न आती, पर अब मेरे लिए यह सिर्फ सुना-सुनाया ज्ञान नहीं रह गया था ।यह मेरी छाती में बलक चुका था, मेरी आँखों से ढ़लक चुका था । उल्लास और अवसाद इतनी तीव्रता से मेरे जीवन में आ चुके थे कि अब उनकी स्मृति का भार उठाने की भी मुझमें शक्ति न थी ।"[3]

कवि को जीवन बहुत छोटा सा प्रतीत होता है और वह कल्पना करने लगता है कि इतने छोटे जीवन में मैं कितना प्यार करूँ, जब कि इस संसार में आने

- -

1- बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृष्ठ-372
2- बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-499
3- बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृष्ठ-117

वाले प्रत्येक व्यक्ति को जाना ही होता है । कवि ने लिखा भी है कि- बहुत मतबि अपने जीवन क्रम को समझने के लिये मैंने अपनी कविता का सहारा लिया यानि यह बताने केलिये मैंने अपनी कविता का सहारा लिया कि मैं कौन सी भावनाओं से होकर गुजरा, और उनके पीछे कौन से 'इन्स्टेंसिज' हैं ।'[1] जीवन के प्रति कवि की कल्पना बिल्कुल सत्य है-

"छोटे-से जीवन में कितना प्यार करूँ, पी लूँ हाला,
आने के ही साथ जगत में कहलाया 'जीने वाला,'
स्वागत के ही साथ विदा की होती देखी तैयारी,
बन्द लगी होने खुलते ही, मेरी जीवन-मधुशाला ।"[2]

जीवन की गंभीरता, जटिलता और गहनता को कवि ने वाणी देते हुए लिखा है-'कहते हैं न कि 'जिनहि न व्यापै जगत गति' । जिन्हें जगत की गति नहीं व्यापती- उन्हें जीवन बहुत 'सिम्पल' मालूम होता है, वे उसे 'सिम्प्लीफाइड' करके देखते हैं । मगर कुछ लोगों को इसमें बड़ा रहस्य दिखायी पड़ता है और मालूम होता है कि इसे कहा नहीं जा सकता ।'[3]

कवि अपनी विह्वलता को कल्पना से रंग देना चाहता है, उसको इस संसार में समस्त प्राणियों का जीवन त्राहि-त्राहि करता हुआ प्रतीत होता है, अपनी इसी कल्पना को कवि ने शब्दों में रूपायित किया है-

"त्राहि-त्राहि कर उठता जीवन ।
जब रजनी के सूने क्षण में,
तन-मन के एकाकीपन में
कवि अपनी विह्वल वाणी से अपना व्याकुल मन बहलाता,
त्राहि-त्राहि कर उठता जीवन ।"[4]

- -

1- रणवीर राँग्रा-'जीवन का सत्य बनाम शब्द का सत्य' साक्षात्कार §खण्ड-9§ बच्चन रचनावली, पृष्ठ-58
2- मधुशाला §खण्ड-1§ रूबाई 66 पृष्ठ-54
3- रणवीर राँग्रा-'जीवन का सत्य बनाम शब्द का सत्य' बच्चन रचनावली साक्षात्कार §खण्ड-9§ पृष्ठ-

कवि को जीवन इतना रहस्यमय लगने लगा कि उसे शब्दों में समेटना कठिन प्रतीत होने लगा । कवि की यह स्वानुभूति है कि- 'जीवन का सत्य और शब्द का सत्य अलग-अलग इकाइयाँ हैं । संसार का सारा साहित्य जो शब्द का साहित्य है, जीवन को पकड़ने का एक बहुत निर्बल और निष्फल प्रयास है ।'[1]

असंकलित कविताओं के अन्तर्गत अपनी 'पचहत्तरवीं वर्षगाँठ पर' कवि जीवन की विराटता को नहीं समझ पाया अभी बहुत कुछ उससे अनजाना ही रह गया है अपनी इसी कल्पना में डूबता-उमगता कवि जीवन की विराटता को साराँश रूप में प्रस्तुत कर रहा है । निश्चय ही ये पंक्तियाँ जीवन की पूर्ण परिभाषा व्यक्त करने में समर्थ हैं, कवि की भावना कल्पना में डूबी है-

"पचहत्तर शरदों की मैंने सरदी जानी,
पचहत्तर मधुऋतुओं के जाने रंग-सुमन,
पचहत्तर ग्रीष्मों की जानी तपती घड़ियाँ,
पचहत्तर बरसातों के जाने जल-प्लावन !
जीवन विराट !-है अभी बहुत कुछ अनजाना,
नादान, अभी भी अवसर बनने को दाना ।"[2]

कवि ने जहाँ कहीं भी जीवन के विषय में कल्पना की है, वह यथार्थ से जुड़ा रहा है, उससे भागा नहीं है ।

बच्चन जी के काव्य में हमें आत्मा-परमात्मा, रहस्यवाद, अद्वैतवाद, अध्यात्म व दर्शन की भी मधुर कल्पनाओं के दर्शन होते हैं । वस्तु विधान के अन्तर्गत हम इस विषय पर विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करेंगे । यहाँ तो संक्षेप में ही कवि की कल्पनाओं का उद्घाटन करेंगे । बच्चन जी की कविताओं में रहस्यमयी

1- साक्षात्कारकर्ता : डॉ॰ रणवीर राँग्रा:जीवन का सत्य बनाम शब्द का सत्य, 1978

2- बच्चन : असंकलित कविताए §खण्ड-3§ पृष्ठ-430

कल्पना के दर्शन होते हैं । कवि को बंसी की प्रतिध्वनि सुनाई देती है-

"एक बंसी की
प्रतिध्वनि भी कभी देती सुनायी
जो कि झंझावात को अवहेलती-सी,
सात सुर से खेलती-सी,
बढ़ी ही जाती निरन्तर,
भेदती-सी दिग्दिगन्तर ।"[1]

कवि को लहरों में आमन्त्रण की अनुभूति होती है और वह आगे बढ़ना चाहता है । यह कवि की रहस्यमयी कल्पना को व्यक्त करता है-

'तीर पर कैसे रुकूँ मैं, आज लहरों में निमन्त्रण ।'[2]

कवि उस अज्ञात सत्ता के रहस्य को समझने का प्रयास कर रहा है, उस असीम को अर्पित करने के लिये कवि की कल्पना गीतों की अभिव्यक्ति करती है।

क्यों कि- 'गीत छोड़कर पास तुम्हारे मानव का पहुँचा ही क्या है ?
अब तुमकों अर्पित करने को मेरे पास बचा ही क्या है ।'[3]

अद्वैतवादियों की तरह कवि का दार्शनिक मन कभी-कभी अद्वैतवाद की कल्पना कर उठा है -

"इस उधेड़बुन में ही मेरा सारा जीवन बीत गया
मैं मधुशाला के अन्दर या मेरे अन्दर मधुशाला ।"[4]

बच्चन जी ने एक ही मार्ग का अवलंब लेने का संकेत भी दिया है । ब्रह्म

1- बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-558

2- बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृष्ठ-140

3- बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृष्ठ-397

4- बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ रू0।19 पृष्ठ-62

के प्रति कवि की प्रतीकात्मक कल्पना बड़ी ही सुन्दर बन पड़ी है-

"अलग-अलग पथ बतलाते सब पर मैं यह बतलाता हूँ
राह पकड़ तू एक चला चल, पा जायेगा मधुशाला ।"[1]

वायु का संस्पर्श पाकर कवि साकार और निराकार की कल्पना करने लगता है । यह कवि की गूढ़ाभिव्यक्ति है-

"साकार वृक्ष से निराकार, तुम निकल हुई कैसे बयार ?
सब ओर तुम्हार अब प्रसार, इस नभ मण्डल के आर-पार ।
बतला दो मुझको हे बयार,
जब तन-तरुवर के दल विदार उड़ जाऊँगा मैं पंख मार
हूँगा ससीम की अवधि पार-कर चिर अनन्त चिर-निराकार ?"[2]

कवि ने प्याले की कल्पना द्वारा मनुष्य को क्षणभंगुर जीवन का संकेत दिया है साथ ही मृत्यु के शाश्वत सत्य को उद्घाटित किया है । यह कवि की कोरी कल्पना नहीं है बल्कि यथार्थ से बंधी हुई है । कल्पना का पुट समाया है इसमें-यथा- "मिट्टी का तन, मस्ती का मन, क्षण भर जीवन
मेरा परिचय ।"[3]

क्षणिक जीवन के प्रति कवि ने अनेकानेक कल्पनायें की हैं जो अतीव सुन्दर बन पड़ी हैं-

"जग उज्जवल जीवन क्षण भर फिर चारों ओर अँधेरा,
इस क्षण-भंगुर आभा पर क्यों मोहित हो मन मेरा ।"[4]

नश्वरता और अमरता के द्वन्द्व को कवि मिटा देना चाहता है । कवि का कहना है कि यह तो प्रत्येक मनुष्य जानता है कि इस संसार में जो आया है

1- बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू06 पृष्ठ-45

2- बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं -2 §खण्ड-3§ पृष्ठ-541

3- बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृष्ठ-95

4- बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं -2 §खण्ड-3§ पृष्ठ-533

वह एक दिन अवश्य जायेगा किन्तु फिर भी वह अमरता की आशा अपने हृदय में संजोए रहता है । इन्हीं भावों को कवि ने कल्पना में बाँधा है -

'है ज्ञात हमें नश्वर जीवन, नश्वर इस जगती का क्षण-क्षण,
है, किन्तु अमरता की आशा करती रहती उर में कृन्दन,
नश्वरता और अमरता का अब द्वन्द्व मिटाने हम आये ।'[1]

मनुष्य की नश्वरता के साथ-साथ कवि यह अनुभूति करता है कि प्रकृति का कण-कण भी विनाशशील है । प्रातःकालीन प्राकृतिक सौन्दर्य सुषमा को देखकर कवि हर्षित है, सारिका, श्यामा, तोले आदि की मधुर तान में लयमान है किन्तु मध्य दिवस आते-आते सभी कुछ विलुप्त हो जाता है । ऐसे ही क्षणों की कल्पना में कवि खोया हुआ है और वह मनुष्य और प्रकृति के दुख को एक समान समझने लगता है-

"प्रकृति, तुम्हारे भी आनन्द
क्षणिक मनुष्यों के-से होते ?
पल में आते, पल में खोते ?
कर्म-चक्र में मानव आते,
गाकर रोते, रोकर गाते ।
रच न सका क्या चतुरानन दुख
से असम्मिलित तेरा भी सुख ?
रचा गया क्या हम दोनों के लिए एक ही फन्द ?"[2]

मृत्यु की निर्दयता और भयानकता को कवि ने अपनी कल्पना में मानों साकार कर दिया है । यथा-

"क्षीण, क्षुद्र, क्षणभंगुर, दुर्बल मानव मिट्टी का प्याला,
भरी हुई है जिसके अन्दर कटु मधु जीवन की हाला,
मृत्यु बनी है निर्दय साकी अपने शत-शत कर फैला,
काल प्रबल है पीने वाला संसृति है यह मधुशाला ।"[3]

- -

1- बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ पृष्ठ-88

2- बच्चन : प्रारम्भिक रचनायें-1 §खण्ड-3§ पृष्ठ-462

3- बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू0-73 पृष्ठ-55

कवि को बचपन से ही आध्यात्मिक भावना के संस्कार मिले थे यही कारण है कि उनके काव्य में भी आध्यात्ममय पंक्तियाँ या उक्तियाँ उपलब्ध हो जाती है । कवि ने पंचतत्व के सिद्धान्त को बहुत सुन्दर कल्पना में पिरोया है-

"प्रभु मन्दिर यह देह, री !
क्षिति की क्षमता,
जल की समता,
पावक-दीपक जाग्रत-ज्योतित निशि-दिन प्रभु का नेह, री !
प्रभु मन्दिर यह देह, री !
गगन असीमित,
पवन अलक्षित,
प्रभु-करुणा से पल-पल रक्षित यह पंच महला गेह, री !
प्रभु मन्दिर यह देह, री !
अतिथि पधारो,
भाग्य सँवारों,
क्षण भर को कंचन छवि पाये चरण बिछी यह खेह, री !
प्रभु मन्दिर यह देह, री !"[1]

कवि कल्पना लोक का एकान्त पन्थी है और उसे यह अनुभूति होती है कि मेरे प्रियतम §परमात्मा§ नाच रहे हैं तो मैं कैसे हट जाऊँ । उसकी भक्ति भावना चरम सीमा पर है वह अपने ईश्वर से क्षणांश के लिये भी अलग नहीं होना चाहता । कवि की कल्पना सराहनीय है-

"मेरे प्रियतम नाच रहे हैं, मैं कैसे हट जाऊँ ।"[2]

सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी परमात्मा के दर्शन मनुष्य को नहीं हो पाते, यदि वह अपनी मन की अथवा यूँ कहिये हृदय की आँखों से देखेगा तभी उसे ईश्वर के दर्शन होंगे, साक्षात्कार होगा । कस्तूरी कुण्डलि बसे मृग ढूँढे वन माहिं, ऐसे

- -

1- बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-495-496

2- बच्चन : वही पृष्ठ-495

घट-घट राम हैं दुनियाँ जानत नाहिं । या यों कहिये- घट-घट में साईं रमता वाली उक्ति मनुष्य नहीं समझ पाता । ऐसी ही नासमझी की स्थिति को कवि ने कल्पना के द्वारा लोकगीत में ढ़ाला है-

"काशी से आकर कमण्डलधारी,
वृन्दावन से आकर पुजारी,
कहते हैं,
कहते हैं मुरारी कहाँ नहीं,
मुझे घेरे रहें तो मैं जानूँ ।
× × × ×
साईं भी आकर, गोसाई भी आकर,
धूनी रमाकर, पोथी सुनाकर,
कहते हैं,
कहते हैं तुझमें तेरा पिया,
पिया मेरे कहें तो मैं मानूँ ।
कहते हैं तू रह पी की बनी,
पिया मेरे रहें तो मैं जानूँ ।"[1]

कवि का मानना है कि जो अन्तिम क्षणों में भी चेत जाय वही सत्वर चेता है-

"मन पछता रे,
खेता जा रे,
अन्तिम क्षण में चेत जाय जो वह भी सत्वर चेता ।
मैं तो बहुत दिनों पर चेता ।[2]

कवि निवेदन कर रहा है कि उसके इस पुराने सड़े-गले-फटे कायारूपी वस्त्र को उतारकर नया परिधान धारण करा दो । कवि की कल्पनापूर्ण आध्यात्मिकता से ओतप्रोत है- यथा- "जग के कीचड़- काँदों से लथपथ मटमैली, काल-कण्टकित झंखाड़ों में, अटकी-झटकी चिथ-चिरकती जीवन के श्रम-ताप स्वेद से बुसी-किचैली, चादर का अब मोह निवारो । दलदल जंगल, पर्वत, मरुथल,

---

1- बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृष्ठ-384-385

2- बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-496

मारी-मारी फिरी शिथिल विथकित काया से, जीर्ण-शीर्ण यह बसन उतारो । माँ ताखसिकता-कूलों में अविरत बहती, शुभ्र गगन-गंगा धारा में, मल-दल नहला, नव-निर्मल कर, जलन-थकन हर, मेरे तन पर वत्सलता-करुणा-अनुरंजित, सतरंगा परिधान सँवारो ।"[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि बच्चन की कल्पना ने जीवन के सभी रूपों का संस्पर्श किया है ।

बच्चन जी की कुछ कृतियों को पढ़कर लोगों ने उन्हें निराशावादी घोषित कर दिया था किन्तु कवि अपनी पीड़ा, वेदना, निराशा, अवसार, विषाद, अन्धकार, एकाकीपन, जीवन की लक्ष्यहीनता के बीच भी आशा के काल्पनिक कुंजों में भ्रमण करता रहा है । कवि के शतशः गीत ऐसे हैं जो कवि के पूर्ण आशावादी स्वस्थ दृष्टिकोण को चित्रित करते हैं । आशा की खोज में कवि की कल्पना यहाँ-वहाँ सारे जहाँ में घूमती रही है । यथा-

मैं रखता हूँ हर पाँव सुदृढ़ विश्वास लिये,
ऊबड़-खाबड़ तम की ठोकर खाते-खाते
इनसे कोई रक्ताभ किरण फूटेगी ही ।[2]

इस प्रकार की पंक्तियाँ कवि के घोर आशावादी और अटूट विश्वासी रूप को प्रकट करती हैं, यह कवि की मौलिक कल्पना है । जीवन को दिन और रात दो भागों में विभक्त करने के पश्चात् भी जब जीवन रूपी साँझ आती है तब भी हमारे कवि बच्चन जी आशा का सम्बल नहीं छोड़ते । देखिये-

'जीवन का दिन बीत चुका था छायी थी जीवन की रात
किन्तु नहीं मैंने छोड़ी थी आशा- होगा पुनः प्रभात ।'[3]

- -

1- बच्चन : चार खेमें चौसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-556-557

2- बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-50

3- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृष्ठ-153

बच्चन जी का आशावाद कोई काल्पनिक आशावाद नहीं है बल्कि पूर्णरूपेण यथार्थ के धरातल पर आधृत है । यही कारण है वे कल्पनालोक में कम ही विचरण करते हैं । कवि की दृष्टि में देवता वे नही हैं जो स्वर्गासीन हैं, सत्तालोलुप हैं, बल्कि निरन्तर अनवरत गति से जीवन में संघर्षशील मनुष्य ही देवत्व के योग्य है । कवि ने यह कल्पना की है कि मनुष्य को ऐसा संघर्षवान होना चाहिये जो विषमऔर दुर्दम परिस्थितियों के बीच भी सीना ताने रहे और गौरवगान करता रहे । यथा-

> और मेरे देवता भी वे नहीं है जो कि ऊँचे स्वर्ग में हैं वास करते
> और जो अपनी महत्ता छोड़, सत्ता में किसी का भी नही विश्वास करते
> देवता मेरे वही हैं जो कि जीवन में पड़े संघर्ष करते, गीत गाते,
> मुसकराते और जो छाती बढ़ाते एक होने के लिये हर दिल जले से
> अंग से मेरे लगा तू अंग ऐसे, आज तू ही बोल मेरे भी गले से ।[1]

कवि ने निरन्तर संघर्षशील मानव का एक स्वाभिमानी रूप प्रस्तुत किया है कवि ने-

> अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !
> वृक्ष हों भले खड़े, हो घने, हों बड़े,
> एक पत्र-छाँह भी माँग मत, माँग मत, माँग मत !
> अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !
> यह महान दृश्य है- चल रहा मनुष्य है
> अश्रु-स्वेद-रक्त से लथपथ, लथपथ, लथपथ !
> अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ ![2]

यह कविता पढ़कर ऐसा प्रतीत होता है मानों एक सुनसान सड़क पर कोई एक अकेला व्यक्ति वास्तव में अश्रु, स्वेद और रक्त से सराबोर विथकित सा मन्द मन्थर गति से अपने गन्तव्य को चला जा रहा है और दर्शक दीर्घा में खड़ा

1- बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृष्ठ-227

2- बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृष्ठ-246

अपार जनसमूह उस अनुपम व्यक्तित्व को मन्त्रमुग्ध और मूक होकर देख रहे हों, मानों वह एक मनुष्य नहीं एक युग चल रहा है, एक जीता जागता इतिहास चला जा रहा है । यह कवि की अपरिमित कल्पना शक्ति का ही प्रतीक है ।

कवि 'क्षतशीश मगर नतशीश नहीं है ।' का उद्घोष करता है । कवि एक ऐसे सुपुष्ट और सुदृढ़ मानव की कल्पना करता है जो सदैव गौरव के साथ अपना सीना ताने रहता है, विषम से विषम परिस्थितियों में भी जो झुकता नहीं है, घबराता नहीं है बल्कि अजेय होने की हुंकार भरता है । यथा-

"पहाड़ टूटकर गिरा, प्रलय पयोध भी घिरा,
मनुष्य है कि देव है कि मेरुदण्ड है तना ।
अजेय तू अभी बना ।"[1]

सृष्टि के नियम को भी कवि ने कल्पना के अद्भुत रंगों में रंग दिया है-

"नाश के दुख से कभी दबता नहीं निर्माण का सुख,
प्रलय की निस्तब्धता से सृष्टि का नवगान फिर-फिर ।"[2]

'बच्चन' जी ने एक ऐसे मनुष्य का चित्र खींचा है जो मन्दिर-मस्जिद-गुरुद्वारे और गिरजाघर में हाथ जोड़ कर नेत्रों से नमन कर गर्दन झुकाकर उस सत्ता का स्मरण करता है जिसे हम ईश्वर, अल्लाह, गुरुनानक और ईसामसीह इत्यादि अनेक नामों से पुकार सकते हैं । किन्तु कवि की यह मौलिक कल्पना है कि इस प्रकार का चित्र एक मनुष्य का नहीं बल्कि पशु का है, अतः वह ऐसा रूप धारण करने के लिये मनुष्य को लज्जित करता है ऐसा नहीं है कि कवि बच्चन जी नास्तिक हैं बल्कि वे भी आस्तिक हैं, किन्तु वे मनुष्य को कर्मपथ पर अग्रसर रहने के लिए प्रेरित करते हैं । कवि की निम्न पंक्तियों में कल्पना अपने पूर्ण वैभव के

- -

1-बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृष्ठ-347

2-बच्चन : वही पृष्ठ-349

साथ प्रकट हुई है-

"झुकी हुई अभिमानी गर्दन,
बँधे हाथ नत निष्प्रभ लोचन,
यह मनुष्य का चित्र नहीं है, पशु का है रे कायर !
प्रार्थना मत कर, मत कर, मतकर ।"[1]

प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण करते हुए भी कवि ने अपने आशावाद को प्रकट किया है । दृढ़ विश्वास को बनाए रखना कोई आसान काम नहीं है । यही कारण है कि प्राकृतिक उपादानों के द्वारा भी कवि की आशावान कल्पना अपनी रंग छटा को मुखरित कर रही है । यथा-

"प्रलय का सब समाँ बाँधे
प्रलय की रात है छायी
विनाशक शक्तियों की इस तिमिर के बीच बन आयी,
मगर निर्माण में आशा दृढ़ाये कौन बैठा है ?
अँधेरी रात में दीपक जलाये कौन बैठा है ?"[2]

बच्चन जी की यह भोली किन्तु ओजपूर्ण कल्पना है कि मनुष्य को अपने पूर्वजों से यदि विरासत में कुछ प्राप्त हुआ है तो वह आशा ही है अतः वह बार-बार मनुष्य को आशावान बनने की प्रेरणा दे रहा है -"सुन यदि तूने आशा छोड़ी तो अपनी परिभाषा छोड़ी, तुझे मिली थी यह अमरों की केवल एक निशानी, मानी, देख न कर नादानी ।"[3]

बच्चन जी ने निरन्तर कर्म करते रहने की प्रेरणा दी है, मेहनत के द्वारा क्या नहीं किया जा सकता ? आशा और विश्वास रूपी मंच पाके कवि की कल्पना

- -

1- बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृष्ठ-254

2- बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृष्ठ-334

3- बच्चन : वही पृष्ठ-348

उसकी थिरकन हम और आप भी महसूस कर सकते हैं । यथा-

"मेहनत ऐसी चीज कि निकले तेल छलाछल रेत में,
आशा घर में दीप जलाये, सपना खेले खेत में ।"[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि की कल्पना ने जीवन के विविध पक्षों को अपनी रंग-बिरंगी सतरंगी चादर में लपेट लिया है ।

यद्यपि बच्चन जी ने प्रकृति में विशेष आकर्षण का अनुभव नहीं किया फिर भी उनकी कविताओं में प्रकृति अपने इन्द्रधनुषी रंगों में सर्वत्र अपनी सौन्दर्य-सुषमा बिखेर रही है । कवि ने स्वयं स्वीकार किया है कि प्रकृति पर मैं कविता लिखता ही नहीं[2] और प्रकृति चित्रण को सृजन का लक्ष्य बनाना तो दूर प्रमुखता देना भी कभी मेरा ध्येय नहीं रहा ।[3] किन्तु सौन्दर्य-प्रेमी व कल्पना-प्रवण होने के कारण अनजाने में ही स्वतः कवि से ऐसी सुन्दर-सुन्दर कविताओं का सृजन हो गया है जो प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण व सराहनीय कविताएं हैं । कवि ने प्रकृति के बहुत सुन्दर-सुन्दर काल्पनिक चित्र खींचे हैं जो चित्र की सजीव उपस्थिति कराने में सर्वथा समर्थ भी हैं । यथा-

शिथिल पड़ी है नभ की बाहों में रजनी की काया,
चाँद चाँदनी की मदिरा में है डूबा, भरमाया,
अलि अब-तक भूले-भूले से रस-भीनी गलियों में,
प्रिय, मौन खड़े जलजात अभी मत जाओ,
प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ ।[4]

रात्रिकालीन इस दृश्य में कवि को असंख्य पदार्थों का सौन्दर्य दृष्टिगत

- -

1- बच्चन : चार खेमे चौसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-510

2- बच्चन : नए पुराने झरोखे §खण्ड-6§ पृष्ठ-212

3- बच्चन : वही पृष्ठ-288

4- बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-61

हो रहा होगा किन्तु कवि की कल्पना मुख्य प्राकृतिक पदार्थों में ही खोकर रह गयी है, कवि अपनी प्रियतमा प्रेयसी से अनुनय-विनय कर मनुहार कर रहा है कि अभी प्रातः बहुत दूर है, जब आकाश रूपी प्रियतम की बाहों में रजनी रूपी प्रिया समाई हुई है और चन्द्रमा भी चाँदनी की मादक मस्ती में डूबा हुआ है तो हम लोग ही क्यों शान्त रहें, इस सुन्दर वातावरण में आबद्धपाश हो, परस्पर प्रेम में खो जाएं, क्यों कि अभी रात्रि है, प्रातः होने में बहुत देर है ।

कवि ने जिस प्रकार प्रकृति के सुन्दर व कमनीय रूपी की झांकी प्रस्तुत की है उसी प्रकार प्रकृति के कठोर व निर्मम रूप की भी कल्पना की है । भयंकर झंझावात का एक चित्र कवि ने प्रस्तुत किया है जिसमें तेज आँधी के द्वारा उखड़े वृक्षों व जल प्रवाह पर ध्वस्त घर-नगर व ग्रामों की दुर्दशा को चित्रित किया है । कवि की कल्पना का ही परिचय देतीं हैं ये प्रस्तुत पंक्तियाँ-

"वह नभ कम्पनकारी समीर,
जिसने बादल की चादर को दो झटके में कर तार-तार
दृढ़ गिरि श्रृंगों की शिला हिला, डाले अनगिन तरुवर उखाड़,
होता समाप्त अब वह समीर कलि की मुसकानों पर मलीन !
× × × × × ×
वह जल प्रवाह उद्धत - अधीर,
जिसने क्षिति के वक्षस्थल को निज तेज धार से दिया चीर,
कर दिये अनगिनत नगर-ग्राम-घर बेनिशान कर मग्न-नीर,
होता समाप्त अब वह प्रवाह तट-शिला-खण्ड पर क्षीण-क्षीण ।[1]

'मधुशाला' काव्यकृति में कवि को समस्त प्रकृति मधुमय दृष्टिगोचर होती है, कवि सूर्य को मधु विक्रेता व सागर को घट तथा जल को हाला बनने की कल्पना करने लगता है तथा प्रकृति के अन्य उपादान साकी, प्याला व मधुशाला बन जाएं ऐसी बच्चन जी की मधुर कल्पना यहाँ मुखरित हुई है । यथा-

- -

1- बच्चन : आकुल-अन्तर §खण्ड-1§ पृष्ठ-276

"सूर्य बने मधु का विक्रेता, सिन्धु बने घट, जल हाला,
बादल बन-बन आये साकी, भूमि बने मधु का प्याला ।
झड़ी लगाकर बरसे मदिरा रिमझिम, रिमिझिम, रिमझिमकर,
बेलि, विटप, तृण बन मैं पीऊँ, वर्षा ऋतु हो मधुशाला ।"[1]

कवि कल्पना में इतना अनुरंजित हो जाता है कि उसे पौधे, फूल तथा भ्रमर-दल सभी मधुशाला के उपादान प्रतीत होने लगे । कवि की सुन्दर कल्पना यहाँ द्रष्टव्य है-

"पौधे आज बने हैं साकी ले ले फूलों का प्याला,
भरी हुई है जिनके अन्दर परिमल, मधु-सुरभित हाला,
माँग-माँगकर भ्रमरों के दल रस की मदिरा पीते हैं
झूम-झमक मद-झम्पित होते, उपवन क्या है मधुशाला ।"[2]

रात्रिकालीन वातावरण का कवि ने एक चित्र खींचा है । अपने विदेश प्रवास के दौरान कवि ने अपनी पत्नी तेजी बच्चन को जो गीत लिखे थे वे 'प्रणय-पत्रिका' में संग्रहीत हुए । अपनी प्रेयसी की स्मृति में कवि खो गया है और उन सभी प्राकृतिक उपादानों को रेखांकित कर रहा है, जहाँ उसकी प्रिया विश्राम कर रही है, शयन कर रही है, कवि कल्पना में सभी को पार कर प्रिया के निकट पहुँच जाता है । यथा-

"समतल भू-तल, बत्ती की पाँतों के पहरे में सुप्त नगर,
अम्बर को दर्पण दिखलाते सरवर, सागर, मधुबन, बंजर,
हिमतरु-मण्डित नंगी पर्वत-माला, मरुथल जंगल दलदल-
सबकी दुर्गमता के ऊपर मुसकाता हूँ ।
हर रात तुम्हारे पास चला मैं आता हूँ ।[3]

बसंत ऋतु के आगमन पर सर्वत्र सौन्दर्यश्री छायी हुई है, और प्रकृति के कण-कण में कवि को मादकता और प्रणय की झलक मिलती है । आम्र-मंजरी पर

1- बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू0-30 पृष्ठ-49

2- बच्चन : वही रू0-33 पृष्ठ-49

3- बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ पृष्ठ-109

कूकती हुई कोयल को देखकर कवि आनन्द से रोमांचित हो उठता है । बसन्त-दूत के कूजन से मानों कवि का हृदय भी पुलकित हो उठा है । यथा-

"बसन्त-दूत कुंज-कुंज कूकता,
बसन्त-राग कुंज-कुंज फूँकता,
पराग से सजी सुहाग मंजरी,
बसन्त गोद में लसी प्रकृति परी ।
प्रणय-सन्देश कुंज-कुंज गूँजता,
प्रणय स्वरूप को सदैव पूजता,
कहाँ स्वरूपिनी न स्नेह पर ढ़री,
बसन्त गोद में झुकी प्रकृति परी ।
बसन्त दूत मुग्ध मूक हो गया
बसन्त-बात गन्ध-मन्द सो गया,
हुई सफल-विनम्र आम्र मंजरी,
बसन्त गोद में गड़ी प्रकृति परी ।"[1]

प्रायः प्रकृति का मानवीकरण रूप ही कवि ने उभारा है । प्रकृति में स्त्री-पुरुष के सफल प्रेम को कवि ने आरोपित किया है । सम्पूर्ण प्रकृति में कवि को प्रेम व्यवहार की अनुभूति होती है । कवि की मनोरम कल्पना प्रकृति में विचरण कर रही है-

"किरण छिपी तड़ाग अन्तराल में,
सिमट गयी सरोजिनी मृणाल में,
अगीत हो गया सभीत भृंग दल,
प्रणय सजग हुआ, हृदय हुए विकल ।
कुसुम-कली सुगन्ध सेज पर सजी,
मधुर-मधुर सुवर्ण पैंजनी बजी,
पुलक प्रफुल्ल आज कामना सकल,
प्रणय सफल हुआ, हृदय मिले पिघल ।
किरण खिली, विहँस पड़ी मृणालिनी,
ध्वनित हुई विमुक्त भृंग-रागिनी,
हिली सकुच विलास-बाहु-वासिनी,
सटे अधर हटे हुए नयन सजल ।"[2]

1- बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-71।
2- बच्चन : वही पृष्ठ-74

जब कभी कवि प्रकृति की ओर देखता है तब उसमें कल्पना के स्वाभाविक रंग बिखर उठते हैं । प्रकृति की नैसर्गिक शोभा को देखकर बरबस ही कवि रंगीन प्रकृति को भी कल्पना के रंगों से भर देता है-

"अम्बर ने ओढ़ी है तन पर चादर नीली-नीली,
हरित धरित्री के आँगन में सरसों पीली-पीली,
सिन्दूरी मंजरियों से है अम्बा शीश सजाये,
रोलीमय सन्ध्या-ऊषा की चोली है,
तुम अपने रंग में रंग लो तो होली है ।"[1]

प्रकृति चित्रण में भी कवि की कल्पना यथार्थवाद का पल्ला नहीं छोड़ पाती । पर-दोषों को देखना और झूठ का सहारा लेना जैसे अवगुणों को रेखांकित करते हुए भी प्रकृति का एक काल्पनिक विम्ब उभारने में कवि पूर्ण सफल हुआ है-

"सन्ध्या की श्यामल अलकों ने घेर लिया अम्बर का आनन,
अवनी की अलसित पलकों पर तन्द्रा तिरती आती क्षण-क्षण,
बन्द हुए जग-नयन जिन्होंने पर-दूषण पर-दोष निहारा,
मौन हुई जग-जिह्वा करके झूठा-सच्चा निन्दन-वन्दन,
आजादी की एक साँस से सुरभित हुई प्रणय की बेला,
अब निर्भय, निःशंक, निराकुल मुग्ध गगन के नीचे हम-तुम ।
अस्त हुआ दिन, मस्त समी रण मुक्त गगन के नीचे हम-तुम ।
पिछले पहलू दबे पाँवों से आती है चाँदनी सहमती,
हवा लदी फूलों की बू से चलती है पग-पग पर थमती,
आसमान पर पहरा देते ऊँघ रही तारों की आँखें,
औ' धरती के कण-कण में है मीठी-मीठी नींद विलमती ।"[2]

काव्य में अप्रस्तुत विधान का मूल आधार भी कल्पना ही है । कविगण अपनी भावनाओं को प्रवणता सहित प्रेषित करने के लिये आलंकारिक प्रयोग करते हैं । अप्रस्तुत को प्रस्तुत करना कवि की कल्पना शक्ति की उपादेयता ही है ।

1- बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ पृष्ठ-100

2- बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृष्ठ-63

बच्चन जी के काव्य में ऐसी अनेक कल्पनायें हैं । नागिन के रूप-सौन्दर्य और गुणों का उद्घाटन कवि की सफल कल्पनाशक्ति का परिचायक है । यथा-

"तू मनोमोहिनी रंभा-सी, तू रूपवती रति-रानी-सी,
तू मोहमयी उर्वशी सदृश, तू मानमयी इन्द्राणी-सी,
तू दयामयी जगदम्बा-सी, तू मृत्यु सदृश कटु, क्रूर निठुर,
तू लयंकारी कालिका सदृश, तू भयंकारी रुद्राणी-सी,
तू प्रीति, भीति, आसक्ति घृणा की एक विषम संज्ञा बनकर,
परिवर्तित होने को आयी मेरे आगे क्षण-प्रतिक्षण में ।
नर्तन कर, नर्तन कर, नागिन मेरे जीवन के आँगन में ।"[1]

'सतरंगिनी' में संगृहित 'कोयल' कविता कवि की अपार कल्पना शक्ति का परिचय देती है । कवि ने कोयल की काया काली कैसे हो गयी ? इस बात की बहुत सुन्दर अभिव्यंजना की है । एक लघु कथा के समान यह कविता कोयल के त्याग व बलिदान को चित्रित करती है । 'दो चट्टानें' काव्यकृतियों में कवि की कल्पनाशक्ति देश और काल की सीमाओं को लाँघकर पूर्ण प्रशंसनीय हो गयी है । यह एक प्रतीकात्मक लम्बी कविता है । यूनानी दन्तकथाओं के अनुसार मृत्यु को बन्दी बना लेने के अपराध में सिसिफस को अनन्तकाल तक एक चट्टान को ठेलकर पर्वत की चोटी तक ले जाना और नीचे लुढ़का कर पुनः चोटी तक ले जाने वाले निष्फल परिश्रम को रेखाँकित किया है । यथा-

"एक अनगढ़ संगमरमर की बड़ी चट्टान को वह
ठेलकर ले जाय गिरि के श्रृंग धर पर
और जब पहुँचे वहाँ पर लुढ़कती नीचे गिरे वह
और सिसिफस फिर उसे ले जाय ऊपर !
और निरवधि काल तक अविरत अहर्निश क्रम चले यह ।"[2]

यह कवि की नितान्त मौलिक कल्पना है जो विदेशी संस्कृति पर स्वदेशी

- -

1- बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृष्ठ-334-335

2- बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृष्ठ-120

भारतीय संस्कृति की विजय पताका फहराती है, क्यों कि सिसिफस का निष्फल श्रम है तथा हनुमान का सार्थक श्रम आनन्ददायक है । यथा- "शक्ति लगी लक्ष्मण को सीतापति घबराये, एक रात में हनुमान द्रोणाचल को जड़ से उखाड़कर उत्तर से दक्षिण को लाये, जागे लक्ष्मण सोया रावण, निर्भय होकर, हर्षे सुरगण ! सर्व-लोकहित जीवनदानी जयदानी औ' उभय प्रदानी उसे समझकर, संजीवनी का पर्वत तब से एक हाथ पर नित्य उठाये ।"[1] सिसिफस का चट्टान उठाना निरर्थक श्रम है जबकि हनूमान का संजीवनी पर्वत को उठाना सार्थक श्रम है । कवि की कल्पना ठोस धरातल पर आसीन है यही कारण है कि वह निरर्थक श्रम को कष्टकारी तथा सार्थक श्रम को आनन्ददायक सिद्ध करता है, किन्तु कवि ने सिसिफस के कर्मवीर रूप को बड़ी सफलता से अनुभव किया है, जो मृत्यु को बंदी बनाना चाहता है । सिसिफस के अपने काम के प्रति सबल अनुराग व दृढ़ विश्वास को कवि ने अनुभव किया, यही कारण है कि उसकी कर्तव्य-भक्ति और उसकी मनोदशा को कवि ने कल्पना शक्ति के द्वारा बड़ी कुशलता व हृदय स्पर्शिता के साथ अभिव्यक्त किया है ।

अनेक स्थलों पर हमें कवि की नितान्त नवीन व मौलिक कल्पनाओं के दर्शन होते हैं । कवि की नवीन उद्‌भावनाओं में भी भाव सरसता व उत्कर्ष दिखाई पड़ता है, मनुष्य के हृदय की थाह पाना, उसकी अन्तरंग बात को जानना कितना दुष्कर कार्य है । इन्हीं भावों को कवि ने कल्पना से अतिरंजित किया है, बहुत ही सुन्दर कल्पना है-

"कहा कुबेरिन ने कुबेर से, 'मानव के उर को छू लेना सहज नहीं है ।' कहा कुबेरिन

- -

1- बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृष्ठ-136

से कुबेर ने सहज नहीं है । महाकठिन है । ---- एक लाख टंकों की गड्डी सीधी अंगर खड़ी की जाये, तप तरुवर सी लम्बी होगी औ' उस चाँदी की सीढ़ी चढ़ मानव के उर को छू लेना सम्भव होगा । कहो, न होगा ? कहा कुबेरिन ने कुबेर से, निश्चय होगा; एक और भी मेरी माने, जो मानव के उर को छूलें उसको वह सीढ़ी दे डाले । और कल्पना मैं करता हूँ धन-कुबेर ने एवमस्तु कह लाख-लाख टंकों की ढ़ेरी लगवा दी है ।"[1] यह कवि का मनुष्य के लिये एक चुभता हुआ काल्पनिक किन्तु सत्य व्यंग्य है, वास्तव में मानव का हृदय छूना आसान काम नहीं, वरन् महा कठिन काम है ।

कल्पना का स्रोत सर्वप्रथम कहाँ मिला था इसका भी कवि ने उल्लेख किया है अर्थात कवि ने कल्पना करना कहाँ से और कैसे सीखा इसका भी विश्लेषण किया है । बरसात के दिनों में बादलों की गड़गडाहट और बिजली का चमकना बच्चन जी के बाल सुलभ कोमल मन को अनेक प्रश्नों से भर देता है उन्हीं प्रश्नों के उत्तर में उनकी दीदी कवि को कल्पनालोक में पहुँचा देती है । यथा-

> 'बोलो दीदी यह गड़-गड़ का शोर कहाँ से नीचे आता ?
> इन्द्र हुआ असवार-अश्व पर बादल पर उसको दौड़ाता,
> नालों से जो फूट कभी है पड़ती चिनगारी, वह बिजली,
> गर्जन है, टापों के पड़ने से देते जो शब्द सुनाई ।
> राह कल्पना की तुमने ही सबसे पहले थी दिखलाई ।'[2]

'रात का अपराध' कविता प्रतीकात्मक शैली में लिखी गयी काल्पनिक कविता है, जहाँ कवि ठोस धरातल पर खड़ा है, रात्रि के मौन सन्नाटे में होने वाले अन्याय और अत्याचारों को कवि ने उभारा है । उलूकों के दल द्वारा एक

1- बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-3§ पृष्ठ-362

2- बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृष्ठ-218

नीड़ में सोए पक्षी के सम्पूर्ण परिवार व बच्चों को, जिनके अभी बाल और पर भी नहीं उगे, खा जाने पर कवि कल्पना कर रहा है कि ऐसा ही तो इस समाज में हो रहा है, और कोई भी सच कहने की हिम्मत नहीं रखता । यथा-
"पूँछता हूँ घटना यह दर्दनाक हुई थी किस पर ? तरुओं की मौन पाँत विद्यार्थियों की खड़ी हो जैसे जमात, मास्टर के पूछने पर, किसकी है शरारत ? जैसे सबने लगाया चेहरा भोलेपन का; किसी एक अपने साथी के कसूर को जैसे न बताने की आपस में सलाह-सी कर ली हो सबने । मौन गगन, मूक धरा, डोलती नहीं है हवा, प्रकृति पर छाया एक भेद-भरा सन्ताप, माँ जैसे बैठी हुई बेटे का छिपाये पाप ।"[1]

'बुद्ध और नाचघर' शीर्षक कविता में तो कवि की कल्पना व वाग् - विदग्धता देखते ही बनती है, व्यंग्य के द्वारा कवि ने सम्पूर्ण मानव जाति को बेध दिया है । मनुष्य की हैवानियत का खुला रूप कवि ने समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है । धार्मिक स्थलों की व्याख्या कवि ने इस प्रकार प्रस्तुत की है -

"कि अगर अपनी प्रेयसी से करते हो तुम प्रेमालाप
और पहुँच जाय तुम्हारे अब्बाजान,
तब क्या होगा तुम्हारा हाल ।
तबीयत पड़ जायेगी ढ़ीली,
नशा सब हो जायेगा काफूर,
एक-दूसरे से हटकर दूर
देखोगे न एक-दूसरे का मुँह ?
मानवता का बुरा होता हाल
अगर ईश्वर डटा रहता सब जगह, सब काल ।
इसने बनवाकर मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर
खुदा को कर दिया है बन्द,
ये हैं खुदा के जेल,

1- बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृष्ठ-288

जिन्हें यह-देखो तो इसका व्यंग्य-
कहती है श्रद्धा-पूजा के स्थान ।
कहती है उनसे,
"आप यहीं करें आराम,
दुनिया जपती है आपका नाम,
मैं मिल जाऊँगी सुबह शाम,
दिन रात बहुत रहता है काम ।"
अल्ला पर लगा है ताला,
बन्दे करें मनमानी, रंगरेल ।
वाह री दुनिया,
तूने खुदा का बनाया है खूब मजाक,
खूब खेल ।[1]

'त्रिभंगिमा' काव्यकृति में संगृहीत अधिकाँश कविताओं में कवि ने व्यंग्यात्मक लहजे में कल्पनामिश्रित भावों को शब्दों में बाँधा है जो कवि की अपरिमित कल्पनाशक्ति का परिचय देते हैं । सिन्धु-मन्थन जैसी पौराथिक कथाओं को कवि ने कल्पना के नए रूप-रंग से सजाया है ।

आज इस मंहगाई के युग में रुपये का मूल्य घट गया है और इन्सान की आवश्यकताएं बढ़ गयी हैं । भौतिकता की मूलभूत माँग आज रुपया ही बनकर रह गई है । अपनी इसी अनुभूति को कवि ने बहुत ही सुन्दर ढ़ंग से कल्पना के माध्यम से उजागर किया है । प्रस्तुत लोकगीत में एक पत्नी अपने पति से प्रकारान्तर से रुपये की महत्ता व बहुमूल्यता को प्रतिपादित कर रही है । कवि की कल्पना प्रशंसनीय है । यथा-

'आज मंहगा है, सैंया रुपैया ।
रोटी न मंहगी है,
लहंगा न मंहगा है,
मंहगा है सैया, रुपैया ।

1- बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृष्ठ-351-352

आज महँगा है, सैयाँ, रुपैया ।
गाँधी न नेता,
जवाहर न नेता,
नेता है सैंया रुपैया ।
मगर महँगा है, सैंयाँ, रुपैया ।"[1]

मनुष्य से होती हुई विलुप्त मनुष्यता को देखकर 'बच्चन' जी दुखी हैं । आज अन्याय, अत्याचार, आतंक को बढ़ावा देने वाला मनुष्य ही तो है जो अपने आचरण, व्यक्तित्व, ममता तथा विवेक को त्याग कर, युग-युग की सभ्यता को त्यागकर नंगा नाच कर रहा है । कवि मनुष्य का एक काल्पनिक चित्र बनाता है, वह बनाता कुछ है किन्तु वह स्वतः ही कुछ और बन जाता है । कवि की भव्य कल्पना द्रष्टव्य है- "देवलोक से मिट्टी लाकर मैं मनुष्य की मूर्ति बनाता रचता मुख जिससे निकली हो वेद-उपनिषद की वर वाणी, काव्य-माधुरी, राग-रागिनी जग-जीवन के हित-कल्याणी, हिंस्त्र जन्तु के दाढ़-युक्त जबड़े-सा पर वह मुख बन जाता । देवलोक से मिट्टी लाकर मैं मनुष्य की मूर्ति बनाता ।"[2]

कवि की परवर्ती रचनाओं में व्यंग्य का जो स्वर उभरा है वह कल्पना प्रसूत तो है ही साथ ही यथार्थ के ठोस धरातल पर स्थित है । नेताओं और पूँजीपतियों पर कवि ने करारा व्यंग्य किया है । कवि ने आशा, विश्वास, प्रेम, नियति, निराशा इत्यादि अनेक विषयों पर अपनी कल्पना की उड़ान भरी है । 'जीवन परीक्षा' कविता में कवि की सुन्दर व भोली कल्पना द्रष्टव्य है, जिसे पढ़कर सहसा सभी को वही अनुभूति होती है जो कवि को हुई है ।

- -

1- बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृष्ठ-510-511

2- बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृष्ठ-146

यथा- "जिन्दगी तो इम्तहाँ-दर-इम्तहाँ है ।
एक दिन मुझको परीक्षा मौत की माता लगी थी,
और परचे पर छपी लिपि दण्ड की गाथा लगी थी,
गृद्ध-सा बैठा निरीक्षक काल था साकार मुझको,
थी गनीमत यह कि घड़ियाँ पर लगाकरके भगी थीं,
औ' परीक्षक नियति का हथियार था कोई अजाना,
कल्पना सौ बार दिन में पूँछती थी, वह निठुर कैसा कहाँ है ।
जिन्दगी तो इम्तहाँ-दर-इम्तहाँ है ।"[1]

इस प्रकार 'बच्चन' जी के कृतित्व पर आद्योपांत दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि वे जीवन के गीत गाने वाले कवि हैं । जीवन के सुख-दुख ही उनकी अनुभूति और अभिव्यक्ति के विषय हैं । जहाँ कहीं भी कवि ने जीवन, जगत और प्रकृति की ओर निहारा है, वहीं कवि की कल्पना ने स्वस्थ आशा-वादी दृष्टिकोण के विविध रंग भरे हैं । कल्पना उनके काव्य में भावोत्कर्षकारिणी बनकर उपस्थित हुई है । 'बच्चन' जी की कल्पना-शक्ति पर्याप्त सशक्त, भावप्रवण एवं मार्मिक है और अनुभूति पर आधृत है ।

1- बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-2§ पृष्ठ-78

अध्याय - चार

बुद्धितत्त्व की दृष्टि से "बच्चन" का कृतित्व

अ ध्या य - 4

बुद्धित्व की दृष्टि से बच्चन का कृतित्व

बच्चन जी का जीवन दर्शन उनके काव्य दर्पण में पूर्णरूपेण प्रतिबिम्बित हुआ है । वे मानवतावादी रचनाधर्मी कृतिकार हैं । उन्होंने आशावादी जीवन-दृष्टि लेकर शोषणमुक्त समाज की संरचना में अपने दायित्व को पूरा किया है । सामाजिक, राजनीतिक व धार्मिक शोषण और उत्पीड़न को कवि की दृष्टि ने बड़ी गम्भीरता और सूक्ष्मता से अनुभव ही नहीं किया वरन् उनकी पीड़ा काव्य में साकारता पा सकी है । वहीं उन्होंने विसंगतियों के प्रति समाज को सचेष्ट किया है, कहीं अपनी व्यंग्य फूत्कार से शोषकों और उत्पीड़कों के प्रति विषवमन भी किया है । वे राष्ट्र के प्रति समर्पित और आस्थावान कवि के रूप मे हमारे सामने आये हैं । देशभक्ति की लालसा लिये कवि का चिन्तन समूची मानवता के प्रति एक समान आदर और प्रेम प्रकट करता है ।

समाज में व्याप्त ऊँच-नीच, जाति-पाति और छुआछूत जैसे भेद-भावों ने कवि के चिन्तन को झकझोरा है । समाज की इन विसंगतियों और विद्रूपताओं के प्रति उनका गम्भीर चिन्तन मधुशाला और अन्य परवर्ती काव्य-कृतियों में प्रत्यक्ष हुआ है । स्वस्थ आशावादी चिन्तन, विशुद्ध मानवतावादी दृष्टि, सामाजिक विद्रूपताओं के प्रति हुँकार, सर्वधर्म समभाव, राष्ट्र के प्रति समर्पण इत्यादि अनेक विध कवि का जीवन दर्शन है इसे कतिपय विन्दुओं में विभक्त कर यहाँ कवि की बौद्धिक चेतना को स्पर्श करने का प्रयास करूँगी ।

1. राष्ट्रीय चिन्तन :- राष्ट्र के प्रति निष्ठा व आस्था तो सभी के हृदय में होती है किन्तु कुछ व्यक्तियों में यह आस्था अधिक होती है, कुछ में कम ।

साथ ही कुछ अपनी आस्था को व्यक्त कर सकते हैं, कुछ नहीं । किन्तु कवि एक ऐसे विशिष्ट व्यक्तित्व वाला होता है जो अपने छोटे-बड़े, अच्छे-बुरे सभी भावों व अनुभवों का सार-निचोड़ कुछ शब्दों में बाँधकर अमर हो जाता है । ऐसी ही अनुपम प्रतिभा के धनी कवि सिरमौर बच्चन जी हैं, जिन्होंने सभी भावों व विचारो को छुआ है, कुछ भी उनसे अनछुआ नहीं है ।

राष्ट्र के प्रति आस्था और समर्पण की भावना कवि के समग्र कृतित्व में दृष्टिगत होती है । बच्चन ने जब काव्य-जगत में अपने पावन-चरण रखे थे उस समय भारतीय राजनीति में भयंकर उथल-पुथल मची हुई थी । अंग्रेजों का आतंक चहुँओर छाया हुआ था । स्वाभाविक है कि अंग्रेजों की प्रलयंकारी गतिविधियो का प्रभाव कवि के मानस-पटल पर पड़ा होगा और चूँकि कवि अपने युग का प्रतिनिधि होता है, सृजेता होता है अतः उसके कृतित्व मे वह सारा युग प्रतिविम्बित होता है । अतः कवि की लेखनी से स्वतः ही राष्ट्रवादी या राष्ट्रीय काव्य का सृजन हुआ है ।

हिन्दी साहित्य के इतिहास का अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि हिन्दी साहित्य में बहुत प्राचीन काल से ही राष्ट्रीय भावना का सन्निवेश पाया जाता है । हमारे प्राचीन ग्रन्थ वेदों, पुराणों और शास्त्रों में भी राष्ट्रीय भावना के अनेकानेक प्रकार के दर्शन प्राप्त होते हैं । अथर्ववेद[1] और ऋग्वेद[2] में राष्ट्रीयता के विभिन्न आयामों को देखा जा सकता है ।

राष्ट्रीयता को व्यक्त करने के लिये यह आवश्यक नहीं कि हम

- -

1. अथर्ववेद संहिता, 6/78/2, पृष्ठ-131 सं. श्री दा. सातवलेकर, प्रकाशक
2. ऋग्वेद, 10/191/2 स्वाध्याय मण्डल §पारडी§ §सुधावहन पटेल§

राष्ट्र शब्द की व्युत्पत्तिपरक व्याख्या प्रस्तुत करें, बल्कि यह महती आवश्यकता है कि कवि ने कब और किन परिस्थितियों, मनःस्थितियों में राष्ट्रीय काव्य का सृजन किया ।

विदेशी आक्रमणों के कारण भारतीय साहित्य में राष्ट्रीयता की भावना नित्य प्रति प्रबल से प्रबलतर होती गयी । वीरगाथा काल से लेकर आधुनिक काल तक अनेकानेक कवियों ने राष्ट्रीय-काव्य का सृजन किया है । वास्तव में हिन्दी में राष्ट्रीय साहित्य की गतिशील और अजस्त्र धारा भारतेन्दु युग से आरम्भ होती है, द्विवेदी युग का साहित्य तो इससे सराबोर ही हो उठा है । अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' 'मैथिलीशरण गुप्त' रामनरेश त्रिपाठी, सनेही जी इत्यादि इस युग के प्रसिद्ध कवि हैं । छायावादी कवि भी प्रेम, सौन्दर्य, स्वप्निलता, अतीन्द्रियता से बाहर निकले और राष्ट्रीय आन्दोलनों का प्रभाव उनके काव्य में भी देखा जा सकता है । छायावाद के प्रमुख चार आधार स्तम्भ प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी के साथ ही डॉ॰ रामकुमार वर्मा की राष्ट्रीय रचनाएं प्रेरणादायी और ग्राह्य हैं ।

छायावादी युग में राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रभाव विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है । बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', रामनरेश त्रिपाठी, रामधारी सिंह 'दिनकर' जैसे कवि इन राष्ट्रीय आन्दोलनों से प्रभावित हुए और उनकी चिन्तनधारा राष्ट्र की ओर उन्मुख हुई । इसी प्रकार बच्चन जी भी राष्ट्रीय भावनाओं से अछूते नहीं रह सके उनकी चिन्तनधारा भी राष्ट्रप्रेम की ओर उन्मुख हुई उनके इस चिन्तन का प्रतिफलन उनके काव्य में पर्याप्त मात्रा में दिखाई देता है । 1907 में जन्मे बच्चन जी ने अपनी बाल उम्र 12 वर्ष की अवस्था में जलियाँ-वाला काण्ड की घटना को बड़ों-बूढ़ों के मुख से सुना था ।[1] ई. सं. 1926 में

क्रान्तिकारियों को बच्चन ने निकट से देखा । क्रान्तिकारी आन्दोलन की सरगर्मी के साथ-साथ भगतसिंह के बलिदान से देश स्तब्ध रह गया ।

एम. ए. प्रीवियस की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात बच्चन जी ने पढ़ाई छोड़ दी । विभिन्न राजनीतिक घटनाओं से बच्चन जी अछूते नहीं रहे और उन्होंने सभाओं मे शामिल होना, भाषण देना, जुलूसों में नारे लगाना और खद्दर का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया । जुलूसों में गीत गाने के लिये कवि ने स्वयं ही गीतों का सृजन किया, जिनमें- सर जाये तो जाये पर हिन्द आजादी पाये । वाला गीत बहुत प्रसिद्ध हुआ ।[1] कवि ने अपनी प्रारंभिक रचनाओं में ही राष्ट्र के प्रति निष्ठा व आस्था को स्पष्ट किया है । राष्ट्रपिता बापू जी के प्रति उन्होंने अपनी आस्था व्यक्त की है-'गाँधी जी के विलायत प्रस्थान पर भारत माता की विदा' नामक लम्बी कविता मातृत्व प्रेम से पूरित है । जिस प्रकार एक माता अपने पुत्र की दीर्घायु की कामना करती है तथा उसके एक कष्ट पर चीत्कार कर उठती है उसी प्रकार भारत माता भी अपने पुत्र पर रंचमात्र भी आँच नहीं आने देना चाहती और चेतावनी देती हुई कहती है-

'हमारी खेल चुके हैं गोद महाराणा से वीर महान,
शिवाजी और गुरु गोविन्द, वली हैदर टीपू सुल्तान ।
शान्ति का मैं भूलूँगी पाठ, करूँगी रणचण्डी-सा नाद,
प्रज्जवलित क्रोध-अग्नि में वेग तुम्हें मैं कर दूँगी बरबाद ।'[2]

'गाँधी जी के जन्मदिन पर भारतमाता की बधाई' शीर्षक कविता में कवि ने बापू के जन्म दिवस पर प्रकृति को सजने-संवरने की आज्ञा दी है ।

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ पृ0-194
2. बच्चन : प्रारंभिक रचनाए भाग दो §खण्ड-3§ पृ0-518

गाँधी जी के विलायत में होने के कारण भारत माता को लज्जा का अनुभव होता है, क्योंकि वे अपने पुत्र को हृदय से नहीं लगा सकतीं-

"किस तरह जन्म दिवस की आज बधाई पहुँचे अति सुकमार
हमारे प्राण लाल के पास, किस तरह, मेरा प्यार-दुलार ।
खींचलो स्नेह-सलिल हे तप्त हृदय के उठते तुम उच्छवास,
बना बादल का टुकड़ा एक. उड़ो प्यारे मोहन के पास ।[1]

'कवि और देशभक्त' कविता में कवि की देशभक्ति प्रशंसनीय है-

'कल्पवृक्ष के अमर फलों को नित्य भले ही खाऊँ,
मातृ भूमि की खट्टी-कच्ची बेरों पर ललचाऊँ ।
जीवन से ऊबा, इच्छा है जन्म न फिर मैं पाऊँ,
यदि जन्म पड़े लेना ही भारत में ही आऊँ ।'[2]

कवि की सर्वाधिक विख्यात कृति 'मधुशाला' राष्ट्रीय भावों को सही अर्थों में व्यक्त करती है और समाज की वर्तमान गम्भीर समस्याओं का हल भी प्रस्तुत करती है । स्वतन्त्रता की कामना से युक्त कवि प्रतीकों के माध्यम से अपनी आस्था को व्यक्त करता है-

'धीरसुतों के हृदय-रक्त की आज बना रक्तिम हाला,
वीरसुतों के वर शीशों का हाथों में लेकर प्याला,
अति उदार दानी साकी है आज बनी भारतमाता,
स्वतन्त्रता है तृषित कालिका, बलिवेदी है मधुशाला ।[3]

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के कारण इन्हें

---

1. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग दो §खण्ड-3§ पृ0-519
2. बच्चन : वही पृ0-521
3. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रूबाई 45 पृ0-051

जेल भी जाना पड़ा ।[1] बच्चन जी के मन में यौवन के प्रारम्भ में ही आर्य समाज के अछूतोद्धार और गाँधी जी के हरिजन आन्दोलन के संस्कार पड़ चुके थे । कवि ने उसका विवरण अपनी आत्मकथा में दिया है- अपने उभरते यौवन के दिनों में आर्य समाज के अछूतोद्धार और बाद को गाँधी जी के हरिजन आन्दोलन के साथ मेरी सहानुभूति जगी तो मुझे इस बात पर गर्व होता था कि मेरी तो एक माँ ही चमारिन चम्मा थी, और जब एक दिन शायद नगर के आर्य समाज में आयोजित किसी प्रीतिभोज में मैंने अछूतों की पंगत में बैठकर कच्चा खाना खा लिया तो मुझे बड़ी प्रसन्नता और सन्तोष का अनुभव हुआ और मुझे लगा कि मैंने चम्मा की बिरादरी के साथ कुछ न्याय किया ।[2]

कवि ने एक बहिष्कृत कायस्थ परिवार में भी रोटी खायी जिससे उस परिवार का उद्धार हुआ और कायस्थों ने बहिष्कृत परिवार से रोटी-बेटी का व्यवहार जोडा ।[3]

'धार के इधर-उधर' काव्यकृति में कवि का यह राष्ट्रप्रेम और भी मुखर हो उठा है । वह पग-पग पर देश के नागरिकों को चेतावनी देता है और शहीदों को गर्व के साथ सलामी देने को कहता है-

'रुको प्रणाम इस जमीन को करो,
रुको सलाम इस जमीन को करो,
समस्त धर्म-तीर्थ इस जमीन पर
गिरा यहाँ लहू किसी शहीद का ।[4]

राष्ट्रध्वजा को अडिग बताते हुए कवि उसके साम-दाम-दण्ड-भेद

---

1. डॉ. नगेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास — पृ0-567
2. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ — पृ0-101
3. बच्चन : वही — पृ0-195
4. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड§ § 2§ — पृ0-170

के समक्ष सगर्व खड़े रहने पर स्वयं गौरवान्वित होता है-

'न साम-दाम के समक्ष यह रुकी,
न दण्ड-भेद के समक्ष यह झुकी,
सगर्व आज शत्रु-शीश पर ठुकी,
निडर ध्वजा हरी, सफेद, केसरी ।[1]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व कवि क्रान्तिदीप का आवाहन करता है । एक राष्ट्रप्रेमी कवि का स्वर क्रान्ति की हुंकार बन जाता है-

'दूर अभी किरणों की बेला, दूर अभी ऊषा का द्वार,
बाड़व-दीपक शीश उठता कँपता तम का पारावार, ।
हर दीपक में द्रव विस्फोटक हर दीपक द्युति की ललकार,
हर बत्ती विद्रोह पताका, हर लौ विप्लव की हुंकार ।[2]

कवि का यह दृढ़ विश्वास है कि एक दिन घायल हिन्दुस्तान उठेगा । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् कवि आजाद हिन्दुस्तान का आह्वान करता है-

"कर रहा हूँ आज मैं आजाद हिन्दुस्तान का आह्वान ।
है भरा हर एक दिल में आज बापू के लिए सम्मान,
हैं छिड़े हर एक दर पर क्रान्ति वीरों के अमर आख्यान,
हैं उठे हर एक घर पर देश गौरव के तिरंग निशान,
गूँजता हर एक कण में आज बन्देमातरम् का गान,
हो गया है आज मेरे राष्ट्र का सौभाग्य स्वर्ण-विहान,
कर रहा हूँ आज मैं आजाद हिन्दुस्तान का आह्वान ।"[3]

बच्चन जी ने वेशभूषा और भाषा की विभिन्नता तथा धर्म, संप्रदाय

- -

1. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-158
2. बच्चन : वही पृ0-148
3. बच्चन : वही पृ0-151

के नाम पर होने वाले झगड़ों को मिटाने के लिये भी देश के नागरिकों को जाग्रत किया है । अखण्ड भारत की कामना से कवि ने राष्ट्रीय ऐक्य की भावना को उभारा है । देश विभाजन की टीस से कवि कराह उठता है और राष्ट्र के नेताओं और नागरिकों को जागृत कर नव निर्माण का पाठ पढ़ाता है और नव विहान की कामना करता है-

'जगह-जगह उड़े निशान देश का,
फरक मिटे जबान और वेश का,
बसेक धर्म हो प्रजा अशेष का-
स्वराष्ट्र-भक्ति व्यक्ति-व्यक्ति व्याप्त हो ।[1]

बच्चन जी की दृष्टि सम्पूर्ण राष्ट्र को एक जुट देखने में है । प्रस्तुत कविता में भी कवि ने भावात्मक एकता को ही लक्ष्य बनाया है । बिखराव को दूर कर एकजुट रहने की शिक्षा दी है-

'सम्पूर्ण जाति के अन्दर जागे वह विवेक-
जो बिखरे हैं, हो जायें मिलकर पुनः एक,
उच्चादर्शों की ओर बढ़ाये चलें पाँव
पदमर्दित कर नीचे प्रलोभनों को अनेक,
हो सकें साधनाओं से ऐसे शक्तिमान,
दे सकें संकटापन्न विश्व को अभयदान ।
आजादी का दिन बना रहा हिन्दोस्तान ।[2]

कवि ने बार-बार राष्ट्र के प्रति अपनी आस्था को चेतावनी के रूप में व्यक्त किया है, देश के नागरिकों को उदबुद्ध किया है ।[3]

- -

1. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-162
2. बच्चन : वही पृ0-162
3. बच्चन : वही पृ0-156-157

कवि ने धर्म निरपेक्ष भारतदेश की अनेकता में एकता की भावना को स्पष्ट किया है । कवि की चेतनानुसार सभी धर्म, सम्प्रदाय वाले मनुष्य अपने धर्म का पालन करने के लिये स्वतन्त्र हैं किन्तु सभी भारतीयों के हृदय में एक ही देवता भारतमाता का वास है । भारतमाता की सेवा करना और रक्षा करना ही भारतवासियों का धर्म और कर्तव्य है । कवि का यही चिन्तन-निम्नलिखित पंक्तियों में प्रत्यक्ष हुआ है-

'हिन्दू अपने देवालय में राम-रमा पर फूल चढ़ाता,
मुस्लिम मस्जिद के आँगन में बैठ खुदा को शीश झुकाता,
ईसाई भजता ईसा को गाता सिक्ख गुरू की बानी,
किन्तु सभी के मन-मन्दिर की एक देवता भारतमाता ।
स्वतन्त्रता के इस सतयुग में यही हमारा नया धरम है,
नया कदम है ।[1]

कवि राष्ट्रभाषा का पक्षधर है, किसी भी देश अथवा जाति की एकता राष्ट्रभाषा पर निर्भर करती है, राष्ट्रभाषा ही एक ऐसा सूत्र है जो सम्पूर्ण राष्ट्र को भावात्मक एकता में बाँधता है, कवि ने भारत राष्ट्र के इस भावात्मक एकता के स्वरूप को छिन्न-भिन्न देखा, भाषा की भिन्नताएं कवि की दृष्टि में राष्ट्रीय एकता को स्थापित करने में बाधक प्रतीत हुईं । अतः कवि ने अपने काव्य में अपने इसी चिन्तन को प्रत्यक्ष किया है-

'कि जो समस्त जाति की उभार हो,
कि जो समस्त जाति की पुकार हो,
कि जो समस्त जाति कण्ठहार हो,
स्वदेश को जबान एक चाहिए ।[2]

- -

1. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-154
2. बच्चन : वही पृ0-156

कवि के हृदय में हिन्दू-मुसलमानों के प्रति भेदभाव वाली भावना नहीं थी, राष्ट्रीय एकता के लिये इससे अच्छी सदभावना नामुमकिन है । कवि ने प्रकारान्तर से दोनों कौमों को सचेत किया है, क्यों कि प्रायः दो की लडाई में तीसरे का फायदा होता है, और यही कारण है कि अंग्रेज अपनी इसी कूटनीति में सफल भी हुए उन्होंने हिन्दू और मुसल्मानों के हृदय में आपसी भेद-भाव और साम्प्रदायिकता की फूट डाली किन्तु गाँधी के सपूत और भारतमाता की सन्तान होते हुए भी भारतीय इस वैषम्य से बंधे रहे । कवि ने इस वैषम्य को बड़ी गहराई से देखा है और इसी लिये उसका हृदय दो टूक हो गया । कवि के इस चिन्तन की कसक निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है-

"पर अब तो अंग्रेज कर चुके प्रयाण,
अपनी कमजोरियों के लिए उनको देना दोष
क्या अब भी है आसान ?
ओ जो तुम हिन्दू,
ओ जो तुम मुसल्मान,
ओ जो तुम कहलाते हो गाँधी के सपूत,
भारतमाता की सन्तान ।[1]

'बंदी' कविता के अन्तर्गत कवि का यह राष्ट्रप्रेम सर्वोपरि हो गया है, देश के प्रति अगाध श्रद्धा की भावना होने के कारण कवि मातृभूमि के ऋण से उऋण होने की कामना करता है किन्तु कवि की दृष्टि में मातृभूमि का ऋण एक ऐसा ऋण है, जिससे व्यक्ति जन्म-जन्मान्तर तक मुक्त नहीं हो सकता कवि का यही चिन्तन, यही बौद्धिकता निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है-

- -

1. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृ0-284-285

'न थी दौलत की चाह, न थी धन की परवाह,
था अपराध हमारा केवल किया देश को प्यार ।
शीश पर मातृ-भूमि-ऋण भार,
उसे हूँ रहा उतार, देश हित कारागार
कारागार नहीं, वह तो है स्वतन्त्रता का द्वार ।[1]

कवि की 'रक्त स्नान' 'अग्नि-परीक्षा', 'मानव का अभिमान', 'युद्ध की ज्वाला', 'इन्सान की भूल', 'पृथ्वी रोदन', 'सृष्टिकार से प्रश्न', 'नभ-जल-थल', 'मानव-रक्त', 'व्याकुल संसार', 'मनुष्य की निर्ममता', और करुण पुकार' इत्यादि कविताएं युद्ध कामी राष्ट्रों की पशुवत प्रवृत्ति के विरुद्ध विरोध पत्र हैं ।[2] इन कविताओं में कवि ने युद्ध प्रेमी राष्ट्र और मनुष्यों का चित्र खींचा है, कवि ने ऐसी विषम परिस्थितियों का नजदीक से अवलोकन किया है । युद्ध की पिपासा और मनुष्य की निर्ममता से कवि का हृदय क्षुब्ध हुआ है । ये कविताएं कवि की घोर वितृष्णा पूर्ण मानसिकता को उजागर करती हैं ।

कवि की स्पष्ट सोच है कि स्वतन्त्रता प्राप्त करना तो कठिन है किन्तु उसे बनाए रखना कठिन वर्षों के त्याग-तपस्या और असंख्य बलिदानों के बल से पायी हुई इस स्वतन्त्रता की रक्षा हमें प्रतिपल, प्रतिक्षण सजग और सन्नद्ध होकर करनी पड़ेगी, क्यों कि नंगी तलवारों की छाया में सुन्दरता विहंरन करती हैं । हमें शत्रुओं से सतर्क रहने के साथ-साथ तथाकथित मित्रों से भी बेखबर नहीं रहना है क्योंकि जीवन के कड़ुवे-मीठे घूँट पीकर कवि ने यह भी जान लिया है कि-

रक्त मेरा माँगते हैं ।
कौन ?

---

1. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग एक §खण्ड-3§ पृ0-459
2. राजानन्द साहित्य संदेश नवम्बर, दिसम्बर 1967 पृ0-195

वे ही दीप जिनको स्नेह से मैंने जगाया ।[1]

राष्ट्र के उत्थान व प्रगति में जहाँ काव्य-कला और ज्ञान-विज्ञान का विकास जरूरी है वहाँ शक्ति संचयन भी अनिवार्य है । विद्या-बल, बुद्धि-बल के साथ-साथ सैन्य-बल की वृद्धि भी आवश्यक है, नहीं तो आजादी कभी भी खतरे में पड़ सकती है । देश की स्वतन्त्रता को अखण्ड रखने में कलम और तलवार, बाँस और लाठी दोनों की महती आवश्यकता है । यह कवि की अपनी निजी अनुभूति व मानसिकता है, कवि ने स्वतः चिन्तन किया कि देश की स्वतन्त्रता और अखण्डता को सुरक्षित रखने के लिये लाठी और बाँसुरी दोनों की जरूरत है। इसी बात को कविवर बच्चन ने 'त्रिभंगिमा' में लोकधुनाश्रित अपने एक गीत 'लाठी और बाँसुरी' में बहुत ही सुन्दर और मोहक अन्दाज में प्रस्तुत किया है ।

और फिर 'अग्निपथ' के कवि बच्चन की इस कविता के रूप में राष्ट्र का संकल्प हो तो हमारी स्वतन्त्रता पर आँच आ ही नहीं सकती-

'वृक्ष हों भले खड़े, हो घने, हों बले
एक पत्र छाँह भी माँग मत, माँग मत, माँग मत
अग्नि-पथ ! अग्नि-पथ । अग्नि पथ ।'[2]

पं. नेहरू की मृत्यु से कवि ने यह अनुभूति की कि हमारे राष्ट्र का एक महापुरुष चला गया जो पर्वत के समान था किन्तु जन-जन के साथ चलता था। ऐसे देश भक्त और परोपकारी व्यक्ति की मृत्यु से कवि का हृदय शोक विगलित हो गया । इसी शोक, दुख और वेदना का प्रस्फुटन उनकी कविता '26 मई' में हुआ है । डॉ. सुधाकर कलवडे जी का यह कथन समीचीन प्रतीत होता- 'बच्चन

---

1. बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृ0-73
2. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-246

जैसे कवि राष्ट्रीय संघर्ष का शंखनाद कर युवकों को समय से मोर्चा लेने के लिये ललकारते हैं ।'[1]

छुआछूत के प्रति कवि का उदार दृष्टिकोण है, बच्चन जी धर्म और जाति के नाम पर अन्याय और अत्याचार नहीं सहन करते । कवि का यह स्वयं का अनुभव है कि बाह्याडम्बर प्रिय धर्म को मानने वाले सदैव ही अनुदार होते हैं और दूसरे धर्म के प्रति घृणा और ईर्ष्या की दुर्भावना को ही पनपने में सहयोग प्रदान करते हैं । अतएव ऐसे खोखले धर्म और जाति से कोई लाभ नहीं है जो छुआछूत और घृणा का पाठ पढ़ाएं । छुआछूत और धार्मिक विसंगतियों को दूर भगाना ही कवि का उद्देश्य है यहाँ कवि का यही बौद्धिक पक्ष उभरकर सामने आता है । इसीलिये कवि 'मधुशाला' और 'मधुबाला' में प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकता की दुर्भावना को मिटाकर और ऊपर उठकर देखने के लिये सद्भावना का संचार करता है-

"विभाजित करती मानव जाति धरा पर देशों की दीवार,
जरा ऊपर तो उठकर देख, वही जीवन है इस-उस पार;

घृणा का देते हैं उपदेश यहाँ धर्मों के ठेकेदार,
खुला है सबके हित, सब काल हमारी मधुशाला का द्वार ।'[2]

'बंगाल का काल' सामयिक भावना को लेकर लिखी गयी कलाकृति है पर वह अपने वैभव से देशकाल की सीमाओं को लाँघकर शाश्वत बन गयी है । आज भी उसका महत्त्व है, कल भी उसका महत्त्व कम नहीं होगा, युग-युग तक वह मानव को जागृति का सन्देश देती रहेगी और उसे अपने अधिकारों के लिये लड़ने-

- -

1. डॉ॰ सुधाकर कलवडे : आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, पृ0-266
2. बच्चन : मधुशाला ¥खण्ड-1¥ पृ0-103

मरने की प्रेरणा देती रहेगी । प्रस्तुत कृति में सम्पूर्ण मानव जाति को जागृत कर अपने अधिकारों की रक्षा हेतु क्रान्ति करने की प्रेरणा देना ही कवि का उद्देश्य है । बंगाल निवासियों की अपंगता और स्वाधिकारों के प्रति अज्ञानता के कारण कवि का मानस-पटल उथल-पुथल करने लगा और उसका बौद्धिक पक्ष इस संज्ञाशून्यता को स्वीकार नहीं कर सका, यही कारण है कि कवि ने 'बंगाल का काल' जैसे क्रान्तिदूत का आह्वान किया ।

कवि के हृदय में राष्ट्र प्रेम की भावना कूट-कूट कर भरी हुई है यही कारण है कि 1943 में पड़े बंगाल के अकाल से कवि का सर्वांग झनझना गया और उसकी आत्मा उन आधे करोड़ बंगवासियों की यादगार में कराह उठी जो बंगाल काल की क्षुधा-ज्वाल में स्वाहा हो गए थे । लगभग 1000 पंक्तियों की यह लम्बी कविता कवि ने 36 घंटों के अनवरत परिश्रम से लिखी थी । यह कवि का राष्ट्र के प्रति आस्थावादी दृष्टिकोण ही है जो उसने बंगलाभाषी प्रदेश के दुःख में सम्मिलित होने के लिये हिन्दी काव्यकृति का सृजन किया, आस्था के साथ उदारता का सन्निवेश हुआ जैसे सोने में सुहागा । गाँधी जी की मृत्यु पर भी कवि ने दो काव्य कृतियों का सृजन किया । 'खादी के फूल' में बापू जी को श्रद्धाँजलि अर्पित की गई है तथा 'सूत की माला' काव्यकृति में बापू के बलिदान सम्बन्धी 111 गीत हैं । कवि बापू जी से पूर्णरूपेण प्रभावित है । 'दो चट्टाने' कविता में कवि ने विश्व-संस्कृति में भेदभाव नहीं रखा और निरर्थक श्रम की अपेक्षा सार्थक श्रम §हनुमान§ को श्रेष्ठ समझा, यह उनकी भारतीय संस्कृति के प्रति गौरव और आस्था की ही भावना है । यूँ तो बच्चन के समकालिक अनेक कवियों ने राष्ट्रीय गीत लिखे हैं किन्तु यह भी निर्विवाद सत्य है कि बच्चन का राष्ट्रीय संग्राम में प्रत्यक्ष योगदान के कारण ही उनके काव्य में राष्ट्र-प्रेम की हार्दिक और

नैसर्गिक आभा है । देश-प्रेम की त्रिवेणी में डुबकी लगाने से कवि का सर्वांग भीग उठा है और आपाद मस्तक देश प्रेम में डूबा होने के कारण कवि के मुख से स्वतः ही राष्ट्र प्रेम के गीत मुखरित हो उठे हैं ।

2. आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चिन्तन :-

पूर्वजों के आशीर्वाद से बच्चन का जीवन सांस्कृतिक-धार्मिक एवं आध्यात्मिक संस्पर्श से युक्त रहा है । घर के सभी सदस्यों में धार्मिक ग्रन्थों एवं देवताओं के प्रति श्रद्धा, भक्ति तथा पूजा-अर्चना की भावना रही है । पिता के सस्वर 'मानस' पाठ के संस्कार बच्चन में गहरे उतरे थे । 'अज्ञात रूप से मेरे अव-चेतन और ज्ञात रूप से मेरे चेतन की शिरा-शिरा मानस की ध्वनियों से भीगी हुई थी ।'[1]

कवि की माँ सुरसती भी भजन, 'रामायण', 'सूर-सागर', 'सुखसागर' और 'प्रेमसागर' का पाठ करती थीं ।[2] पिता के पूजा-कक्ष में दीवाल में राम, कृष्ण, शिव, गणेश, हनुमान, सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा की शीशे जड़ी छोटी-छोटी तस्वीरें लटकी थीं । यही कारण है कि बच्चन की आत्मा आर्य-संस्कृति से ओत-प्रोत है । सत्कर्म, सदाचार, सद्भाव, नैतिकता, देशप्रेम, देशभक्ति और आध्यात्मिकता की वाणी बच्चन के काव्य में प्रकट हुई है । दुःख, दैन्य, दारिद्र्य और संकटों-कठिनाइयों आदि विपरीत परिस्थितियों का सीना तानकर मुकाबला करने वाले कवि बच्चन निरन्तर काव्य पथ पर अग्रसर होते रहे । यही कारण है कि उनके काव्य में आध्यात्मिकता और दार्शनिकता का गहन चिन्तन

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ पृ0-93
2. बच्चन : वही पृ0-88

प्रतिविम्बित होता है ।

कवि की प्रारम्भिक रचनाओं से ही आध्यात्मिकता का दृष्टिकोण परिलक्षित होने लगता है । प्रारम्भिक रचनाओं की 'उपहार'[1] और 'मातृमंदिर'[2] कविता का भाव आध्यात्मिक है । कवि अपने प्रियतम परमात्मा के साथ-साथ नृत्य करना चाहता है, उस विराट सत्ता से कवि विलग नहीं होना चाहता-

'अम्बर के संग नाच रहे हैं अनगिन रवि, शशि, तारे,
धरती के संग नाच रहे हैं गिरि, तृण, तरु छत नारे,
जन्तु-जन्तु के तन्तु-तन्तु में नाच रही अभिलाषा,
अविरत, अविरल, नर्तक दल से मैं ही क्यों कट जाऊँ ।
मेरे प्रियतम नाच रहे हैं, मैं कैसे हट जाऊँ ।'[3]

देह के पंचतत्व के सिद्धान्त को कवि ने बहुत सरल अन्दाज में आध्यात्म से जोड़ा है यह सनातन सत्य भी है, पंच मूलभूत तत्त्वों को कवि ने गीत में ढाला है-

'प्रभु-मन्दिर यह देह, री !
क्षिति की क्षमता,
जल की समता,
पावक-दीपक जागृत-ज्योतित निशि-दिन प्रभु का नेह, री
प्रभु-मन्दिर यह देह, री !
गगन असीमित,
पवन अलक्षित,
प्रभुकरूणा से पल-पल रक्षित यह पंचमहला गेह री !

- -

1. बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं, भाग एक §खण्ड-3§ पृ0-470
2. बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं भाग दो §खण्ड-3§ पृ0-550
3. बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृ0-495

प्रभु मन्दिर यह देह री ।[1]

कवि अपनी फूटी गागर से लज्जित है, किन्तु फिर भी वह राम-राम की पुकार लगा रहा है । कवि की दुर्निवार पुकार द्रष्टव्य है-

'पार करूँ पनघट की दूरी, चलूँ गगर भर-भरकर पूरी,
जब घर की चौखट पर पहुँचूँ, बिल्कुल छूँछी पाऊँ रे ।
जगह-जगह से गागर फूटी,
राम, कहाँ तक ताऊँ रे ।
ताऊँ रे, भइ ताऊँ रे ।'[2]

कवि क्षण, प्रतिक्षण उसी विराट् सत्ता की असीमता से प्रभावित है और पग-पग पर कवि ईश्वर का साथ चाहता है, उसका अनुगमन करना चाहता है । प्रस्तुत पंक्तियों में 'ऊँ' की सत्यता, विराटता और शाश्वतता का वर्णन है-

'वेणुधारी
वेणु तुम ऐसा बजाना
विस्मरणकारी
कि गत-वन प्रान्त-निर्गत
मैं चलूँ पीछे तुम्हारे
मुग्ध अवनत,
चेतना हत ।
ऊँ तत् सत
....तत् सत'
....सत...त ।[3]

---

1. बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे (खण्ड-2) पृ0-495-496
2. बच्चन : वही पृ0-497
3. बच्चन : वही पृ0-556

'चार खेमें चौंसठ खूँटे' के अन्तर्गत 'बहुत दिनों पर' और 'बंजारे की समस्या' में भी कवि का आध्यात्मवादी स्वर मुखरित हुआ है । 'मन्दिर का दिया' कविता में कवि ने नास्तिक व्यक्ति के हृदय में भी आस्तिकता का संचार किया है । इस छोटी सी कविता में भी कवि ने ढेर सारे भावों का संगुफन कर दिया है, अनजाने ही हृदय में श्रद्धा का भाव उमड़ता है और मानस-पटल पर एक दृश्य उपस्थित हो जाता है-

'वृक्ष की अँधेरी-घनी छाया में
छोटा-सा मन्दिर है,
मन्दिर में छोटी सी प्रतिमा है,
प्रतिभा के समक्ष एक
छोटा दिया जलता है,
अनजाने ही बहुत भला लगता है,
देश-काल, जाने किन दूरियों का
संस्कार जगता है ।
मूढ़-मन, कर नमन,
यदि भगवान नहीं,
यहाँ पड़े पत्थर को, मानकर,
किसी अनजान की
यहाँ जगी
मूक चढ़ी श्रद्धा को ध्यान कर ।[1]

'गंगा की लहर' लोकगीत में कवि का आध्यात्मिक दृष्टिकोण झलकता है । भगीरथ की तपस्या से लेकर गंगा के पृथ्वी पर लहराने तक की ऐतिहासिक पौराणिक गाथा को कवि ने एक गीत के थोड़े से शब्दों में खूबसूरती

---

1. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-183

से पिरो दिया है । कुछ बचपन के सुसंस्कार, कुछ बच्चन की अपनी व्यक्तिगत श्रद्धा, अर्चना, आस्था और आस्तिकता का दृष्टिकोण, जो कवि को अध्यात्म की ओर उन्मुख करता है । यही कारण है कि आज भी कवि के घर-आँगन में §लॉन में§ हनुमान तथा शिव आदि के मन्दिर हैं, जिन्हें देखकर यह पता चलता है कि कवि की हिन्दू-धर्म-संस्कृति तथा मूर्ति पूजा आदि के प्रति असीम श्रद्धा और आस्था है । इस विषय पर सत्यनारायण श्रीवास्तव के पूँछने पर बच्चन जी ने उत्तर दिया- 'मन्दिर मूर्तियाँ सब इसलिये हैं कि मैं कवि हूँ । हिन्दू धर्म बड़ा ही कवित्वपूर्ण धर्म है । बचपन में दिये गए धार्मिक संस्कारों पर तो मेरा वश न था ।'[1]

डॉ॰ लक्ष्मीनारायण सुधाँशु के अनुसार- 'भारतीय जीवन का जितना रमणीय आध्यात्मवाद बच्चन की कविता में झलकता है, उतना उन तथाकथित रहस्यवादी रचनाओं में नहीं ।'[2]

<u>दार्शनिक चिन्तन :-</u>

बच्चन जी ने जिस समय काव्यजगत में पदार्पण किया वह छायावाद के उत्कर्ष का समय था । 1920-40 का समय हिन्दी साहित्य में 'छायावादी' युग के नाम से जाना जाता है । बच्चन की भी विश्व-विश्रुत रचनाएं- 'मधुशाला' 'निशा-निमन्त्रण' और 'एकान्त-संगीत' कृतियाँ भी इसी काल में प्रकाशित हुईं । अतः यह तथ्य भी निर्विवाद सत्य है कि बच्चन के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर छायावादी प्रवृत्तियों का प्रभाव भी स्पष्ट है ।

- -

1. बच्चन : टूटी-छूटी कड़ियाँ §खण्ड-6§ पृ0-415
2. सं. प्रो. दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृ0-025

छायावादी काव्यधारा के ही समानान्तर एक ऐसी काव्यधारा बह रही थी जिसका सूत्रपात कवि 'बच्चन' ने किया था । इस धारा का वास्तविक स्वरूप छायावादोत्तर काल में देखने को मिला । इस धारा §व्यक्ति-परक धारा § की भी मूल प्रवृत्ति प्रणय, विरह, सौन्दर्य एवम् प्रकृति ही है किन्तु इस मूल प्रवृत्ति के प्रकाशन में काल्पनिकता, सूक्ष्मता एवं दुराव-छिपाव का भाव नहीं बल्कि एक खुलापन है, यथार्थ का आग्रह है, स्थूल का चित्रण है, कुल मिलाकर यह रहस्य, अध्यात्म एवं गोपनीयता पर यथार्थ-अंकन की विजय घोषित करता है ।[1]

छायावादी प्रवृत्ति के प्रभाव का स्पष्टीकरण स्वयं कवि के मुख से- 'तत्कालीन छायावादी अभिव्यंजना का प्रभाव मुझ पर नहीं था- यह कहना तो मेरी कृतघ्नता होगी । मैंने छायावादी शिल्प को आत्मसात् करके लिखा, पर छायावादी शिल्प से कुछ ऊपर भी उसमें है, कुछ नयापन ...... ।[2]

छायावादी मूलप्रवृत्तियों में ही दार्शनिकता भी एक मूलभूत विशेषता है, यह दार्शनिक दृष्टि हमारे आलोच्य कवि बच्चन के काव्य में भी निरन्तर विकासमान होती हुई वैशिष्ट्य को प्राप्त हुई है । बाल्यावस्था से ही दुःख, दैन्य गरीबी को झेलते हुए निरन्तर संघर्ष करते हुए कवि ने अपने कदम आगे बढ़ाए हैं और चूँकि जीवन भर कवि ने संघर्ष किया है, पीड़ा को भोगा है इसीलिये यही संघर्षानुभूति कवि के काव्य में दर्शन का उन्मेष करती है । भीषण अवसाद, दुख; वेदना, पीड़ा के गहन अंधकार में डूबकर कवि का दृष्टिकोण दार्शनिक हो

- -

1. डॉ. कौशलनाथ उपाध्याय : छायावादोत्तर काव्य बदलते मानदण्ड एवं स्वरूप, पृ0-48
2. श्री नवलकिशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य, भूमिका पृ0-10

जाता है, और यही कारण है कि कवि की प्रारंभिक रचनाओं में ही हमें दार्श-निकता का बोध मिलता है-

'साकार वृक्ष से निराकार
तुम निकल हुई कैसे बयार ?
सब ओर तुम्हारा अब प्रसार,
इस नभ-मण्डल के आर-पार ।
बतला दो मुझको हे बयार,
जब तन-तरुवर के दल विदार
उड़ जाऊँगा मैं पंख मार
हूँगा ससीम की अवधि पार-
कर चिर अनन्त चिर निराकार ।'[1]

बच्चन जी शंकराचार्य के अद्वैतवाद के समर्थक रहे हैं, वे ईश-जीव में भेद की स्थिति को स्वीकार नहीं करते हैं-

'ईश, जीव में भेद नहीं है,
जहाँ जीव है ईश वहीं है,
'प्रेम', 'प्राण' तुम दोनों मेरी-शंकर वचन प्रमाण-[2]

अपने दर्शन के सम्बन्ध में कवि ने दो टूक बात कही है-'मेरी कवि-ताओं में कोई दर्शन है तो जीवन दर्शन । जीवन जी भोगकर जो मेरी प्रति-क्रिया हुई वही मेरी कविताओं में है ।'[3]

'मधुशाला' की अनेक रुबाइयों में कवि ने अद्वैतवादी दर्शन का समा-वेश किया है यह कवि का अपना निजी दृष्टिकोण ही है या यूँ कहिये उनकी

- -

1. बच्चन : प्रारम्भिक रचनाए, भाग दो {खण्ड-3} पृ0-54।
2. बच्चन : वही भाग एक {खण्ड-3} पृ0-47।
3. बच्चन : टूटी-छूटी कड़ियाँ {खण्ड-6} पृ0-426

बौद्धिक चेतना से ख़ुद-ब-ख़ुद दर्शन का सन्निवेश हुआ है । एक रुबाई विशुद्ध अद्वैतवाद की छाप छोड़ती हुई-

'मैं मदिरालय के अन्दर हूँ मेरे हाथों में प्याला,
प्याले में मदिरालय विम्बित करने वाली है हाला;
इस उधेड़बुन में ही मेरा सारा जीवन बीत गया-
मैं मधुशाला के अन्दर या मेरे अन्दर मधुशाला ।'[1]

आत्मा-परमात्मा के मिलन एवम् उसके ऐक्य पर कवि की निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

'प्रियतम, तू मेरी हाला है, मैं तेरा प्यासा प्याला,
अपने को मुझमें भरकर तू बनता है, पीने वाला;
मैं तुझको छक-छलका करता, मस्त मुझे पी तू होता,
एक दूसरे की हम दोनों आज परस्पर मधुशाला ।'[2]

ईश्वर प्राप्ति के लिये अनेक पन्थ-सम्प्रदाय और अनेकानेक साधन विधियाँ प्रचलित रही हैं लेकिन कवि का चिन्तन है कि निष्ठापूर्वक किसी भी मार्ग पर निरन्तर चलते रहने से साधक परमात्मा को प्राप्त कर सकता है-

'राह पकड़ तू चला चल पा जायेगा मधुशाला ।'[3]

कवि की स्पष्ट मान्यता है कि यह संसार क्षणभंगुर है, कोई भी वस्तु शाश्वत नहीं है, एक मात्र काल §मृत्यु§ शाश्वत है । अपने इस दृष्टिकोण को कवि ने अनेक रचनाओं में अभिव्यक्ति प्रदान की है । 'मधुशाला' में विशेष रूप से कवि ने जीवन के सनातन सत्य मृत्यु से मनुष्य का साक्षात्कार कराया है-

---

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई 119 पृ0-62
2. बच्चन : वही रुबाई 3 पृ0-45
3. बच्चन : वही रुबाई 6 पृ0-45

'क्षीण, क्षुद्र, क्षणभंगुर दुर्वल मानव मिट्टी का प्याला,
भरी हुई है जिसके अन्दर कटु - मधु जीवन की हाला,
मृत्यु बनी है निर्दय साकी अपने शत-शत कर फैला,
काल प्रबल है पीनेवाला, संसृति है यह मधुशाला ।'[1]

'छोटा' सा जीवन' कहकर कवि ने स्वागत के ही साथ विदा की तैयारी का भी दृश्य देखा है, जिससे कवि की जीवन-मधुशाला खुलते ही बन्द होने लगी है ।

'मधुशाला' के 'प्याले' में जिस दार्शनिकता का समावेश उन्होंने किया वह अद्भुत है ।[2] 'प्याले' के प्रतीक द्वारा कवि ने मानव-जीवन की सत्य व्याख्या प्रस्तुत की है-

'मिट्टी का तन, मस्ती का मन, क्षण भर जीवन-मेरा परिचय।[3]

किन्तु कवि बच्चन इस नश्वर और अमरता के द्वन्द्व को मिटा देना चाहते हैं-

'है ज्ञात हमें नश्वर जीवन,
नश्वर इस जगती का क्षण-क्षण,
है किन्तु अमरता की आशा
करती रहती उर में क्रन्दन,
नश्वरता और अमरता का
अब द्वन्द्व मिटाने हम आये ।[4]

कवि को उस विराट सत्ता का आभास कण-कण में होता है,

---

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रूबाई 73 पृ0-55
2. राष्ट्रीय सहारा दैनिक पत्र, बृहस्पतिवार, 16 दिसम्बर, 1993
3. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृ0-95
4. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृ0-88

मात्र दिव्य-चक्षु या दिव्य दृष्टि के द्वारा ही उसका आभासा हो सकता है-

'पथिक बना मैं घूम रहा हूँ, सभी जगह मिलती हाला ।'[1]

कवि का चिन्तन है कि-'आवरण को हटाकर नग्न सत्य को देखना तो दर्शन की भी आकाँक्षा रही है ।'[2]

कवि का जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण है और उसी आधार पर वह जीवन जीने का अभ्यासी है । वे जीवन को एक अनवरत धारा के रूप में स्वीकार करते हैं, उन्होंने अपने जीवन को किसी विशेष दर्शन की ओर नहीं मोड़ा, वरन् उनकी जीवनधारा में दर्शन स्वयमेव अपना स्थान बनाता हुआ सतत् प्रवहमान रहा है । उन्होंने अपने जीवन और दर्शन के प्रति स्वयं ही विचार व्यक्त करते हुये कहा है- 'मेरा जीवन तो एक बहती धारा के समान है । दर्शन के 'बाद' भी उसमें आकर अनायास बहने लगते हैं । .... जीवन स्वयं एक दर्शन है । इसलिये मैं किसी 'दर्शन या वाद' के लिये नहीं लिखता । मैं लिखता इसलिये हूँ कि अपने को व्यक्त करना ही मेरा जीवन है ।'[3]

3. सामाजिक चिन्तन :-

बच्चन जी जिस युग और समाज में पैदा हुए थे, वह जर्जर प्राय, अनैतिकता और अंधविश्वासों से ग्रस्त सामाजिकता का युग था । बच्चन के काव्य ने इस बीमार सामाजिकता को झकझोर दिया । भारतीय समाज की रूढ़िवादी, सड़ी-गली परम्पराओं और मान्यताओं के अन्तर्गत स्त्रियों और शूद्रों का स्थान

---

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रूबाई 47 पृ0-5।
2. बच्चन : §खण्ड-6§ पृ0-398
3. राष्ट्रीय सहारा दैनिक पत्र, बृहस्पतिवार, 23 दिसम्बर, 1993

दासी और गुलामों के समान था । 'मनु द्वारा निर्धारित वर्णाश्रम धर्म, संयुक्त कुटुम्ब प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह, सती प्रथा, बाल हत्या, पर्दा, श्राद्ध, स्त्रियों की अशिक्षा आदि का प्रचार था ।'[1]

ई. सं. 1937 तक भी पूँजीवादी अर्थव्यवस्था फलती-फूलती रही । अर्थाभाव, अशिक्षा, अज्ञान और नए साधनों से वंचित किसान समय और दुर्भाग्य से लड़ता रहा । पश्चिमी शिक्षा के आगमन पर भारत पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण करने लगा । अँग्रेजी भाषा के कारण, उच्च स्तर के रहन-सहन के कारण शिक्षित और सामान्य जनता की दूरियाँ बढ़ती गई और सामाजिक सन्तुलन विनष्ट हो गया ।'[2]

1931 तक भारत की 92 प्रतिशत जनता अशिक्षा और अज्ञान के अंधकार में खोई रही ।[3]

गाँधी जी के प्रभाव से छुआछूत और वर्णभेद दूर करने के प्रयासों के साथ नारी चेतना में प्रगति हुई और ई. सं. 1929 में 'शारदा एक्ट' द्वारा शादी के लिये न्यूनतम आयु सीमा बढ़ा दी गई । राष्ट्रीय आन्दोलन और देश की गतिविधियों में खुलकर भाग लेने के अतिरिक्त ई. सं. 1930-31 के अवज्ञा आन्दोलन में नारियों ने प्रमुख भाग अदा किया था ।[4]

उपर्युक्त परिस्थितियों और गतिविधियों का बच्चन के हृदय में गहरा प्रभाव पड़ा और उनकी चिन्तन धारा ने एक क्रान्तिकारी रूप धारण

- -

1. डॉ. लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय : आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ0-3
2. ए. आर. देसाई : सोशल बैकग्राउण्ड ऑफ इण्डियन नेशनलिज्म, पृ0-125
3. वही पृ0-132
4. दि ऑक्सफॉर्ड हिस्ट्री ऑव इण्डिया, पृ0-835

किया, वे समाज की कुरीतियों से क्षुब्ध हो उठे और सामाजिक क्रान्ति के आन्दोलन से उन्हें सड़ी-गली नैतिकता को ठुकराने का प्रोत्साहन मिला । कवि ने आत्मविश्वास के साथ अपनी अनुभूतियों को कलमबद्ध कर दिया । समाज के आमूल परिवर्तन की कामना से उसने रोगी समाज की घोर निन्दा की, इस आलोचना से सम्पूर्ण समाज तिलमिला उठा और छिद्रान्वेषियों ने उन पर उँगली उठाना प्रारम्भ किया, उनकी भावनाओं व उद्गारों को अनैतिक वासनामय और अश्लील कहकर आक्षेप लगाना प्रारम्भ कर दिया । किन्तु बच्चन का क्रान्तिकारी स्वर निरन्तर मुखरित होता रहा । समाज के आमूल परिवर्तन की कामना से उसने भारतीय समाज को अंधविश्वास के पिंजरे से आजाद किया, यही कारण है युवा-समुदाय ने बच्चन का खुले हृदय और गदगद कंठ से स्वागत किया ।

मुसलमानों और हिन्दुओं को सांप्रदायिक भेदभाव मिटाकर एक सूत्र में बटना और बँधना चाहिये यह कवि का नितान्त वैयक्तिक दृष्टिकोण है । नाम, काम, जाति, धर्म पर भी कवि का दृष्टिकोण सुस्पष्ट है । उन्होंने धर्मग्रन्थ, मन्दिर, मस्जिद, गिरजे, पंण्डित, मोमिन, पादरियों सभी का खण्डन किया है ।[1] ऐक्य की भावना के साथ कवि परम्पराओं को बदल देना चाहता है यहाँ कवि का उदारवादी दृष्टिकोण मुखरित हुआ है । अमीर-गरीब के बीच की खाई को कवि मिटाना चाहता है यही कारण है कि उसने जमींदारी व्यवस्था, राजसी व्यवस्था का भी खण्डन किया है ।[2]

---

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई 17 पृ0-47
2. बच्चन : वही रुबाई 20, 21 पृ0-47-48

समाज को अनेक प्रकार की रूढ़ियों, विसंगतियों, अंधविश्वासों के अंधकार से आच्छादित देख कवि का मन क्रन्दन कर उठता है और वह तिमिराच्छादित युग को प्रकाश से युक्त करने के लिये दीप का आह्वान करता है-

'लेकिन युग जब तमसावृत हो,
तब क्यों विकल न कवि का चित हो,
विफल जब कि रवि, शशि, तारक-दल, दीपक राग रहा हो ।
मेरे युग के दीप, कहाँ हो ?'[1]

'युग की उदासी' कविता में भी कवि समाज की विसंगतियों और उच्छृंखलताओं से दुखी है । बलि की प्रथा का कवि ने विरोध किया है ।

बंगाल का अकाल, भारत का विभाजन और उसके बाद भयंकर गृह-युद्ध, बापू की हत्या आदि घटनाओं ने बच्चन के मन-मस्तिष्क को झकझोरा और वे सही अर्थों में सामाजिक दृष्टा बन सके । उनकी कृतियों में उनके सामाजिक चिन्तन की स्पष्ट झाँकी प्रतिबिम्बित होती है ।

सुख-दुःख के प्रति कवि का नाता जीवन में इतना घनिष्ठ हो गया है कि वह सुख की अनुभूति दुःख में भी करता है-

'इस आँसू के साथ मुझे दो रहने आज अकेला,
शोक प्रदर्शन की न घड़ी यह मेरे सुख की बेला ।'[2]

कवि ने अपने व्यक्तिगत अनुभव और चिन्तन से इस तथ्य को आत्मसात् कर लिया है कि-

---

1. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-402
2. बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं, भाग दो §खण्ड-3§ पृ0-546

'सुख तो थोड़े से पाते दुख सबके ऊपर आता,
सुख से वंचित बहुतेरे बच कौन दुखों से पाता ।'[1]

कवि का सुख के प्रति एक विशद दृष्टिकोण है जिसे उसने स्थान-स्थान पर व्यक्त किया है । कवि का मानना है कि दुख में ही सुख-सार समाया रहता है ।[2]

कवि अपने सुख देकर प्रिया के दुख लेना चाहता है ।[3]

बच्चन जी ने सुख और दुख दोनों ही स्थितियों में अनासक्त रहने की बात कही है-

'अनासक्त था मैं सुख-दुख से, अधरों को कटु-मधु समान था,
नयनों को तम-ज्योति एक सी, कानों को सम रुदन-गान था।'[4]

कवि त्याग में ही सुख की अनुभूति मानता है-

'सुख जहाँ विजित होने में है, अपना सब कुछ खोने में है,
मैं हारा भी जीता ही हूँ जग के ऐसे समरांगण में ।'
है हार नहीं यह जीवन में ।[5]

'सतरंगिनी', मिलनयामिनी' और 'प्रणय पत्रिका' के गीतों में सुख का संगम प्राप्य है । जीवन में अनथक अनवरत परिश्रम के पश्चात कवि दुःख, दैन्य, दारिद्र्य, निराशा, अवसाद और विरह के अगाध सागर को पारकर सुख-सिन्धु में प्रवेश करता है और प्रिया के सामीप्य को पाकर हर्ष विकंपित हो

- -

1. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग दो, §खण्ड-3§ पृ0-555
2. बच्चन : वही भाग एक §खण्ड- 3§ पृ0-466
3. बच्चन : वही पृ0-473
4. बच्चन : आकुल अन्तर §खण्ड-1§ पृ0-283
5. बच्चन : एकान्त संगीत§खण्ड-1§ पृ0-231

गान करने लगता है । सारांश रूप में कवि का चिन्तन द्रष्टव्य है-

> 'सुख की घड़ियों के स्वागत में छन्दों पर छन्द सजाता हूँ,
> पर अपने दुख के दर्द भरे गीतों पर कब पछताता हूँ,
> जो औरों का आनन्द बना वह दुख मुझ पर फिर-फिर आये,
> रस में भीगे दुख के ऊपर मैं सुख का स्वर्ग लुटाता हूँ,
> कण्ठों से फूट न जो निकले, कवि को क्या उस दुख से सुखसे ।'[1]

दुख :- बच्चन के जीवन में दुख की तीव्रानुभूति उनकी पत्नी श्यामा के निधन से होती है कवि निरन्तर दुख की सीमा को लाँघता हुआ एक दिन ऐसी स्थिति में आ जाता है जब उसे दुख-सुखकर और साथी के रूप में प्रतीत होने लगता है तब वह सुख की भी उपेक्षा करने लगता है । बच्चन जी का यही अवसाद, दुख, वेदना उनकी काव्यकृतियों- 'निशा-निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अन्तर' में मुखरित हुआ है । उक्त कृतियों में कवि का दुख के प्रति गहन चिन्तन स्पष्ट होता है । कवि दुख से डरता या घबराता नहीं है बल्कि निरन्तर अग्रसर रहने का सन्देश देता है । कुछ आलोचकों ने उनके दुख भरे गीतों में पलायन के स्वर को सुना है । दुख से गहरा नाता जुड़ने के कारण कवि को दुख से प्रेम हो जाता है और वह कल्पित साथी को पुकार उठता है-

> "साथी, साथ न देगा दुख भी ।
> काल छीनने दुख आता है,
> जब दुख भी प्रिय हो जाता है
> नहीं चाहते जब हम दुख के बदले में लेना चिरसुख भी ।
> साथी, साथ न देगा दुख भी ।"[2]

- -

1. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-50
2. बच्चन : निशा निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-199

दुखी हो कवि मृत्यु का आलिंगन करना चाहता है ।[1]

बच्चन जी दुख को अभिव्यक्त करने के पक्ष में नहीं है वे दुख को मौन रूप में सहने के अभ्यासी हैं जैसे प्रकृति के उपादान अनेकानेक प्रकार के दुख सहकर भी मौन रहते हैं वैसे ही कवि बच्चन ने भी संसार को अपने दुःखों को मौनरूप में सहने के लिये प्रेरित किया है-

'तू अपने दुख में चिल्लाता,
आँखों देखी बात बताता,
तेरे दुख से कहीं कठिन दुख यह-जग मौन सहा करता है ।
मुझसे चाँद कहा करता है ।'[2]

अपने दुख की कवि ने बादल के दुख से तुलना की है । किन्तु अपने दुख के अश्रुओं को कवि ने निरर्थक क्षार जल कहकर बादल के जल को मधुर सार्थक जल कहकर अपनी उदारता का परिचय दिया है ।[3]

कवि संघर्षों से कभी घबराता नहीं है बल्कि उनका साहस के साथ मुकाबला करने के लिये उद्यत दिखाई देता है, वह बड़े से बड़े संकट को हथौड़े की चोट मार-मारकर उसे परास्त करने का अभ्यासी है यही प्रेरणा वह सामाजिकों के मन में भी भरना चाहता है-

'चोटों से घबराऊँगा कब,
दुनियाँ ने भी जाना है जब,
निज हाथ हथौड़े से मैंने निज वक्षस्थल पर चोट सही ।

---

1. बच्चन : निशा निमन्त्रण {खण्ड-1} पृ0-170
2. बच्चन : वही पृ0-174
3. बच्चन : वही पृ0-177

क्षतशीश मगर नतशीश नहीं ।'[1]

यह सृष्टि का नियम है कि मनुष्य सदैव दुखों से ही नहीं घिरा रहता, बल्कि एक समय वह आता है जब मनुष्य सुख और समृद्धि की सुनहरी भोर में नेत्र-निमीलन कर ख़ुशी व आनन्द से यह पुकार उठता है- 'दुख की पिछली रजनी बीच विकसता सुख का नवल प्रभात । कवि का यही चिन्तन हमें निम्न पंक्तियों में दृष्टिगत होता है-

'हर दन्त समय का जो लगता, मानो, विषदन्त नहीं होता,
दुख मानव के ऊपर सब दिन बलवन्त नहीं होता ।'[2]

इस प्रकार बच्चन के दुख में कर्मण्यता का मूलमन्त्र उच्चरित है, हार या निराशा के चित्र नहीं हैं । आशा किशोर ने बच्चन की वेदना को महादेवी की वेदना से कहीं उच्चतर माना है-'महादेवी की वेदना हारी हुई आत्मा की वाणी है । बच्चन की वेदना आगे आने वाली विपत्तियों को सहने का अभ्यास। एक में पराजय है, दूसरे में संघर्षरत व्याकुलता । एक टूट गयी है, दूसरा टूटे को जोड़ने की अदम्य लालसा और साहस लिये हुए है । दुखमयी परिस्थितियों को वह एक प्रत्याशित घटना मानता है ।'[3]

प्रेम :- कवि के अवसाद का मूल कारण उनकी पत्नी का देहान्त था जिससे कवि एकाकीपन में डूब गया और दुख के करुण रस के गीत गाने लगा किन्तु तेजी से विवाह के पश्चात कवि के जीवन में प्रेम, सुख-सौन्दर्य और समृद्धि की वर्षा हुई और कवि 'सतरंगिनी' के गीत गाने लगा । प्रेम काव्य के अन्तर्गत 'सतरंगिनी

- -

1. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-238
2. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-047
3. डॉ॰ आशा किशोर : आधुनिक हिन्दी गीत काव्य का स्वरूप और विकास पृ0-234

के कुछ गीत और 'मिलन यामिनी' तथा 'प्रणय पत्रिका' के गीत विशुद्ध प्रेम के गीत हैं जिनमें कवि की भाव-निधियों और अनुभूतियों के गम्भीर रत्न पंक्तियों की माला में पिरोए गए हैं, इन कृतियों में कवि का प्रौढ़ व्यक्तित्व प्रस्फुटित हुआ है । पन्त जी के अनुसार-' यहाँ कवि भावना लोक का अपने ढंग का एकाकी पथिक है । हिन्दी में और भी इस पथ के पांथ हैं, बच्चन ही की पीढ़ी में 'अंचल' और 'नरेन्द्र' किन्तु उनका काव्य-सौन्दर्य भिन्न प्रकार का है । बच्चन में जो एकाग्रता, व्यथागाम्भीर्य और तल्लीनता है, उसने उनके काव्य को तप्त कंचन के से एक द्रवित सौन्दर्य में ढाल दिया है ।'[1]

कवि का प्रेम विषयक दृष्टिकोण उनकी प्रारंभिक रचनाओं में ही स्पष्ट हो जाता है । प्रस्तुत पंक्तियाँ कवि के प्रेम विषयक चिन्तन को स्पष्ट करती हैं और ये कवि की सर्वाधिक प्रिय पंक्तियाँ भी हैं-

"प्यार किसी को करना लेकिन कहकर उसे बताना क्या ।[2]

कवि ने प्रेम के द्वारा अध्यात्म की अनुभूति की है- 'प्रेम की अनुभूति ही एक स्तर पर जाकर अध्यात्म की अनुभूति हो जाती है ।'[3]

कवि का यह अपना निजी दृष्टिकोण भी है कि प्रेम की रिक्तता में उच्च कोटि का सृजन नहीं हो सकता अतः वियोगी और कवि दोनों बनना ही सार्थक है । बच्चन जी का मानना है कि- 'भावना प्रेरित कविताएं लिखने के लिये प्रेमानुभूति अनिवार्य है क्योंकि भावों की गहराइयाँ प्रेमानुभूति में ही

---

1. सुमित्रानन्दन पन्त का लेख : बच्चन का व्यक्तित्व तथा काव्य
2. बच्चन : साक्षात्कार ॥खण्ड-9॥ पृ0-29
3. बच्चन : वही पृ0-64

छुई जा सकती हैं । वियोगी और कवि दोनों होनापड़ेगा तभी आपकी भावनाए अभिव्यक्ति पा सकेंगी । सृजन कोई सरल काम तो नहीं बहुत कठिन काम है, करिश्मा है ।'[1]

कवि प्रेम को सर्वदा अजर-अमर मानता है-

'पाप नहीं, शाप नहीं, संकट-संताप नहीं ।
प्रेम अजर, प्रेम अमर ।'[2]

बच्चन जी प्रणय में किसी प्रकार का बन्धन नहीं चाहते-

'जब करूँ मैं प्यार, हो न मुझ पर कुछ नियंत्रण,
कुछ न सीमा, कुछ न बन्धन,
जब रुकूँ जब प्राण प्राणों से करें अभिसार ।
जब करूँ मैं प्यार ।'[3]

नारी के प्रति कवि का उदारवादी दृष्टिकोण है वह पत्नी को जीवन संगिनी के साथ-साथ सहयात्री भी मानता है जो सुख-दुख में उसके साथ हो-

'झलक तुम्हारी मैंने पायी सुख-दुख दोनों की सीमा पर ।[4]

इसीलिए वे आधी-आधी रात तक आँख फाड़े सुधियों में खोए रहते हैं-

'जागता मैं आँख फाड़े, हाय, सुधियों के सहारे,
जबकि दुनिया स्वप्न के जादू-भवन में खो गयी है ।
रात आधी हो गयी है ।[5]

---

1. बच्चन : टूटी-छूटी कड़ियाँ §खण्ड-9§ पृ0-426
2. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-361
3. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-234
4. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ पृ0-123
5. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-180

प्रिया के बिछोह में कवि के हृदय में एक हूक उठती है और वह दर्द से कराह उठता है-

'एक उर में आह उठती,
निखिल सृष्टि कराह उठती,
रात रोती, भीग उठता भूमि का पट-गात साथी !
आज रोती रात, साथी ।'[1]

प्रेम के संयोग पक्ष का उद्घाटन कवि ने 'मिलन-यामिनी' और 'प्रणय पत्रिका' के गीतों में किया है । बच्चन के प्रणय-गीतों में देहों की उष्णता का आदिम स्वाद है । मिलन के गायन क्षणों के विकल-विह्वल अर्थ हैं । उनके गीतों में तन के व्याकुल कक्ष, बाँहों के सेतु, गंध-मुक्त चुम्बनों का संगीत, पिघले होंठों की अर्थवती घड़ियाँ और उन्माद की वीथियाँ हैं, मन के टूटते कगार हैं, तथा मरण स्थल का चीत्कार, मृत्यु के कसाव का निर्मम सन्नाटा, विषाद के हलकोरे, अवसाद की मलिनता है ।[2]

प्रेम की पूत भावना को कवि व्यामोह कह अपवित्र नहीं करना चाहता-

'जो प्यार अनन्त, अपार, अगाध उमड़ता है,
उसको कोई व्यामोह-व्यसन मत कह बैठे ।'[3]

कवि प्यार, जवानी और जीवन का जादू सब दिन मानता है । प्राकृतिक उपादानों द्वारा कवि ने प्रेम को इस प्रकार व्यक्त किया है-

'शिथिल पड़ी है नभ की बाहों में रजनी की काया,

---

1. बच्चन : निशा निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-178
2. डॉ. के. जी. कदम : कवि श्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन पृ0-196
3. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-041

चाँद चाँदनी की मदिरा में डूबा, भरमाया ।'[1]

प्रेम में डूबते उतरते कवि को समस्त प्रकृति भी प्रेम में लीन व प्रसन्न दृष्टिगत होती है-

हम अपनी मस्ती में बहके मधुवात बही बहकी-बहकी,
चुम्बन के स्वर संकेतों पर बन की सारी चिड़िया चहकीं,
अनुकरण हमारे शब्दों का अस्फुट, लो, पल्लव दल करते,
साँसों से साँसें मिलनी थीं खुलकर, खिलकर कलियाँ महकी।[2]

निष्कर्षतः 'निशा-निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अंतर' काव्यकृतियों में कवि विरह व्यथित हो एकाकीपन की अनुभूति से रुदन कर उठता है तो 'मिलन यामिनी' और 'प्रणय पत्रिका' के गीतों में संगिनी-सहयात्री के सान्निध्य से संयोग श्रृंगार के प्रेम-रस में पगे हुए गीत प्रसन्नता और उत्साह के साथ गाता है । कवि के प्रेम में निषेध नहीं है, वह हर क्षण प्रिया के प्रेम की कामना करता है, किन्तु कवि का प्रेम जीवन के प्रति आस्थावादी है, बिछोह में पलायन नहीं, जिजीविषा और समय से मोर्चा लेने का साहस है, और संयोग में उमंग है, निश्छल अभिव्यक्ति है फिर भी जीवन में निरन्तर अग्रसर रह व्यष्टि से समष्टि की ओर उन्मुख है ।

जातिपाँति :- अपनी पूर्व पत्नी श्यामा की मृत्यु पर शवदाह के लिए ले जाते समय समाज की जाति-व्यवस्था के प्रति बच्चन जी का मन घोर वितृष्णा से भर उठा था । उन्होंने अपने क्षोभ को 'नीड़ का निर्माण फिर' में इस प्रकार अभिव्यक्त

- -

1. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-61
2. बच्चन : वही पृ0-48

किया है- "जाति-व्यवस्था से गठित-ग्रसित भी कहना अनुपयुक्त न होगा- समाज में व्यष्टि और समष्टि के सम्बन्धों पर जब-जब मैंने सोचा है, क्षोभ से भर उठा हूँ । व्यक्ति को समाज के सहयोग की आवश्यकता होती है, अपने साधारण जीवन में भी, अपने सुख अपने दुख में भी । पर व्यक्ति को समाज से यह सहयोग लेने के लिये बड़ा महंगा मूल्य चुकाना पड़ता है । उसे अपनी स्वतन्त्रता समाज के हाथों में गिरवी रखनी पड़ती है । समाज से कोई स्वतन्त्र हुआ नहीं, उसके विपरीत, उससे अलग उसने कुछ किया नहीं कि समाज उस पर अपना आक्रोश प्रकट करना शुरू कर देता है ।'[1]

बच्चन जी जातिपाँति के भेदभाव को नहीं मानते, वे प्रगतिवादी विचारों के पोषक हैं । बचपन से ही उनमें ऐसे संस्कार पड़े थे कि उन्हें समाज की सड़ी-गली रुग्ण मान्यताओं से क्षोभ था । स्थान-स्थान पर उन्होंने जातिपाँति तथा छुआछूत पर करारा व्यंग्य भी किया है । कवि का मन एक ऐसे समाज की सृष्टि करना चाहता है जहाँ छुआछूत एवं जातिपाँति के भेदभाव का कोई स्थान न हो । सभी भारतवासी साथ मिल बैठकर खाएं, प्रेम और सौहार्द का वातावरण हो ।

एक बार कवि ने समाज से निष्कासित एवं बहिष्कृत कायस्थ परिवार में रोटी खा ली थी, जिससे उस परिवार में पुनः बिरादरी में रोटी-बेटी का व्यवहार प्रारम्भ हो गया, यह कार्य कवि ने परोपकार की भावना से उस परिवार के उद्धार हेतु किया था, किन्तु उस परोपकार का प्रतिफल यह हुआ कि कवि के यहाँ आयोजित बहुभोज में उनके चाचा और पारिवारिक लोग निमन्त्रण में नहीं

---

1. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर {खण्ड-7} पृ0-264

आए इसके पूर्व भी कवि ने हरिजनों के साथ खाना खाया था, किन्तु बिरादरी से कट जाने के भय से कवि के पिताश्री बहुत दुखी हुए ऐसा ही क्षोभ कवि को उस समय भी हुआ था- "पिताजी बहुत दुखी हुए- बिरादरी से कट जाने के भय से काँप उठे, अभी उनकी एक लड़की व्याहने को थी । मैंने पिताजी को समझाया कि हमें बिरादरी ने छोड़ दिया है तो अब हम मानव-परिवार के सदस्य हैं । मुझे हिन्दू समाज का सारा ढाँचा इतना रुग्ण, सड़ा, गला, दुर्गन्धित इससे पहले कभी नहीं लगा ।'[1]

'मधुशाला' की अनेक रुबाइयाँ समाज की इन्हीं संकीर्णताओं और रूढ़िवादिताओं से मुक्ति की ओर संकेत करती हैं-

'नाम अगर पूछे कोई तो कहना बस पीने वाला,
काम ढालना और ढलाना सबको मदिरा का प्याला,
जाति, प्रिय, पूछे यदि कोई, कह देना दीवानों की,
धर्म बताना, प्यालों की ले माला जपना मधुशाला ।'[2]

कवि ने नाम, काम, जाति, धर्म से व्यवस्थित समाज के रुग्ण ढाँचे को सहसा चरमरा कर तोड़ दिया है और वह धर्म वैभिन्य पर अपना आक्रोश व्यक्त करता है-

', रक्त से सींची गयी है राह मन्दिर-मस्जिदों की,
किन्तु रखना चाहता मैं पाँव मधु-सिंचित डगर में ।'[3]

जातिपाँति के प्रति बच्चन जी का दृष्टिकोण इसी से स्पष्ट हो

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ पृ0-196
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई 85 पृ0-057
3. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ पृ0-135

जाता है कि उन्होंने पूर्व पत्नी के निधन पर अपना पुनर्विवाह एक अन्तर्जातीय लड़की तेजी से किया । प्रान्त, भाषा, धर्म और जाति सभी में विभिन्नता होते हुए भी अद्यतन कवि सुखी और सफल दाम्पत्य जीवन का निर्वाह कर रहा है।

छुआछूत :- बच्चन ने जैसे ही इस कठोर संसार में नवजात शिशु के रूप में जन्म लिया था, तभी बारह दिनों तक कवि ने लछमनियाँ चमारिन का दूध पिया था, और पाँच पैसे में कवि की माता ने उन्हें चमारिन के हाथों बेंच भी दिया था । छुआछूत की भावना बच्चन के मन से बहुत पहले बचपन में ही बिल्कुल उठ गयी थी । ऊँच-नीच की इस असमानता को कवि ने अपनी आत्मकथा में व्यंजित किया है-
'हिन्दू समाज ने जन-जन के बीच ऊँच-नीच का कटु-बोध कराने के लिये कैसे-कैसे अजीब तरीके निकाले हैं ।'[1]

कवि अपनी बाल उम्र में अपने जन्म-दिवस पर परिपाटी के अनुसार चमारिन को शरारतन और अनजान सहानुभतिवश अधिक अन्न प्रदान करते थे, और उसकी बीमारी पर कवि ने अपने हाथों से उसके मुँह में तुलसी-गंगाजल डाला, दूसरे दिन बाल कवि ने उसकी अर्थी को भी अपना कांधा छुलाया । स्वतन्त्र रूप से अपने घर में कवि के यहाँ चमार ही खाना बनाने वाले रहे हैं । कवि ने लिखा भी है-
'मुझे आश्चर्य और क्रोध तो तब होता जब घर की कहारिन चमार के छुए बर्तनों को माँजने से इन्कार कर देती । हिन्दू समाज-तन्त्र में अछूतपन की श्रेणियाँ-दर-श्रेणियाँ हैं । आजकल एक जमादार की लड़की-कमला मेरे घर में काम करती है और कभी-कभी खाना भी बनाती है । मुझे लगता है कि मेरे पूर्वजों ने अछूतों का

---

1. बच्चन: क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ पृ0-101

जो अपमान करके जो पाप किया था उसका यत्किंचित प्रायश्चित मैं कर रहा हूँ । सामाजिक स्तर पर कोई सुधार हो, इसके पूर्व व्यक्ति-व्यक्ति को निर्भीकता और साहस के साथ आगे बढ़ना होगा ।'[1]

'मधुशाला' की अनेक रुबाइयों में इस ऊँच-नीच के विभेद को दूर करने की दृष्टि से कवि ने अपनी आवाज और आगाज को बुलन्द किया है । एक रुबाई में इस विभेद को व्यंग्य के पुट से जोड़ा है -

"कभी नहीं सुन पड़ता, 'इसने, हा, छू दी मेरी हाला,'
कभी न कोई कहता,' 'उसने जूठा कर डाला प्याला,'
सभी जाति के लोग यहाँ पर साथ बैठकर पीते हैं,
सौ सुधारकों का करती है काम अकेली मधुशाला ।'[2]

इस रुग्ण और बदबूदार समाज में क्रान्ति की हुँकार करने वाले की सदैव निन्दा होती रही है, बच्चन भी इससे नहीं बच सके, किन्तु अपने कर्तव्य - पथ पर निरन्तर अग्रसर रहने वाले बच्चन ने गीदड़ भभकियों की रंचमात्र भी परवाह नहीं की और गौरव से कर्मपथ पर बढ़ते रहे । कवि की निन्दा का एक और कारण यह भी है कि कवि के हृदय में आर्य समाज के अछूतोद्धार और गाँधी जी के हरिजन आन्दोलन की सहानुभूति जगी इसीलिए-'एक दिन शायद नगर के आर्य समाज में आयोजित किसी प्रीतिभोज में मैंने अछूतों की पंगत में बैठकर कच्चा खाना खा लिया तो मुझे बड़ी प्रसन्नता और सन्तोष का अनुभव हुआ और मुझे लगा कि मैंने चम्मा की बिरादरी के साथ कुछ न्याय किया, पर मेरे सम्बन्धियों और नातेदारों को यह खबर बड़ी नागवार गुजरी और उन्होंने व्यंग्य से कहा कि

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ पृ0-101-102
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई 57 पृ0-53

आखिर इसने चमारिन की छाती का दूध पिया था, उस कुसंस्कार का कुछ असर होना ही था । यह संस्कार का प्रभाव था, कि देश के समाज-सुधारक नेताओं के उपदेशों का कि मेरे अपने ही मानवतावादी उदार विचारों का, कि मेरे मन से बहुत पहले ही अछूतों को अछूत समझने की बात बिल्कुल उठ गयी थी ।'[1]

सामाजिक टूटन व विसंगतियों पर प्रहार :-

बच्चन जी एक युग दृष्टा कवि हैं उनकी दृष्टि समाज की विषमताओं, खोखली मान्यताओं पर गई उन्हें लगा कि समाज की ये विभीषिकाएं सर्वत्र मुँह बाये खड़ी हैं और आज मानवीय मूल्य और नैतिकता घटती जा रही है या बिकती जा रही है । चूँकि कवि एक संवेदनशील प्राणी होता है, वह अपनी अनुभूति को मौन नहीं रख सकता, इसीलिये कवि ने अपनी अनुभूतियों को वाणी प्रदान की । कतिपय कविताओं में ऐसा प्रतीत होता है मानों स्वयं कवि ही कर्ता के रूप में समाज की खोखली और बीमार मान्यताओं का खण्डन कर रहा है।

पिता के प्रति पुत्र का क्षोभ, जो मुख्य रूप से समाज के प्रति है-

'ओ पिताजी ! आपको मेरा नमस्कार बारम्बार,

जहाँ तक आप जनक हैं, पालक, पोषक, शिक्षक प्रगति के प्रेरक हैं, §बड़ा खेद है कि आप कुछ और भी हैं§ जहाँ आप सड़ी-गली रूढ़ियों के प्रतिनिधि हैं, प्रतिगामी पोंगापन्थियों के ठेकेदार §और कुछ और भी, जो मुझसे न कह-लाइये§ वहाँ आपको मेरी ठोकरें, एक-दो-तीन-चार ।'[2]

कवि साम्यवादी विचारधारा के समर्थक हैं । 'चार पीढ़ियाँ' कवित

- -

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ पृ0-101।

में कवि ने पीढ़ियों के पार्थक्य के साथ विचारों की भी पृथकता को दर्शाया है । पूँजीवाद का घोर विरोध है-

'बाबा, जब उस हवेली के सामने से गुजरते थे,
उसको सलाम करते थे,
पिताजी, उसकी तारीफ करते न थकते थे ।
मुझसे नहीं किया जाता उसका गुणानुवाद,
मेरे लड़के, जब उस हवेली के सामने से निकलते हैं,
कहते हैं, पूँजीवाद, मुर्दाबाद ![1]

'बुद्ध और नाचघर' नामक लम्बी कविता में वर्तमान युग की फैशन परस्ती और भग्न सौन्दर्यानुभूति पर कवि ने बड़ा करारा व्यंग्य किया है ।

वर्तमान सामाजिक समस्याओं को 'परिवार नियोजन', 'नयी लीक', 'युगनाद', 'नये-पुराने', 'विश्वास-अविश्वास', 'खंण्डित मूर्तियों की आवाज' और 'महत्वाकाँक्षा' आदि कविताओं में व्यंग्य के माध्यम से प्रस्तुत किया है । व्यंग्य का एक रूप देखिये-

'अब कानून - कचहरी ऐसी
बेटे को भी सही बाप का बेटा साबित करने में दिक्कत होती है।

व्यंग्य का यह पुट आगे बढ़ता गया और 'नयी लीक' कविता में जमाने की कशमकश को देख यह व्यंग्य बहुत गहरे उतरकर नयी पीढ़ी पर आक्रोश व्यक्त करता है-

"जिन्दगी और जमाने की कशमकश पहले भी थी, अब भी है,
शायद ज्यादा, आगे भी होगी, शायद और ज्यादा ।

---

1. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृ0-268
2. बच्चन : वही पृ0-243

तुम्ही नयी लीक धरना, अपने बेटों से पूछकर उन्हें पैदा करना ।[1]

कवि का यह चिन्तन है कि मनुष्य के वे मूल्य जिनसे वह अपने जीवन का निर्माण करता है, और जिनके सहारे वह अपनी जिन्दगी को गति एवं प्रगति की ओर ले जाता है, वे शाश्वत मूल्य आज समाप्त हो रहे हैं और क्षणिक मूल्य स्थापित हो रहे हैं । आज श्रद्धा-पाखण्ड के रूप में प्रेम-व्यापार के रूप में, मानवीय सम्बन्ध पूरी तरह औपचारिक और अनिर्णय की स्थिति में हैं । टूटते मानव-मूल्यों पर भी कवि ने चोट की है-

'चचा, चचा, चचा, चचा में अब कुछ नहीं बचा,
झुके हुये सलाम हैं, चची के गुलाम हैं ।'[2]

'त्रिभंगिमा', 'बुद्ध और नाचघर', 'बहुत दिन बीते', 'चार खेमें चौंसठ खूँटे', 'कटती प्रतिमाओं की आवाज', 'जाल समेटा', 'उभरते प्रतिमानों के रूप' आदि कवि की परवर्ती काव्य कृतियों में यह सामाजिक-व्यंग्य उभरकर सामने आया है ।

धार्मिक चिन्तन :- धर्म के प्रति बच्चन जी का चिन्तन बहुत ही साफ सुथरा और उदार है । वे किसी भी एक धर्म में नहीं बँधना चाहते वे मुख्य रूप से मानव धर्म के ही पुजारी हैं । धर्म की जंजीरों में जकड़े हुए मनुष्यों को भी उन्होंने अनेकानेक स्थानों पर सचेष्ट किया है । वे मानते हैं कि धर्म का कार्य मनुष्य को जोड़ना है, तोड़ना नहीं । जो धर्म मनुष्य को जोड़ सके, प्रेम की भावना में बाँध सके, बच्चन जी उसी के उपासक हैं । उन्होंने धर्म के पोंगापंथियों और बाह्याडम्बर प्रिय लोगों

---

1. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृ0-242
2. बच्चन : वही पृ0-234

पर कुठाराघात किया है ।

धर्म के प्रति कवि ने अपना विचार अपनी आत्मकथा 'नीड़ का निर्माण फिर' में व्यक्त किया है-

'भेद, विविधता वैपरीत्य, विरोध
अ - धर्म के लक्षण हैं, धर्म के लक्षण नहीं ।'[1]

कवि का धर्मों के प्रति क्या दृष्टिकोण है यह उन्होंने 'मधुशाला' में अनेकानेक रुबाइयों में व्यंग्य द्वारा प्रस्तुत किया है । एक रुबाई द्रष्टव्य है-

'धर्मग्रन्थ सब जला चुकी है जिसके अन्तर की ज्वाला,
मन्दिर, मस्जिद,, गिरजे-सबको तोड़ चुका जो मतवाला,
पंण्डित, मोमिन, पादरियों के फन्दों को जो काट चुका,
कर सकती है आज उसी का स्वागत मेरी मधुशाला ।'[2]

धर्म की बेड़ियों को कवि ने तोड़ डाला है और वह स्वतन्त्र हो बाह्याडम्बर प्रधान धर्मों की उपेक्षा कर रहा है-

'हमने छोड़ी कर की माला, पोथी-पत्र भू पर डाला,
मन्दिर-मस्जिद के बन्दीगृह को तोड़ लिया कर में प्याला,
औ' दुनिया को आजादी का सन्देश सुनाने हम आये
क्रोधी मोमिन हमसे झगड़ा पण्डित ने मन्त्रों से जकड़ा,
पर हम थे कब रुकने वाले, जो पथ पकड़ा, वह पथ पकड़ा,
पथ-भ्रष्ट जगत को मस्ती की, अब राह बताने हम आये ।
मधु-प्यास बुझाने आये हम, मधु-प्यास बुझाने हम आये ।'[3]

---

1. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर §खण्ड-7§ पृ0-388
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई 17 पृ0-47
3. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृ0-87

कवि ने 'बैर बढ़ाते मस्जिद-मन्दिर, मेल कराती मधुशाला ।'[1] द्वारा सम्पूर्ण देशवासियों को जागृति की चेतना प्रदान की है । 'मधुशाला' की रुबाइयाँ पग-पग पर उदार धर्म की अर्थात मानव-धर्म की स्थापना करती हैं ।

राजनीतिक चिन्तन :- राजनीति के सम्बन्ध में बच्चन जी का मानना है कि- 'राजनीति जीवन की औषधि है, वह जीवन के लिये भोजन नहीं बन सकती ।'[2] और जब वे देखते हैं कि राजनेताओं के लिये राजनीति उनके स्वार्थ का साधन बनी हुई है तो उनके विचारों में उग्रता और क्रान्ति का स्वर जागृत होता है । कवि ने राजनीति की विसंगतियों और अव्यवस्थाओं को अपनी परवर्ती कृतियों में चित्रित किया है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भी कवि ग्रामीणों व कृषकों की दुर्दशा देखकर दुख से अभिभूत हो जाता है और सोचता है-

> 'सोचता था, आज चार हजार साढ़े तीन सौ सेतीस ऊपर,
> दिवस बीते रेंगते, सन्देश पर, गणतन्त्र दिन का बीस मील
> नही गया है ।'[3]

'खजूर' कविता में यह व्यंग्य नेताओं के आन्दोलन, व्याख्यान और वन-महोत्सव पर करारी चोट करता है, व्यंग्य की मार यहाँ पैनी अधिक है । 'महागर्दभ' कविता में भी योजना, अभियोजना, परियोजना बनाने वाले नेताओं पर व्यंग्य है । 'दिल्ली की मुसीबत' कविता में कवि ने देश के प्रधानमन्त्रियों की मृत्यो-परान्त बनने वाले स्मारकों और समाधियों को इंगित किया है-

- -

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई 50 पृ0-52
2. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर §खण्ड-7§ पृ0-472
3. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-45

'इसलिए, हे भगवान, तुमसे एक प्रार्थना,
भारत का हर प्रधानमंत्री सौ-सौ बरस तक
अपनी गद्दी पर रहे बना,
क्योंकि हरेक अमर होकर अगर घेरेगा कई-कई वर्ग मील
दिल्ली बेचारी इतनी जमीन कहाँ से लायेगी ।
बदकिस्मत आखिर को समाधि और स्मारकों की नगरी
बनके रह जायेगी ।'[1]

यश प्राप्ति और जयकार लोभी नेताओं पर कवि ने व्यंग्य करना चाहा है-

'जिस तरह जयकार सुनने का किन्हीं को रोग होता,
मर्ज होता, किन्हीं को जय बोलने का ।'[2]

विश्वविद्यालयों को राजनीति का शिकार होते देख कवि धिक्कार उठता है-

'विश्वविद्यालय बँधे हैं विगत मूल्य परम्परा में-
.....और अब तो बिक रहे वे, राजनीति खरीदती है ।'[3]

भाई-भतीजों को पद-सिंहासन पर बैठाने वाली सरकार की कवि ने धज्जियाँ उड़ाई हैं, क्योंकि सत्ता लोलुप नेता किसी भी बात के पावन्द नहीं होते-

"और सरकारें कभी होती नहीं पाबन्द
सच की, न्याय, नैतिकता, उचित की
उचित-अनुचित जो बनाये रहे
उनकी अडिग सत्ता, बेहिचक, बे-झिझक है करणीय उनको ।'[4]

---

1. बच्चन : जाल समेटा (खण्ड-3) पृ0-388
2. बच्चन : दो चट्टानें (खण्ड-3) पृ0-57
3. बच्चन : वही पृ0-91-92
4. बच्चन : वही पृ0-92

'त्रिभंगिमा', 'बुद्ध और नाचघर', 'बहुत दिन बीते', 'चार खेमें चौंसठ खूँटे', 'कटती प्रतिमाओं की आवाज', 'जाल समेटा' और उभरते प्रति-मानों के रूप' आदि कृतियों में व्यंग्य के सभी रूप और प्रकार उपलब्ध हैं । कवि के द्वारा किये गए राजनीतिक व्यंग्य तलवार की धार के समान पैने और तीक्ष्ण हैं, जो सीधे हृदय को बेधते हैं ।

नियति एवं कर्म :-

कवि के मानस पर बचपन से ही कुछ ऐसे संस्कार पड़े थे कि वह नियति की सत्ता को मानने के लिये विवश था कवि बारम्बार नियति की सत्ता को मानता तो है किन्तु भाग्य के सहारे बैठा नहीं रहता बल्कि निरन्तर कर्म के प्रति जागरूक रहता है । कवि ने स्वीकार किया है कि 'जिसे हमारे पूर्वज 'दैव' कहते थे उसे हम भाग्य, नियति, घटना, मौका, §चाँस§ कुछ भी कहें उसकी सत्ता से इन्कार नहीं किया जा सकता । अब मैं ऐसा समझता हूँ, गो सिद्ध आज भी नहीं कर सकता, कि यह हस्तक्षेप इतना अतार्किक, अनियमित, स्वेच्छाप्रेरित नहीं जितना हम अपनी अल्पज्ञता में समझते हैं ।'[1]

कवि का नियति से परिचय अनेक बार हुआ है- 'शायद इसमें नियति का कोई हाथ था । नियति के सोद्देश्य हाथों का परिचय मैं जीवन में कई बार पा चुका हूँ ।'[2]

बच्चन जी ने अपनी 'मधुशाला' में अनेक स्थलों पर नियति पर विश्वास व्यक्त किया है-

---

1. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर §खण्ड-7§ पृ0-485
2. बच्चन : वही पृ0-165

'हाय, नियति की विषम लेखनी मस्तक पर यह खोद गयी-
दूर रहेगी मधु की धारा, पास रहेगी मधुशाला ।'[1]

मानव को निर्बल और भाग्य को प्रबल होते प्रायः कवि ने अपने जीवन में देखा है, उसी को अक्षरशः वाणी भी दी है-

'भाग्य-प्रबल, मानव-निर्बल का पाठ पढ़ाती मधुशाला'[2]

कवि ने अपनी बाध्यता को प्रस्तुत पंक्तियों में स्पष्ट किया है-

'हम जिस क्षण में जो करते हैं, हम बाध्य वही है करने को,
हँसने के क्षण पाकर हँसते, रोते हैं पा रोने के क्षण ।'[3]

और लाचार होकर नियति के आगे हथियार डाल देता है-

'हो नियति इच्छा तुम्हारी पूर्ण, मैं चलता चलूँगा,
पथ सभी मिल एक होंगे तम घिरे यम के नगर में ।'[4]

कवि मौन हो नियति की उँगलियों में नाचता रहता है-

'धर्म-अधर्म-उचित-अनुचित है कहाँ ? प्रयोजन कौन ?
नियति उंगलियों पर है तेरी मुझे नाचना मौन ।'[5]

निशा-निमन्त्रण के अनेक गीतों में कवि ने नियति की सत्ता को स्वीकार किया है, क्यों कि नियति के हाथों इस संसार में व्यक्ति लाचार है, और इसी नियति ने कवि के सुख-सौन्दर्य और चैन को छीन लिया है ।'[6]

किन्तु कवि का बौद्धिक पक्ष सदैव चिन्तन-मनन द्वारा निष्कर्ष पर

- -

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई 96 पृ0-58
2. बच्चन : वही रुबाई 97 पृ0-58
3. बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृ0-127
4. बच्चन : वही पृ0-136
5. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग दो §खण्ड-3§ पृ0-535
6. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-168 और 175

पहुँचता है और वह नए आयामों का स्वागत करता है और उद्घोष करता है-

'भाग्य लेटे का सदा लेटा रहा है
जो खड़ा है भाग्य उसका उठ खड़ा है
चल पड़ा जो भाग्य उसका चल पड़ा है ।'[1]

अतः कवि नियतिवादी होते हुए भी कर्म के प्रति आस्थावान है, उसका कर्मवाद-चरैवेति-चरैवेति की उद्घोषणा करता है, कोरा भाग्यवाद नहीं है, कर्म के प्रति आसक्त मानव की आवाज है । कवि सर्वशक्तिमय विराट सत्ता को भी ललकार देता है ।'[2]

संघर्षमय जीवन व्यतीत करते हुए भी कवि को इस नियतिवाद ने अक्षम और निकम्मा नहीं बनाया और वे कोरे भाग्यवाद के समर्थक नहीं रहे हैं । इस नियतिवाद ने एक ओर उन्हें अपनी परिस्थितियों पर विजय पाने का साहस दिया है तो दूसरी ओर और अधिक निर्भय होकर कार्य करने की प्रेरणा भी दी है । उनके काव्य में पलायनवाद के कहीं भी दर्शन नहीं होते । वे जीवन संघर्षों से प्रेरणा, उत्साह और स्फूर्ति प्राप्त करते हैं-

'धूलिमय नभ, क्या इसी से बाँध दूँ मैं नाव तट पर ?[3]

कवि को बार-बार लहरों में आमन्त्रण का प्रस्ताव मिलता है । बच्चन जी कर्ममय जीवन में आस्था रखते हैं तभी तो वे कहते हैं-

'मिला नहीं जो स्वेद बहाकर
निज लोहू से भीग नहाकर
वर्जित उसको, जिसे ध्यान है जग में कहलाय नर !

- -

1. बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे {खण्ड-2} पृ0-53।
2. बच्चन : आकुल अन्तर {खण्ड-1} पृ0-280
3. बच्चन : मधुकलश {खण्ड-1} पृ0-140

प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर ।[1]

आपत्तियों-विपत्तियों से संघर्ष करता हुआ कवि घुटने नहीं टेकता, बल्कि गौरव से गर्दन ऊँची रखता है-

'चोटों से घबराऊँगा कब, दुनिया ने भी जाना है जब,
निज हाथ-हथौड़े से मैंने निज वक्षस्थल पर चोट सही ।
क्षतशीश मगर नतशीश नहीं ।'[2]

'अग्निदेश से आता हूँ मैं' और 'तुम्हारा लौह चक्र आया' गीतों में भी कवि का स्वाभिमानी मानव का तेजस्वी रूप उभरकर सामने आया है । कवि निरन्तर कर्म पथ पर अग्रसर होता जा रहा है-

'पन्थ जीवन का चुनौती दे रहा है हर कदम पर,
आखिरी मंजिल नहीं होती कहीं भी दृष्टिगोचर,
धूलि से लद, स्वेद से सिंच हो गयी है देह भारी,
कौन सा विश्वास मुझको खींचता जाता निरन्तर ?
पन्थ क्या, पथ की थकन क्या, स्वेद कण क्या,
दो नयन मेरी प्रतीक्षा में खड़े हैं ।'[3]

इस प्रकार 'बच्चन का नियतिवाद कृष्ण के आशावाद से युक्त कर्म वाद का प्रतीक है- 'निराशावाद से बहुत दूर ।'[4]

कवि की सभी कृतियों में हमें कवि कर्म के प्रति सचेत और सचेष्ट दृष्टिगत होता है । वह जीवन-संघर्षों में ही अजेय बनने की प्रेरणा पाता है और प्रदान करता है ।

0 0
0

- -

1. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-254
2. बच्चन : वही पृ0-364
3. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-364
4. सं. बाँके बिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि पृ0-76

अध्याय - पांच

भाषा एवं शिल्प की दृष्टि से "बच्चन" का काव्य

अ ध्या य - 5

भाषा एवं शिल्प

भाषा मनुष्य के भावों की अभिव्यक्ति का सर्वप्रमुख साधन है । प्रत्येक कवि या लेखक की अपनी भाषा शैली होती है जो अन्य कवियों या लेखकों से उसका पार्थक्य स्पष्ट करती है । इसीलिये पाश्चात्य विद्वानों ने 'स्टाइल इज द मैन्स हिमसेल्फ' द्वारा शैली को व्यक्तित्व से जोड़ा है । भाषा विचार का साधन है । भाषा का इस्तेमाल लापरवाही से करने का मतलब है विचारों में लापरवाही करना । प्रसिद्ध रूसी विद्वान प्रे-दिन के अनुसार भाषा भावों की वाहिका है । प्रे-दिन ने यह भी कहा है कि भाषा वह चीज है और सदा रहेगी जिससे लेखक अपनी इमारत खड़ी करता है । ----कोई साहित्यिक कृति कभी अच्छी हो ही नहीं सकती अगर उसकी भाषा दरिद्र हो ।

बच्चन जी साहित्य-जगत में सृष्टा के रूप में अवतरित हुए और यह सर्वविदित है कि सृष्टा के सृजन में नवीन संस्कार नवोन्मेष के साथ प्रति-बिम्बित होते हैं । 'बच्चन' जी ने हिन्दी काव्य-धारा को एक नया रूप एक नया आयाम दिया है । कवि ने सरल-साधारण बोलचाल की तथा मुहावरेदार भाषा में निजानुभूति को बड़ी कुशलता और प्रवीणता से मूर्त रूप प्रदान किया है। 'शब्दों की शिला में भावनाओं की मूर्ति को अंकित किया ।'[1] कवि युग-दृष्टा, भविष्य-सृष्टा और सामाजिक विचारधारा का अग्रदूत होता है । भाषा की सुस्पष्टता एवं भावात्मकता के कारण ही कोई भी रचना सहृदयों को ग्राह्य होती है । भाषा मूलतः एक अखंड चेतना है ।[2]

- -

1. सं. प्रो. दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृ0-34
2. बाबू गुलाबराय : सिद्धान्त और अध्ययन पृ0-231

भाषा के विभिन्न अवयवों में वर्ण, पद और वाक्य इन तीनों का उत्तरोत्तर अधिक महत्त्व होता है यद्यपि वर्णों से शब्द और शब्दों से वाक्य बनते हैं किन्तु व्यावहारिक दृष्टि से मूल महत्त्व वर्णों का ही होता है इसलिए तुलसीदास ने 'रामचरित मानस' में 'आखर बल साँचा' कहकर बतलाया है कि कवि के पास अक्षरों का ही बल होता है । अक्षरों के महत्त्व को स्वीकार करके ही साहित्यशास्त्रियों ने 'छेकानुप्रास' जैसे अलंकार को महत्त्व दिया है । साहित्य में वर्णों का अपना विशेष महत्त्व होता है । शब्द-भण्डार, मुहावरे-लोकोक्तियाँ, गुण, शक्तियाँ इत्यादि से मिलकर ही भाषा सम्पूर्णता और संप्राणता को प्राप्त होती है । हमारे अमूर्त भावों, विचारों और उद्‌गारों को मूर्तरूप प्रदान करने वाली भाषा ही है ।

बच्चन जी काव्य-सृजन के लिये अनुभव, प्रेरणा और अभिव्यक्ति को महत्त्वपूर्ण मानते हैं ।[1] भाषा के सम्बन्ध में स्वयं बच्चन जी के विचार द्रष्टव्य हैं- 'रचना करते समय भाव-विचारों की अभिव्यक्ति ही मेरा मुख्य ध्येय होता है । शब्दों अथवा अभिव्यंजना के नये प्रयोगों के लिये कुछ लिखना मुझे अस्वाभाविक लगता है । जीवन के प्रयोग की अवस्था चल रही हो तो अभिव्यक्ति का प्रयोग स्वाभाविक हो सकता है ।[2] सहज एवं निश्छल अभिव्यक्ति के प्रति आस्थावान बच्चन जी कहते हैं- 'मैं कवि हूँ तो मुझे वचन-प्रवीण होने की आवश्यकता नहीं । अपनी बात कहने में पूरी तरह कहने में, जितनी वचन-प्रवीणता उससे अनिवार्य रूप से सम्बद्ध होकर, जुड़कर आये, मेरे लिये उतनी ही पर्याप्त

- -

1. बच्चन : नये-पुराने झरोखे §खण्ड-6§ पृ0-22।
2. वही पृ0-22।

है, जैसे माँस के साथ त्वचा । त्वचा के ऊपर रंग-रोगन लगाने, क्रीम-पाउडर पोतने की न मुझमें क्षमता है और न वह मेरी रुचि के अनुकूल है, त्वचा में, माँस में दौड़ते स्वस्थ रक्त की जितनी आभा है कविता में उतनी ही कला मुझे सहय है ।[1] अभिव्यक्ति के क्षेत्र में कलात्मकता को जन्म देना कवि का अभीप्शित नहीं है कवि ने स्वयं स्वीकार किया है- 'मैं लिखते समय अपने कथ्य से इतना तन्मय रहता हूँ कि मुझे कला का ध्यान ही नहीं आता । मेरे कथ्य की जीवंतता से कोई कला स्वतः प्रस्फुटित होती हो तो मैं नहीं जानता । सायास किसी तरह की शब्दकला कारीगरी दिखाने का न तो मैंने कभी प्रयत्न किया है और न मुझमें इसकी क्षमता है ।'[2] कवि के कथन की बेबाकी से यह तो स्पष्ट है कि वह वाह्य आडम्बर को महत्व नहीं देता । भावों के उतार-चढ़ाव के साथ-साथ उनकी भाषा, शैली, छन्द, प्रतीक आदि नित्य नवीन नूतन रूप धारण करते रहते हैं । परिवर्तनशील जीवन, मनःस्थिति और विभिन्न जीवन की सुखद और दुखद अनुभूतियों की ही अनुगामिनी रही है उनकी अपनी निजी अभिव्यंजना शक्ति, शिल्प-शक्ति ।

भाषा की बेबाकी, साफ-सुथरापन, प्रेषणीयता की गरिमा, परिष्कार साहित्य के नूतन परिप्रेक्ष्य में अविस्मरणीय है । 'बच्चन की लोक-प्रियता और सफलता का बहुत कुछ श्रेय उनकी सहज सीधी भाषा और शैली को है जो अपने अनेक जटिल से जटिल संवेदनाओं को भी बिल्कुल सीधे और साफ अकृतिम रूप में अत्यन्त ही प्रभावशाली ढ़ंग से व्यक्त करने में समर्थ है ।[3]

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-6§ पृ0-198-199
2. डॉ. श्यामसुन्दर घोष : बच्चन का परवर्ती काव्य पृ0-145-146
3. डॉ. रामकुमार सिंह : आधुनिक हिन्दी काव्य भाषा पृ0-790

छायावादी काव्य की दुरूह, क्लिष्ट और प्रतीकों के बोझ से दबी-झुकी और सहमी दुर्बोध भाषा सामान्य जनता की पकड़ से बहुत दूर थी, बच्चन जी ने उस दूरी को नजदीकियाँ प्रदान कीं । छायावादी काव्य के दुर्भेद्य कवच को तोड़कर अपने काव्य में सहज-सरल, बोधगम्य, प्रसादगुणयुक्त अभिव्यक्ति की भाषा के फूल बरसाए, सामान्य जनता बरबस ही उसकी ओर दौड़ पड़ी, यही कारण है कि कवि का सुख-दुःख पाठक का सुख-दुःख बन जाता है। पाठक तत्काल उससे तादात्म्य कर भाव-सागर में डूबने लगता है । कवि की गतिशील भावधारा के साथ भाषा के उपकरण भी नवीन परिधान धारण करते रहे हैं । यही कारण है कि उनकी प्रारम्भ की और बाद की रचनाओं की तुलना व अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि शनैःशनैः उत्तरोत्तर शिल्प के नए आयामों, अभिव्यंजना की पराकाष्ठा को पार करता हुआ भाषा के उत्तुंग शिखर पर पहुँचकर प्रौढ़ से प्रौढ़तर होता गया ।

छायावादी युग में काव्य-सृजन के कारण बच्चन जी को भाषा के क्षेत्र में अपना अलग स्थान बनाने के लिये कठिन संघर्ष करना पड़ा, रहस्यमयी भाषा को कुहासे से निकालकर सरल सीधी खड़ी बोली का प्रयोग किया । खड़ी बोली मे काव्य-सृजन की स्वतः अभिव्यक्ति इन शब्दों में टपकती है- अट्ठाईस बरस तक खड़ी बोली में लिखने के पश्चात् और उसमें यत्किंचित अधिकार प्राप्त करने पर भी जब मेरे मन में गीता का अनुवाद करने की प्रेरणा हुई तो मैंने उसे अवधी में किया ।[1] तुलनात्मक दृष्टि से बच्चन की भाषा के विषय में डॉ0 उपेन्द्र मानते हैं कि- बच्चन की भाषा न तो द्विवेदी युग के कवियों की

---

1. बच्चन : नये-पुराने झरोखे §खण्ड-6§ पृ0-222

भाँति ऊबड़-खाबड़ और ढ़ीली-ढ़ाली है और न नवीन जी व माखनलाल जी की भाँति अनगढ़ और जटिल, न वह छायावादियों की भाँति गूढ़, लाक्षणिक और जटिल है ।[1] दिनकर जी के अनुसार 'बच्चन जी ने भाषा की संभावनाओं का भी अनुसंधान किया तथा अपने भावानुरूप उसका एक ऐसा स्वरूप ढूँढ निकाला, जो हर तरह से कविता की शोभा और शक्ति को बढ़ाने वाला था। उनके हाथों जनता के बीच हिन्दी कविता का बड़ा यशो विस्तार हुआ है।'[2] सत्यनारायण जी तो भाषा के क्षेत्र में निराला जी के बाद बच्चन जी को ही श्रेष्ठ मानते हैं- उनकी भाषा में एक साथ ही स्वाभाविकता, ऋजुता, प्रवाह और मौलिकता विद्यमान है । -----निराला जी के बाद भाषा का चरम अलौकिक सौन्दर्य यदि किसी कवि की भाषा में है तो वह है बच्चन जी की भाषा ।'[3]

भाषा के सन्दर्भ में विचार करने पर सर्वप्रथम हम कवि के शब्द-भंडार पर दृष्टिपात करते हैं । बच्चन जी ने अपने काव्य-साहित्य में तदभव, तत्सम, उर्दू-अरबी, फारसी, अंग्रेजी और जनभाषा के शब्दों का प्रयोग निः संकोच और प्राकृतिक रूप में किया है, कहीं भी शब्द थोपे हुए नहीं प्रतीत होते । बच्चन जी ने इस संदर्भ में लिखा भी है- 'मेरी शिक्षा उर्दू और फारसी से आरम्भ हुई थी । ----संस्कृत भी मैंने हाईस्कूल तक पढ़ी । थोड़ी उर्दू, फारसी, थोड़ी संस्कृत जानने का प्रभाव मेरी भाषा पर अच्छा पड़ा । उर्दू के शब्दों से मुझे कभी परहेज नहीं रहा है । ज्यादा उर्दू न जानने के कारण

- -

1. डॉ॰ उपेन्द्र : छायावादी कवियों की गीत सृष्टि पृ0-3316
2. नवलकिशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य, पृ0-164 पर
3. सत्यनारायण श्रीवास्तव : साहित्यार्चन, ज्ञानोदय, सितम्बर 1960 पृ0-132

मेरी कविता में कभी ऐसे शब्द नहीं आये जो हिन्दी की प्रकृति पर अत्याचार करते जान पड़ें । उसी प्रकार संस्कृत का कम ज्ञान भी मेरे लिए उपयोगी सिद्ध हुआ है । ----मुझे एक बात पर बड़ा सन्तोष है कि आज तक मुझसे किसी ने यह नहीं कहा कि तुम्हारी कविता मेरी समझ में नहीं आती ।[1]

एक तुला की भाँति कवि का हाथ भाषा के क्षेत्र में सधा रहा है । वे भाषा को भावाभिव्यक्ति का साधन मानते हैं इसीलिए उन्होंने अनेक भाषाओं के विभिन्न शब्दों से अपनी भाषा का कलेवर सँवारा है, या यों कहिए कि स्वतः नैसर्गिक रूप से उनकी भाषा रंग - विरंगा, सतरंगी बाना धारण कर चुकी है । काव्य-सृजन का रहस्य शब्द-साधना ही है । सशक्त और सफल अभिव्यक्ति के लिये उपयुक्त शब्दों का चयन परमावश्यक है । शब्दों के सम्बन्ध में कवि के विचार दर्शनीय हैं- 'कवि हूँ तो 'कविहि' अकथ आखर बल साँचा'- कवि हूँ तो मुझे शब्दों के माध्यम से अपने को व्यक्त करना होगा । इस कारण शब्दों के माध्यम पर मुझे अधिक से अधिक अधिकार प्राप्त करना चाहिए- साहित्य के स्वाध्याय से, काव्यपाठ से, काव्य के मर्म को समझने के प्रयत्न से ।[2]

यह सच भी है कि कवि उत्तरोत्तर अपने काव्य-संग्रहों में शब्द साधना की सफलता और सक्षमता के चरमोत्कर्ष को पहुँच गया है ।

<u>तत्सम शब्द</u> :- बच्चन जी की प्रारंभिक रचनाओं से लेकर अद्यतन रचनाओं में तत्सम शब्दों का प्रयोग बहुतायत से होता है । तत्सम शब्दों से युक्त पदावली

---

1. बच्चन : नये-पुराने झरोखे §खण्ड-6§ पृ0-212-213
2. वही पृ0-230

का सौन्दर्य देखिये- 'पुरुष-प्रकृति के आकर्षण से नवल सृष्टि ने जन्म लिया,
जीव-जीव के आकर्षण ने जगती-तल को बसा दिया ।[1]

और

'पुलकित होकर दिया व्योम ने तारक मणियों का उपहार,
ग्रहण किया ऊषा ने हर्षित हो निज अंचल धवल पसार ।[2]

एक अन्य उदाहरण-

'उन पद-पदमों के प्रभ रज-कण का अंजित कर मांत्रित अंजन
खुलते कवि के चिर अन्धनयन तम से आकर उर से मिलती
स्वप्नों की दुनिया की रानी वह पगध्वनि मेरी पहचानी ।[3]

अन्य प्रचलित तत्सम शब्द- मृदु, विश्व, नित्य, पथ, अविरत, अभिलाषा, झंकृत, माणिक, अवगुण्ठन, ज्वाला, शीतल, दग्धहृदय, जल, हर्ष विकम्पित, पावन, व्यर्थ, जर्जर, तृप्त-विक्रेता, सूर्य, बोलिए विटप, तृण, ऋतु, परिमल, सुरमित, भ्रमर, मंजरिका, सौरभ, नूतन, धन, श्यामल, हिम-श्रेणी, यज्ञ-अग्नि, क्षीण, क्षुद्र, क्षणभंगुर [4]

प्रत्याशा, पश्चिम, आश्रय, कान्त, प्रतीक्षा, अन्त, दिवस, शत्-शत्, वसुधा, अस्ताचल, प्राची, स्वर्णिम, सरिता, अंतरिक्ष, शीत, निष्ठुर, निर्वासित, सम्राट, निर्धन, तृषित, मरु, नीर ।[5]

निर्माण, संसृति, पाषाणों, क्षतशीश, गरल, अश्रु, स्वेद, रक्त,

---

1. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं[2] §खण्ड-3§ पृ0-548
2. वही पृ0-522
3. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृ0-109
4. वही : मधुशाला वही
5. बच्चन : निशा निमन्त्रण §खण्ड-1§

निष्ठुरता, संघर्ष, दुर्भाग्य, उल्लास ।[1] मृत्तिका, विपुल, कंचन, शिला, क्रन्दन ।[2]

वृद्ध, मेघों, कड़क, युग-कल्प, नर्तन, जिह्वा[3]

आह्वान, शक्ति, दृग §हलाहल§ असंख्या, नग्न, मृत्यु, शस्य, वसुन्धरा §बंगाल का काल§ कोटि, व्रत, परित्राण, कटुता §खादी के फूल§ विभा, गरल, आस्था §सूत की माला§ व्योम, चन्द्र, तप्त, ज्योति §मिलन यामिनी§ निर्धन, शूल §प्रणय पत्रिका§ पृथ्वी, रक्तस्नान §धार के इधर-उधर§ निद्रा, स्वप्न, कण §आरती और अंगारे§ विध्वंसों, उत्थान, भृकुटि §बुद्ध और नाचघर§ मुकुलित, दृग §त्रिभंगिमा§ स्निग्ध, शेष, दिव्य §चार खेमें चौंसठ खूँटे§ हिमशृंग, कण्ठ, §दो चट्टाने§ सृजन, मृत्यु §बहुत दिन बीते§ पंक, तस्य §कटती प्रतिमाओं की आवाज§ दिवसावसान, क्षितिज §उभरते प्रतिमानों के रूप§ पशु मूक § जाल समेटा§ इस प्रकार तत्सम शब्दों को देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि का संस्कृत ज्ञान पूर्ण परिपक्व है । इसी कारण उनकी भाषा सम्पन्न, प्रौढ़ और वैदग्ध्यपूर्ण है

कवि ने यत्र-तत्र संस्कृत की पंक्तियाँ ज्यों की त्यों रख दी हैं - ॐय आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मैदेवाय हविषा विधेम ?[4] बंगाल का काल में भी इस प्रकार संस्कृत की पूर्ण पंक्तियाँ देवी काली की वन्दना या स्तुति के रूप मे रखी गई हैं । बच्चन के सम्पूर्ण काव्य-साहित्य में ये संस्कृत की पंक्तियाँ सूक्तियों के रूप में भी प्रयुक्त हुई हैं, इनसे कवि का संस्कृत ज्ञान, पांडित्य और वैदग्ध्य प्रदर्शित होता है । कवि ने शब्द-युग्मों का प्रयोग भी बड़ी बारीकी से किया है ।

- -

1. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§
2. बच्चन : आकुल अंतर §खण्ड-1§
3. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§
4. बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृ0-137

तद्भव शब्द :- बच्चन जी ने अपने काव्य के माध्यम से आम लोगों तक काव्य-रस की गंगा प्रवाहित की है । इसलिए वे न तो संस्कृतनिष्ठ पदावली के पक्षधर थे और न ही उन्हें तद्भव, देशज और विदेशज शब्दों से परहेज था । उनकी अनुभूति सामाजिकों की अनुभूति बने, इसके लिए जो भी शब्द विधान उन्हें रुचिकर लगा, उन्होंने निःसंकोच प्रयोग किया । यद्यपि संस्कृतनिष्ठ पदावली के बीच तद्भव शब्दों का प्रयोग काव्य दोष के अन्तर्गत आता है लेकिन तद्भव शब्दावली तो हिन्दी की शब्द-सम्पदा है, प्राण-तत्त्व है । यही कारण है कि बच्चन जी ने अपनी भाव-सम्पदा को सर्व सामान्य की अनुभूति बनाने के लिए तत्सम शब्दों के साथ तद्भव शब्दों का भी भरपूर प्रयोग किया है । उदाहरण द्रष्टव्य है-

बंसी तेरी पीर बताये, सुनकर मेरा मन अकुलाये, सोने दे न जाने दे मेरी फूल-खटिया मेरी फूल-सेजिया, मेरी सूनी सेजिया, राजा, बाँस की, बजा ले बँसिया औ लठिया ।[1] एक अन्य उदाहरण में भी तद्भव शब्दों का प्रयोग किया है- बीच में थाला तुलसी वाला, कुस-काँटे निरुवारूँ । गाँव बड़ा, पहले अँगना तो अपना बुहारूँ । आरी आरी लगी फुलवारी, क्यारी-क्यारी सुधारूँ । गाँव बड़ा, पहले अँगना तो अपना बुहारूँ । खोल किवाड़ा करूँ उजियारा वन्दन-वार सँवारूँ ।[2]

तत्सम के साथ मिले तद्भव शब्द कितने अभिन्न से प्रतीत हो रहे हैं- 'उसके अंग-अंग में जादू, पर मैं टोना एक बता दूँ, जिससे होरी जाये पूरब की दिशा, गोरी पच्छिम की दिशा, ओ री भोरी, तेरा होरी गोरी नागिन का

- -

1. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-371

2. वही पृ0-373

डँसा ।[1] तद्भव शब्दों के प्रयोग से बच्चन की काव्य-भाषा सहज, स्वाभाविक, सरल और सोंधी-सोंधी महक वाली प्रतीत होती है ।

उर्दू, अरबी और फारसी शब्द :- कवि ने अपनी कविताओं में उर्दू-अरबी शब्दों को आग्रह पूर्वक या सायास नहीं रखा बल्कि भावों के अनुरूप ही भाषा भी भावानुगामिनी होती है अतः ये शब्द बच्चन जी के काव्य में स्वतः ही अपने स्थान के उत्तराधिकारी बने । मधुशाला की रूबाइयों में उर्दू बहुल भाषा ही प्रयुक्त है । एक रूबाई देखिये-

"बजी नफीरी और नयाजी भूल गया अल्ला ताला
गाज गिरी, पर ध्यान सुरा में मग्न रहा पीने वाला
शेख बुरा मत मानो इसको साफ कहूँ तो मस्जिद को,
अभी युगों तक सिखलायेगी, ध्यान लगाना मधुशाला ।।"[2]

एक अन्य उदाहरण- "हम आजादी के पास पहुँच ज्यों ही पाये,
फिरके बन्दी के वह भीषण झोंके आये,
हम नौजवान भी उससे भागे, घबराये,
पर जेर उसे सारी ताकत से करने में,
अपनी अन्तिम साँसों, तक बूढ़ा पिला रहा ।[3]

उर्दू को कवि ने हिन्दी की मित्र मानते हुए 'आरती और अंगारे' में स्वीकृति भी प्रदान की है - लिखता हूँ हिन्दी में जिसकी है उर्दू के साथ मिताई'[4]

- -

1. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-385
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू0-49 पृ0-52
3. बच्चन : खादी के फूल §खण्ड-1§ पृ0-481
4. बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृ0-221

कहीं-कहीं कथ्य के दीर्घ प्रवाह में तत्सम, तद्भव व उर्दू-फारसी के शब्द एक रूप से हो गए हैं- आसमान की धूमिल चादर फटी फर्र से औ' बहिश्त के मिले नजारे - ...... दूर क्षितिज पर एक बड़ा सा खन्दक फूटा, जैसे दो जख ने मुँह खोला ।'[1]

उक्त उदाहरण से यह स्पष्ट है कि बच्चन जी कथ्य के अनुरूप शब्द चयन पर अधिक से अधिक सजग होते चले गए हैं । उर्दू-अरबी, फारसी शब्द उनकी काव्य भाषा के आवश्यक या अभिन्न अंग हैं । अन्य शब्दों पर भी मूक दृष्टि डालिए- साकी, नाज, खजाने, मुअज्जिन, नमाजी, दमखम, सबक, कैद, कब्र, किस्मत, महफिल, हसरतें, अरमानों, खाक ।'[2] दीवानों, दरवाजो, जिंदाबाद, महफिल, जिक्र, लानत ।[3] मंजिल, शाम, अजाने, शोलों, गम, दाग, कफन, तूफान ।[4] कदम, खतम[5] आशियाना, गुल, जोर, जिन्दगी, मुसाफिर, बाकी, तूफान[6] किस्मत, फिरके बन्दी, गुलामी, जहर, बेजबान, जमीन, कातिल, मुद्दत, अकीदा[7] जिंदा, गलवा, अन्दाजेबया, राज, सफर[8] साफ, कौम, कायदा, कसूर, अफसोस, पैगम्बर, हजार, काफर, खिलाफ, कबाब[9] कलम, जोर, बाकी, गरज, तनखवॉह, चीख, सफो । संस्कृतनिष्ठ शब्दों के प्रवाह में उर्दू, अरबी, फारसी के

---

1. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-154
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§
3. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§
4. बच्चन : निशा निमन्त्रण §खण्ड-1§
5. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§
6. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§
7. बच्चन : खादी के फूल §खण्ड-1§
8. बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§
9. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§

शब्दों का सहज अनुकूल और साथ ही सर्वाधिक, सफल प्रयोग बच्चन की लेखनी से ही सम्भव हो सका है ।

अंग्रेजी शब्द :- बच्चन जी ने भारतीय जन-जीवन में पूर्णतः घुल-मिल जाने वाले अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग प्रभूत मात्रा में किया है । उनके अनुसार-बहुत महत्त्वपूर्ण वर्ग की सम्पर्क भाषा अंग्रेजी है और आगे भी रहेगी- इसे अपदस्थ करना न सम्भव है न लाभकर । इस सत्य से मैं धीरे-धीरे अवगत हुआ ।[1] कुछ अंग्रेजी शब्द इस प्रकार हैं- टावर, एलीफैण्ट, टाउन, रेस्तराँ, टेबिलें, स्टेशन, ट्राली, पाकिट, पर्स, क्रेटों, प्लाव, बजट, लीडर, नोटिस, ट्राँजिस्टर, पैम्फ-लेटों, पोस्टरों, लेटर बाक्स, फ्लैट ।[2]

उर्दू के शब्दों की भाँति अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग से कवि के काव्य केलेवर के सौन्दर्य में वृद्धि ही हुई है । उनके काव्य में अंग्रेजी शब्द अपनी स्वतन्त्र सत्ता भी नहीं रख पाते- 'आसन भी है, शासन भी है, अफसर, दफ्तर, फाइल, नोट, पुलिस, कचहरी, पलटन-सलटन, सबसे ताकतवर है बोट, बोट नहीं क्यों पाया तुमने 9 तिकडम बाजी में तुम फेल ।[3]

यत्र-तत्र अंग्रेजी के वाक्य का प्रयोग भी किया है- 'यू हैव टू गिव योर पीपुल दि सेंस ऑफ हंगर ।'[4] ड्राइंगरूम, डांसिंग हाल, पाइप, सिगरेट, आर्केस्ट्रा, ट्रम्पेट, क्लैरिनेट, कारनेट, डाँस[5] ।

---

1. डॉ. सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य, पृ0-276
2. बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप {खण्ड-3}
3. बच्चन : वही {खण्ड-3} पृ0-335-336
4. बच्चन : बंगाल का काल {खण्ड-1} पृ0-428
5. बच्चन : बुद्ध और नाचघर {खण्ड-2}

इसके अतिरिक्त 'बूट विम-र्दित' और 'फ्लर्टाचार' जैसे नवीन शब्दों को भी कवि ने अपने काव्य में स्थान दिया है जो इनके वैदग्ध्य और नूतन प्रयोग का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं । ऐसे शब्दों का प्रयोग अभिव्यक्ति को सशक्त और वातावरण निर्माण में सहायता करते हैं ।

<u>ग्राम्य तथा देशी शब्द</u> :- बरने, थहाई, बुहारूँ, बदरा, अँखआए, उजियार, नेड़े, माटी, अटारी, बौराया, निगोड़ी, ताऊँ, चौमासा, ढिग, जगहर, सोन चिरैया, तलैया, बलैया[1] इत्यादि अनेक ग्राम्य और देशज शब्दों की भर-मार बच्चन जी के काव्य में दिखाई देती है । बच्चन जी जन-भाषा के कवि हैं, इसलिए लोक चेतना के अनुरूप उनके भाषा रूपों में स्वमेव परिवर्तन हुआ है । कहीं-कहीं पर कवि ने भोली-भाली अशिक्षित ग्रामीण महिलाओं से मजदूरी वाले भाव से ही बात कहलाई है- "साहब, हमारो ठेकेदार नई बदलो हैं ।" साहब बड़ो जालम हाकम है । साहब, उसे बदलो तो जाने ।[2] कवि ने 'जुन्हाई'[3] जैसे कोमल, कर्णप्रिय और मधुर शब्दों का प्रयोग भी बड़ी सफलता से किया है । कांछे, ईर-बीर-फत्ते, खपरी, दिवले, बगट्टट, बुढ़भस, बरियार बरद, नरियाते, गरियाते[4] मिताई, अनेरा, धूर, ढूह, छपकछैया[5] इन्साना[6] और छुई-छुअउअल[7] आदि साधारण ग्रामीण बोली के शब्द बच्चन के काव्य में बहुत मिलते हैं ।

- -

1. बच्चन : त्रिभंगिमा और चार खेमे चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§
2. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-148
3. बच्चन : मधुशाला रू038 पृ0- 50
4. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§
5. बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§
6. बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-3§ पृ0-305
7. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-217

ताग§-धिन्ना, ढेल-ढकेल, लटाइयों, टेंट, चोंचक, लिसड़, मडई, सुग-बुग इत्यादि ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग भी किया है । पिछआता, मनुआं, कुहरिल, निंदियारा, नरियाते और इन्साना शब्द बच्चन जी ने स्वयं गढ़ लिये हैं अथवा नया रंग-रूप-आकार प्रदान कर दिया है ।

कवि के पूर्ववर्ती काव्य की अपेक्षा परवर्ती काव्य में चुटीली व्यंग्यात्मक भाषा है, प्रतीकों और रूपकों के द्वारा कवि ने वर्तमान जीवन के सभी पक्षों और राजनीतिक अपंगता और रूढ़ियों पर तीखे व्यंग्य किये हैं । अतः भाषा के सम्बन्ध में भाभडा जी का यह कथन निर्विवाद सत्य है- 'भाषा के अन्वेषण और उसमें बोलचाल की सामान्यता की दृष्टि से हम बच्चन को आधुनिक हिन्दी का कबीर कह सकते हैं ।[1]

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि ने अनेक भाषाओं के शब्द भण्डार से अपना काव्य-कलेवर सँवारा है । यह कवि का उदारतावादी दृष्टिकोण है, प्रत्येक भाषा उनके लिये सम्माननीय है कवि का भाषिक ज्ञान अति विस्तृत है, क्यों कि कवि ने किसी भी भाषा की शब्दावली को सायास नहीं अपनाया है वरन् शब्द खुद-ब-खुद उनके काव्य में प्रवेश कर अपने उचित आधिकारिक स्थान पर अधिष्ठित हो गए हैं ।

कवि ने अपने काव्य में मुहावरों और कहावतों, महाकवियों की सूक्तियों, उक्तियों का प्रयोग भी मुक्तहस्त से किया है । कवि के हाथों से प्रयुक्त मुहावरे सहज और सफल बन पड़े हैं-

'वही निहाद है, कि तेली का तेल जले, मशालची की....

- -

1. नवल किशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य पृ0-165
   के. जी. कदम : कवि श्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन पृ0-292

मुहावरे का लक्ष्य तो नीचे हैं, पर निशाना ऊपर भी बैठेगा

मशालची की छाती फटे ।'[1]

इसके अतिरिक्त कवि ने अनेक स्थलों पर मुहावरों का सहज प्रयोग किया है । कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

तिल में किसने ताड़ छिपाया ?[2] हाथ बँटाना[3] ठोकरखाना[4] ओझल होना[5] बाल बाँका करना[6] दाल न गलना, ज्ञान बघारना, नशा का-फूर होना, एक कान से सुनना, दूसरे से निकालना, विष के घूँट पीना[7] थोथा चना बाजे घना , तख्ता पलट गया[8] पराधीन सपनेहु सुख नाहीं[9] शीशे के घर के वासी को औरों के घर ईंट फेंकनी नहीं चाहिए ।[10] नक्कारों में तूती बजकर[11] लेदमड़ी का तेल कान में डाल लिया है[12] इत्यादि मुहावरे कवि के हाथों का संस्पर्श पाकर दीप्त हो उठे हैं । मुहावरों की भाँति कवि ने कहावतों का प्रयोग भी किया है कुछ उदाहरण देखिये- रानी रूठेगी, लेगी अपना सुहाग, राजा रूठेंगे, लेंगे अपना राज । पर ये हैं जितने छोटे उतने ही खोटे[13] मुर्गे के बोलने से सवेरा नहीं होता[14] भाग्य प्रबल

- -

1. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृ0-281
2. बच्चन : आकुल अंतर §खण्ड-1§ पृ0-275
3. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-222
4. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ पृ0- 51
5. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-1§ पृ0-102
6. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं §2§ §खण्ड-3§ पृ0-518
7. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§
8. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-159, 160
9. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृ0-246
10. बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-3§ पृ0-308
11. बच्चन : वही 12. बच्चन : वही पृ0-348, 366
13. बच्चन: बुद्ध और नाचघर §खण्ड- 2§ पृ0-307, 305
14. बच्चन: दो चट्टानें §खण्ड- 3§ पृ0-50

मानव निर्बल[1] निर्बल के बल राम, अपनी रोटी, अपना राज, इन्कलाब जिंदाबाद ।[2] यत्र-तत्र कवि ने कहावतों की झड़ी लगा दी है जो काव्य में अनुपम सौन्दर्य बिखेर देती है-

'वहाँ एक पासी का लड़का आठ बरस का,
अनपढ़ जिसको काला अच्छर भैंस बराबर,
बैठ एक टीले के ऊपर हाकिम जैसे, लोगों के मामलों
मुकदमों को सुनता है, तुरत-तुरत फैसला सुनाता और
फैसला ऐसा जैसे दूध-दूध हो पानी-पानी ।'[3]

बच्चन जी ने स्वानुभव से इतना सुपुष्ट वाक्य-विन्यास किया है कि सूक्ति का आभास होने लगता है- 'फूल हथेली सहलाते-सहलाते गड़ता । गड़ते-गड़ते काँटा कोमल पड़ जाता है । शबनम का अंगारों से अद्भुत नाता है ।'[4]

कवि का बाल-सुलभ-मन कभी-कभी पहेली बूझने लगता है- 'बोया तो वासमती काटी तो बाजरी, रींधी तो जोधरी, खायी तो कांकरी । पहेली बूझो, चौधरी ।[5] अतः हम कह सकते हैं कि बच्चन जी की भाषा में मुहावरे और कहावतों का सधे हाथों से प्रयोग हुआ है उनकी भाषा के सभी अवयव पुष्ट व सम्पन्न हैं । अलंकारों की चर्चा करने से पूर्व अलंकार शब्द के अर्थ का स्पष्टीकरण कर लेते हैं- अलंका = अलम् वृध = आभूषण §शोभावर्धन करने वाला§ 'अलं करोतीति अलंकारः' जो शोभा को पूर्ण करे वह अलंकार है । दण्डी ने -

- -

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 97 पृ0-58
2. बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृ0-425, 441
3. बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृ0-38
4. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-174
5. बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-3§ पृ0-355

'काव्य शोभा कारान् धर्मान अलंकारान् प्रचक्षते ।' अर्थात् काव्य-शोभा के कारक धर्मों को अलंकार कहा है ।

दण्डी के पश्चात वामन ने अपने ग्रन्थ काव्यालंकार में 'सौन्दर्य' §काव्य में निहित§ को ही अलंकार माना है । उनके अनुसार- "सौन्दर्यमलंकार:" मनुष्य प्रकृति से ही सौन्दर्य प्रेमी है क्यों कि वह प्रकृति का अंग है और प्रकृति स्वत: सुन्दर है । स्थूल रूप में वाह्य आकर्षण का नाम ही सौन्दर्य है ।[1] अनेक साहित्यकारों, विद्वानों, संस्कृत पंडितों ने अलंकार की अनेक प्रकार से परिभाषा दी है किन्तु सारांश यही निकलता है कि काव्य में सौन्दर्य-वर्धन के निमित्त ही अलंकारों की योजना आवश्यक है ।

आचार्य शुक्ल जी के अनुसार-' भावों का उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओं के रूप गुण और क्रिया का अधिक तीव्र अनुभव कराने में सभी सहायक होने वाली युक्तियाँ अलंकार हैं ।'[2]

अलंकारों के मोह-पाश में बच्चन नहीं बंध पाए हैं फिर भी अलंकार स्वत: अपने स्वाभाविक रूप में उनके काव्य में प्रवेश कर गए हैं । उनकी मोहक छटा दृष्टव्य है-

<u>अनुप्रास</u> :- बच्चन जी के काव्य में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है । छेकानुप्रास, वृत्यनुप्रास, श्रुत्यनुप्रास और लाटानुप्रास सभी अपने-अपने सौन्दर्य के साथ प्रस्फुटित हुए हैं । एक छेकानुप्रास का उदाहरण देखिये- चाँद चमकता, वायु ठुमकती, छन-छन हिलती तरु की छाया ।[3] 'स्वर्ग के अवसान का अवसान ।

- -

1. डॉ. यतीन्द्र तिवारी : दिनकर की काव्य भाषा पृ0-304-305
2. डॉ रामखिलावन तिवारी : माखनलाल चतुर्वेदी :व्यक्ति और कवि पृ0354-355
3. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-61

यमक :- यमक अलंकार का प्रयोग कतिपय स्थानों पर ही हुआ है- 'तुम तिल थे लेकिन रहे झुकाते सदा ताड, तुम तिल थे लेकिन लिये ओट में थे पहाड़, शंकर पिनाक सी रही तुम्हारी जमी धाक, तुम हटे न तिल भर, गयी दानवी शक्ति हार, तिल एक तुम्हारे जीवन की व्याख्या सारी ।[1]

श्लेष :- यमक की भाँति श्लेष अलंकार का प्रयोग भी बच्चन जी ने कम ही किया है फिर भी श्लेष का सौंदर्य भी देखने योग्य है- 'पर बढ़ती तासीर सुरा की साथ समय के, इससे ही, और पुरानी होकर मेरी और नशीली मधुशाला ।[2]

एक अन्य उदाहरण भी दृष्टव्य है- 'कहता, 'कल' 'कल' करती वे फिरती आशा की बलिहारी, अब हेमन्त-अन्त नियराया, लौट न आ तू गगन-विहारी ।[3]

पुनरुक्ति प्रकाश :- अनुप्रास की भाँति यह भी इतनी सहज कोटि का अलंकार है कि किसी भी कवि के काव्य में यह अनायास प्रवेश प्राप्त कर लेता है इसके अंतर्गत समानार्थक शब्दों की पूर्ण आवृत्ति होती है । इस अलंकार के द्वारा काव्य में रुचिरता और भावों में तीव्रता व क्षिप्रता आती है । एक प्राकृतिक दृश्य में इसका मोहक रूप देखिये- 'चाँदनी रात के आँगन में कुछ छिटके-छिटके-से बादल, कुछ भटका-भटका-सा मन भी ।'[4]

'मयूरी' कविता में भी इसका सौन्दर्य देखनेलायक है जो संगीत और

---

1. बच्चन : सूत की माला §खण्ड-1§ पृ0-543
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ पृ0-066
3. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-44 पृ0-120
4. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ गीत-13 पृ0-050

ताल की सृष्टि करता है-

'मयूरी, उ-मन-उ-मन नाम ! मयूरी छम-छना छन नाच !

मयूरी, नाच मगन-मन नाच ।'[1]

उपमा :- 'मधुशाला' में अनेक स्थलों पर कवि ने उपमा अलंकार का प्रयोग किया है । एक रुबाई देखिये-

'यज्ञ-अग्नि-सी धधक रही है मधु की भट्ठी की ज्वाला,
ऋषि-सा ध्यान लगा बैठा है हर मदिरा पीने वाला,
मुनि-कन्याओं-सी मधुघट ले फिरतीं साकी बालाएँ,
किसी तपोवन से क्या कम है मेरी पावन मधुशाला ।[2]

अनुप्रास की भाँति उपमाए भी बच्चन के काव्य में सुन्दर बन पड़ी हैं । सतरंगिनी की नागिन कविता में उपमा अलंकार पूर्ण सौष्ठव के साथ अवतरित है ।

रूपक :- बच्चन जी अपनी पत्नी तेजी बच्चन को सम्बोधित करके कहते हैं-

'नयन तुम्हारे चरण-कमल में अर्ध्य चढ़ा फिर फिर भर आते ।[3]

उत्प्रेक्षा :- हेतूत्प्रेक्षा का चरम सौन्दर्य सतरंगिनी की कोयल कविता में दर्शनीय है । उत्प्रेक्षा का कवि ने कम प्रयोग किया है । एक उदाहरण 'दो चट्टानें' से -

'तैरती-सी लाश, मानो पोत'[4]

वीप्सा :- उत्साह, आश्चर्य घृणा और शोक आदि मनोविकारों की तीव्रता प्रकट करने के लिये कवि ने शब्दों का बार-बार प्रयोग किया है । यह मनोवैज्ञानिक सत्य भी है तथ्य भी है कि ऐसे क्षणों में मनुष्य अपने भावों को बार-बार प्रदर्शित

---

1. बच्चन : सतरंगिनी {खण्ड-1} पृ0-338
2. बच्चन : मधुशाला {खण्ड-1} रू. 54 पृ0- 52
3. बच्चन : प्रणयपत्रिका {खण्ड-2} गीत-19 पृ0-103
4. बच्चन : दो चट्टानें {खण्ड-3} पृ0- 34

करता है । ऐसा ही एक उदाहरण मधुशाला का-

'यह मदिरालय के आँसू हैं, नहीं-नहीं मादक हाला,
यह मदिरालय की आँखें हैं, नहीं-नहीं मधु का प्याला,
किसी समय की सुखद स्मृति है साकी बनकर नाच रही
नहीं-नहीं कवि का हृदयांगण, यह विरहाकुल मधुशाला ।'[1]

भ्रान्तिमान :- भ्रान्तिमान अलंकार का एक सुन्दर उदाहरण सजीव सुग्गे द्वारा द्विगुणित बन पड़ा है । एक दृष्टि डालिये- 'सन्ध्या की लाली में तरु-कंकाल खड़ा था, एक डाल में बस दो पत्ते लगे हुए थे, खड़ा हुआ सामने को देखने को जैसे ही दोनों पत्ते हिले, हवा में साथ ढह गये, अह, सुग्गे थे ।'[2]

सन्देह :-'प्रकृति में तुम बिंबित चहु ओर कि तुम में विम्बित प्रकृति अशेष ।'[3]

सन्देह का एक अन्य उदाहरण देखिये-'मनुष्य है कि देव है कि मेरु-दण्ड है तना ! अजेय तू अभी बना ।'[4] मधुशाला की पंक्ति द्रष्टव्य है- 'मैं मधु-शाला के अन्दर या मेरे अन्दर मधुशाला ।[5]

उदाहरण :- 'जिस तरह बत्तीस दाँतों से घिरी है जीभ,
ऐसे उस समय का था प्यार मेरा ।'[6]

उदाहरण का एक अन्य उदाहरण- 'जैसे गरुड़ गगन में उड़ता महाकाव्य सा लिखता जाता, जैसे हंस सलिल पर तिरता लघु लहरों की पंक्ति बनाता ।'[7]

- -

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 132 पृ0-63
2. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-177
3. बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-39 पृ0-116
4. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-347
5. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 119 पृ0-62
6. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-32 पृ0-111
7. बच्चन : वही गीत-12 पृ0- 99

<u>यथासंख्य</u> :- कवि ने एक ही उदाहरण को दो विरोधी रूपों में अपनी अलग-अलग कृतियों में व्यक्त किया है- 'कौन श्यामल श्वेत 'औ' र तनार नीरज के निकुंजों ने तुझे भरमा लिया है ? कौन हलाहल अभी रस और मदिरा, से भरे लबरेज-प्यालों को पिया है ।[1] दूसरा उदाहरण-

'हलाहल और अमिय, मद, एक, एक रस के ही तीनों नाम,
कहीं पर लगता है रतनार, कहीं पर श्वेत, कहीं पर श्याम ।'[2]

यथासंख्य का एक अन्य उदाहरण -§रंगसाम्य§

'चन्दा से चाँदी चूती है, सूरज से सोना ढ़लता है,
पेड़ों में मरकत लगते हैं फूलों से हीरा झरता है ।'[3]

<u>अन्योक्ति</u> :- गुलहजारा कविता में अन्योक्ति का भाव बिल्कुल स्पष्ट देखा जा सकता है- 'जलज अब तू लड़ रहा है, और यह कटु, करुण, अप्रिय सत्य आज मुझको कहना पड़ रहा है ।'[4]

<u>**विषम**</u> :- 'मैं कहाँ पर रागिनी मेरी कहाँ पर ।'[5]

एक अन्य उदाहरण- 'तेरा-मेरा सम्बन्ध यही-तू मधुमय औ' मैं तृषित-हृदय'[6]

<u>विरोधाभास</u> :- बच्चन जी ने विरोधाभास अलंकार का प्रयोग अनेक स्थलों पर किया है क्योंकि उनके जीवन में परिस्थितियाँ प्रायः विपरीत रही हैं । 'सूत की माला' में दिवंगत बापू की अस्थि-रज को माँग में भर कर भारतमाता को सुहागिन होने का संदेश दिया है- 'अब राख तुम्हारी आर्य भूमि की भर' माँग

---

1. बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-45 पृ0-120
2. बच्चन : हलाहल §खण्ड-1§ गीत108 पृ0-396
3. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-175-176
4. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-446
5. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ गीत-3 पृ0- 24
6. बच्चन : मधुबाला पृ0-100

हो अमर तुम्हें खो इस तपस्विनी का सुहाग ।[1]

विशेषण, विपर्यय :- छायावादी और छायावादोत्तर कवियों में पश्चिम के 'विशेषण-विपर्यय' अलंकार के प्रति विशेष मोह है । इसी को उक्ति वैचित्र्य भी कहते हैं जो हमारे प्राचीन काव्य में भी उपलब्ध है । स्वतन्त्र अलंकार के रूप में इसकी मान्यता आधुनिक युग में ही स्वीकृत हुई । बच्चन जी के काव्य में भी इसका प्रचुरता से प्रयोग हुआ है-

'प्राची से ऊषा हँस पड़ती, विहगावलियाँ नौबत झड़ती ।[2]

एक अन्यत्र स्थान पर दृष्टिपात करें-

'विश्व सारा सो रहा है, हैं विचरते स्वप्न सुन्दर, किन्तु इनका संग तजकर, व्योम-व्यापी शून्यता का कौन साथी हो रहा है ! विश्व सारा सो रहा है ।'[3]

मानवीकरण :- कवि ने मानवीकरण अलंकार का बड़ी सफलता से प्रयोग किया है। 'मिलन यामिनी' के गीतों में इसका चरमोत्कर्ष दृष्टव्य है-

'पिछले पहर दबे पाँवों से आती है चाँदनी सहमती,
हवा लदी फूलों की बू से चलती है पग-पग पर थमती,
आसमान पर पहरा देते ऊँघ रहीं तारों की आँखें,
औ' धरती के कण-कण में है मीठी-मीठी नींद विलसती ।'[4]

मानवीकरण और विशेषण विपर्यय का मिश्रित प्रयोग दृष्टव्य है-

'जल उठा था प्रश्न नस-नस में तुम्हारी और मेरी हर शिरा में मौन उत्तर तप रहा था ।[5]

---

1. बच्चन : सूत की माला §खण्ड-1§ पृ0-540
2. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-79 पृ0-192
3. बच्चन : वही गीत-34 पृ0-174
4. बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ गीत-29 पृ0- 63
5. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-192

कवि के काव्य में सर्वत्र मानवीकरण की छटा बड़ी मनमोहक बन पड़ी है । उपर्युक्त अलंकारों के अतिरिक्त बच्चन जी ने उल्लेख, दीपक, अनन्वय, व्यतिरेक, निदर्शना, अर्थान्तर न्यास और प्राकृतिक अलंकारों का प्रयोग भी अपने काव्य-साहित्य में सधे हुए हाथों से कुशल शिल्पी की भाँति किया है । अतः हम कह सकते हैं कि बच्चन का काव्य-साहित्य अभिव्यंजना के सभी आयामों को पार करता हुआ उच्चता और श्रेष्ठता का अधिकारी हो गया है ।

शब्द-शक्ति :- भावों की प्रेषणीयता के लिये कवि शब्दों को माध्यम बनाता है और इसी शब्द-व्यापार को शब्द-शक्ति कहते हैं । उचित एवं सजग शब्द-विन्यास के अभाव में काव्य में काव्य-भाषा में मधुरता एवं सजीवता का अभाव रहता है और भाषा रूखी-सूखी निष्प्रभ और निस्तेज होती है । बच्चन जी का शब्द-विन्यास अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि का एवं अनूठा है ।

बच्चन जी की काव्य-कृतियों में भावों की अभिव्यक्ति के हेतु इन तीनों ही शब्द शक्तियों का आश्रय लिया गया है, किन्तु मूलरूप से अधिकाँशतः बच्चन का काव्य-प्रासाद अभिधा की सुदृढ़-ठोस नींव पर ही समुन्नत हो, सगर्व खड़ा है । 'राकेश' जी ने बच्चन को अभिधा का कवि कहा है- 'कवि ने अभिधा का प्रयोग अपनी कविता में अधिक किया है । उन्होंने लक्षणा-व्यंजना का प्रयोग बहुत कम किया है ।'[1]

अभिधा :- जिस स्थल पर शब्द द्वारा सीधे सांकेतिक अर्थ का बोध होता है उस स्थल पर अभिधा शक्ति होती है । कवि ने अभिधा से ही अपने काव्य-पट को रंगा है । अपनी वैयक्तिक विदग्धता के कारण कवि ने शब्दों को चुनकर पकड़ा

---

1. सं. प्रो. दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृ0-134

है और सहज-सीधे अन्दाज में अपनी अभिव्यक्ति की है । एक उदाहरण देखें-
'मेरे पूजन-आराधन को मेरे सम्पूर्ण समर्पण में
जब मेरी कमजोरी कहकर मेरा पूजित पाषाण हँसा ! तक रोक न पाया मैं आँसू !'[1] कितनी सहज और प्रबल वाग्धारा है । सरल भाषा में ढली अभिधा का एक और रूप देखिये- ' खिड़की से झाँक रहे तारे ! जलता है कोई दीप नहीं, कोई भी आज समीप नहीं, लेटा हूँ कमरे के अन्दर बिस्तर पर अपना मन मारे।'[2]

बापू के अस्थि-विसर्जन का एक अभिधापूर्ण दृश्य-

'जब हुआ विसर्जित गाँधी जी का शुभ्र फूल,
दे दीप्यमान हो उठा सुरसरी का दुकूल,
ऐसी आभा से हुआ नीर जाज्वल्यमान,
आया मन में कूदूँ धारा में, करूँ स्नान ।'[3]

यह निर्विवाद सत्य है कि 'बच्चन की अभिधा का अभिमन्यु विकट से विकट चक्रव्यूह को भेदकर बाहर आ जाता है ।'[4] प्रसाद गुण सम्पन्न अभिधा-मूलक बच्चन के काव्य का प्रत्येक साधारण शब्द भी सार्थक अर्थवन्ता और भाव -श्री से अभिमण्डित है ।

लक्षणा :- बच्चन की परवर्ती रचनाओं में हमें लक्षणा के दर्शन मिलते हैं किन्तु कवि की चर्चित रचना 'मधुशाला' में यह शक्ति अनेक स्थलों पर प्रयुक्त हुई है । अपनी आन्तरिक अभिव्यक्ति में शब्दों में नई तड़प उत्पन्न करने के लिये कवि लक्षणा को माध्यम बनाता है, आनन्दातिरेक से कवि-कर्म स्थूल से सूक्ष्म की ओर उन्मुख हो

---

1. बच्चन : एकान्त-संगीत §खण्ड-1§ गीत-37 पृ0-231
2. बच्चन : एकान्त-संगीत §खण्ड-1§ गीत-07 पृ0-217
3. बच्चन : सूत की माला §खण्ड-1§ गीत-90 पृ0-542
4. सं. अजित कुमार एवं ओंकारनाथ श्रीवास्तव : बच्चन निकट से, पृ0-46

जाता है, सामान्य शब्दों को त्यागकर स्वत: ही बाधित शब्दों में सृजन होने लगता है, इसी को लक्षणाशक्ति कहते हैं । छायावादी और छायावादोत्तर काव्य में लक्षणा का चरम उत्कर्ष भरा पड़ा है । 'मुहावरे तो प्राय: लक्षणात्मक ही होते हैं, 'लोग कान ही कान हो रहे' जैसे लक्षणा के शुद्ध उदाहरण भी मिल जाते हैं ।[1] 'लेखनी का इशारा' में कवि ने कहा भी है- 'कलम से ही मार सकता हूँ तुझे मैं, कलम का मारा हुआ बचता नहीं ।'[2] लक्षणा को एक उदाहरण में देखिये - 'अपनी दो बाँहों के अन्दर मैं सरिता एक सँभाले हूँ, मेरे अधरों पर आ-आकर लहरें दिन-रात मचलती हैं ।'[3] 'प्याला' कविता में कवि ने प्याले का परिचय भी लक्ष्यार्थ में दिया है- 'मिट्टी का तन, मस्ती का मन, क्षण भर जीवन-मेरा परिचय ।[4]

बच्चन जी लक्षणा के प्रयोग के विषय में स्वयं सचेष्ट **हैं** । वे अपने पाठकों से स्वयं स्वीकार करते हैं- 'अपनी कविता में प्रतीकों का उपयोग करने में मैंने एक लक्षणा का भी ध्यान रखा है जिसे अजहत्स्वार्था' कहते हैं । इसमें लक्षण शब्द अपने वाच्यार्थ को न छोड़कर कुछ भिन्न या अतिरिक्त अर्थ भी प्रकट करता है । यह मेरी कविता का मुख्य मन्त्र है । 'मधुशाला से लेकर आज तक के अपने सारे काव्य में मैं इसे नहीं भूला ।'[5] कवि का कहना है कि 'प्याला' प्याले के अतिरिक्त भी कुछ है, 'मयूरी'[6] मयूरों के अतिरिक्त भी कुछ है और 'हंस'[7]

- -

1. हरस्वरूप पारीक : बच्चन का परवर्ती काव्य पृ0-67
2. बच्चन : दो चट्टाने §खण्ड-3§ पृ0-49
3. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ गीत-16 पृ0-53
4. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृ0-95
5. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ अपनेपाठकों से पृ0-315
6. बच्चन : वही पृ0-337
7. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ पृ0-120

के अतिरिक्त भी कुछ है । लक्षणा में प्रस्तुत उदाहरण में स्थूल धरातल से सूक्ष्म धरातल की ओर कवि उन्मुख है- 'कौन हंसिनियाँ लुभाये हैं तुझे ऐसा कि तुमको मानसर भूला हुआ है ?[1]

व्यंजना :- जो शक्ति अभिधा एवं लक्षणा से भी परे विशेष अर्थ का बोध कराती है वह व्यंजना कहलाती है । इन व्यंजक शब्दों के सहयोग से भाषा अधिक सरस अधिक प्रभावशाली एवं अधिक शोभामयी हो जाती है । बच्चन की परवर्ती रचनाओं- 'बुद्ध और नाचघर' 'त्रिभंगिमा' 'चार खेंमें चौंसठ खूँटे', 'दो चट्टानें', 'बहुत दिन बीते', 'कटती प्रतिमाओं की आवाज', और 'उभरते प्रतिमानों के रूप में व्यंजना का प्रचुर प्रयोग हुआ है । जब आज का जीवन भी मानव के लिए व्यंग्य हो गया है, काव्य उससे कैसे अछूता रहे ? चुटीले व्यंग्यों के उदाहरण इन कृतियों में से कहीं से भी उठाकर दिये जा सकते हैं । व्यंजना के द्वारा कवि ने सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक विसंगतियों पर व्यंग्य किये हैं । 'गणतन्त्र दिवस' कविता का व्यंग्य देखिये- 'आज चार हजार साढे तीन सौ से तीस ऊपर दिवस बीते रेंगते सन्देश पर गणतन्त्र दिन का बीस मील नहीं गया है ।'[2] 'खजूर'[3] कविता में भी कवि ने व्यंग्यार्थ से नेताओं की बखिया उधेड़ी है । मधुशाला में व्यंजना का तीखा रूप दृष्टिगोचर होता है । अवसरवादिता पर व्यंग्य का तीखा पुट देखिये-

"अवसरवादी नेताओं की,
संघर्षकाल में किये गए,

- -

1. बच्चन : प्रणय, पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-45 पृ0-120
2. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-451
3. बच्चन : वही पृ0-452

साधन के फल भोगने-सँजोने की बेला,
भूखी, नंगी जनता गरीब की अवहेला ।'[1]

'दोस्तों के सदर्भ', 'नई दिल्ली किसकी है' आदि कविताओं में यह व्यंग्य प्रखर रूप से हमारे समक्ष उभरता है ।

बच्चन की काव्य सरिता में अवगाहन करने पर यह तथ्य स्पष्ट होता है कि बच्चन की भाषा सभी अवयवों से परिपूर्ण फलीभूत है । अपने अनुरूप कवि ने शब्दों को भी तोड़-मोड़ लिया है यथा- बंगाले, पपिहरा, आकाशी, उछाह, नद्दी, जुंजान, हिन्दोस्तान, कृपणा, आकाशी दीप आदि । निष्कर्षतः बच्चन जी की भाषा सर्वत्र प्रसाद गुण सम्पन्न, अभिधामूलक है । माधुर्य गुण की झलक भी मिलती है । सहज-सरल, साहित्यिक, व्यंग्य-संपुष्ट उनकी भाषा में मंजाव और कसाव है । लोढ़ाजी का यह मत सही है- 'प्रत्येक सरल और साधारण शब्द भी अर्थ और भाव श्री से मंडित होकर एक बहुमूल्य रत्न की भाँति तरल विम्ब और ऐन्द्रिय बोध बन जाता है ।'[2] सियाराम जी मानते हैं- 'बच्चन ने अपनी भावनाओं और अनुभूति को रंगीन चादर में ढककर सुनहले बेल-बूटों की चमक से कभी अलंकृत कर प्रस्तुत नहीं किया ।'[3] छायावाद के बाह्याडम्बर, भाषा की क्लिष्टता, अभिव्यक्ति की दुरूहता, चित्रों की संश्लिष्टता और अशरीरीपन से बच्चन ने भाषा को मुक्त कर हिन्दी काव्य को यथार्थ की पीठिका पर सरल, बोलचाल तथा मुहावरेदार भाषा में सामान्य जनता के समक्ष प्रतिष्ठित किया ।

पारीक जी ने ठीक ही कहा है- 'उनकी भाषा बनावट से दूर है,

- -

1. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज {खण्ड-3} पृ0-247
2. सं. दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृ0-24
3. वही पृ0-32

उनका शब्द, विधान जो दीवार खड़ी करता है वह पक्की ईंटों की जमी दीवार है । उसमें लगाई गई शब्दों की ईंटें न हिलाई जा सकती हैं और न उन्हें हटाया ही जा सकता है ।'[1] बच्चन जी सही अर्थों में एक कुशल शब्द-शिल्पी हैं जो बिना झिझक और संकोच के दरिया दिली से सभी भाषाओं के शब्दों को तराशने में सिद्धहस्त हैं । हिन्दी काव्य-साहित्य में उन्होंने युगान्तर उपस्थित किया है । वे एक युग हैं, एक प्रकाश-पुंज-स्तम्भ हैं ।

प्रतीक :- 'प्रतीक' शब्द हिन्दी काव्य में अंग्रेजी के 'सिंबल' शब्द से आया है । प्रतीक के सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल के अनुसार- 'प्रतीक का आधार सादृश्य या साधर्म्य नहीं, बल्कि भावना जागृत करने की निहित शक्ति है ।'[2] यद्यपि प्रतीक के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किये हैं अतः दो चार विद्वानों का उल्लेख करने के पश्चात हम आलोच्य कवि बच्चन के प्रतीक सम्बन्धी विचारों को प्रस्तुत करेंगे ।

जीवन में ऐसे अनेक अनकहे पल और क्षण आते हैं जब व्यक्ति या कवि या लेखक अपने भावों को सामान्य भाषा या बिम्ब-विधान द्वारा व्यक्त करने में असन्तोष की अनुभूति करता है इसलिये वह इन अर्द्धस्पष्ट और मूक क्षणों और भावों को बोधगम्य बनाने के लिये प्रतीक-विधान की ओर अग्रसर होता है । प्रतीक का अर्थ उस शब्द-विशेष से है जो किसी भाव अथवा विशेषता का द्योतन कराने के लिये जन-समाज में परम्परा तथा रूढ़ि के कारण प्रचलित हो गया हो । डॉ. भगीरथ मिश्र ने प्रतीक की परिभाषा निम्न शब्दों में की है- 'अपने रूप, गुण, कार्य या विशेषताओं के सादृश्य एवं प्रत्यक्षता के कारण जब कोई वस्तु या

---

1. हरस्वरूप पारीक : बच्चन का परवर्ती काव्य पृ0-78
2. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- चिन्तामणि, द्वितीय भाग पृ0-126

कार्य किसी अप्रस्तुत वस्तु, भाव, विचार, क्रियाकलाप, देश, जाति, संस्कृति आदि का प्रतिनिधित्व करता हुआ प्रकट किया जाता है, तब वह प्रतीक कहलाता है ।'[1] परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार- 'प्रतीक एक जीता-जागता एवं पूर्णतः क्रियाशील प्रतिनिधि है जिस कारण इसे प्रयोग में लाने वाले को इसके व्याज से उसके उपयुक्त सभी प्रकार के भावों को सरलतापूर्वक व्यक्त करने का पूरा अवसर मिल जाया करता है ।'[2] यद्यपि प्रतीकवादी आन्दोलन में कुछ अंशों तक अतिवादिता का आभास होने लगता है तथापि यह निःसन्देह सत्य है कि प्रतीकों में एक प्रकार की विचित्र अर्थ-सम्पदा अन्तर्निहित रहती है । काव्य में लेखनी बद्ध होते ही यह अपनी सभी अर्थछवियों में प्रकट हो जाता है । प्रतीक और विम्ब में मूल रूप से भिन्नता है । भाव और अभिव्यंजना की दृष्टि से प्रतीक का महत्त्व उल्लेखनीय है क्योंकि यह अनिर्वचनीय भावों, विचारों और संवेदनाओं को मूर्त और स्थायी रूप प्रदान करता है साथ ही अर्थ के अनन्त विस्तार को शब्द की लघु सीमा में बाँध देता है ।

प्रतीक के सम्बन्ध में डॉ॰ बच्चन के विचार द्रष्टव्य हैं- 'जब कवि की तीव्रतम भावनाएं अभिव्यक्त होने के लिये व्यग्र होती हैं तब एक अर्थी अथवा दो अर्थी शब्द भी उसका साथ नहीं देते और वह प्रतीकों का सहारा लेता है । ------तीव्रतम भावनाओं की वेदना से अपने को मुक्त करने के लिए कवि का मस्तिष्क उनकी अनुभूति किन्हीं प्रतीकों में करने लगता है । ----प्रतीक अहं की कारा से निकलने के द्वार हैं । ऐसी स्थिति की अभिव्यक्ति में प्रतीकों की भाषा

- -

1. भगीरथ मिश्र - काव्यशास्त्र पृ0-255
2. अवन्तिका : काव्यालोचनांक, जनवरी 1954, वर्ष-2, अंक 1 में 'कबीर साहब की प्रतीक-योजना' शीर्षक लेख §परशुराम चतुर्वेदी§ पृ0-8।

स्वाभाविक होती है । प्रतीकों से कवि का कितना तादात्म्य है, यह भावों की तीव्रता पर निर्भर होगा ।'[1] प्रतीकों को आग्रहपूर्वक लाने के पक्ष में बच्चन नहीं हैं- 'हमें यह जान लेना चाहिये कि भावना, या विचार भी, जब सम्यक प्रतीकों में ढलकर निकलते हैं तो उनकी प्रेषणीयता भी अधिक सटीक और गहन होती है ।'[2] अज्ञेय जी भी प्रतीक को नहीं प्रतीक से मिलने वाली गुणात्मक अनुभूति को महत्त्व देते हैं- 'महत्त्व या मूल्य प्रतीक का या प्रतीक में नहीं होता, वह उससे मिलने वाली अनुभूति की गुणात्मकता में होता है ।'[3] अतः हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि किसी अनिर्वचनीय गूढ़ सूक्ष्म भाव या गहन विचार व किसी अमूर्त, अदृश्य भाव-विचार का अभिराम अर्थ प्रदान कराने वाला मूर्त संकेत प्रतीक है । 'जालसमेटा' काव्यकृति में भी कवि बच्चन ने एक स्थान पर लिखा है- 'जीवन के सबसे गहरे सत्य प्रतीकों में बोला करते ।'[4]

बच्चन जी की अधिकांश कविताओं में अनेक प्रतीक प्रयुक्त हुए हैं । ये प्रतीक सायास नहीं लाए गए वरन् स्वतः मुखरित हुए हैं । कवि के द्वारा प्रयुक्त प्रतीकों में भावों की सांकेतिकता और सूक्ष्म प्रेषणीयता की क्षमता विद्यमान है । 'मधुशाला' पूर्ण प्रतीकात्मक कृति है । एक चर्चित रूबाई प्रस्तुत है- स्वयं कवि ने इस रूबाई के प्रतीक स्पष्ट किये हैं ।[5]

'मुसल्मान औ' हिन्दू हैं दो, एक, मगर, उनका प्याला,
एक, मगर, उनका मदिरालय, एक मगर उनकी हाला,

- -

1. बच्चन : कवियों में सौम्य सन्त §खण्ड-6§ पृ0-101
2. बच्चन : वही पृ0-102
3. अज्ञेय : आत्मनेपद पृ0-256
4. बच्चन : जाल समेटा §खण्ड-3§ पृ0-395
5. बच्चन : साक्षात्कार §खण्ड-9§ पृ0-40

दोनों रहते एक न जब तक मस्जिद-मन्दिर में जाते,
बैर-बढ़ाते मस्जिद-मन्दिर, मेल कराती मधुशाला ।'[1]

इसके अतिरिक्त- 'सौ सुधारकों का करती है काम अकेली मधु-शाला ।'[2] प्रस्तुत रूबाई में मधुशाला समाजसुधारक के रूप में प्रयुक्त हुई है । 'प्याला' कविता में कवि ने प्रतीकों के माध्यम से क्षण भगुर नाशवान जीवन का संकेत दिया है- 'मिट्टी का तन, मस्ती का मन क्षण भर जीवन- मेरा परिचय ।'[3] बच्चन की कविता में चिड़िया को अर्थवान प्रतीक के रूप में प्रयुक्त किया गया है-
'अन्तरिक्ष में आकुल-आतुर कभी इधर उड़ कभी उधर उड़,
पन्थ नीड़ का खोज रहा है पिछड़ा पंछी एक अकेला ।'[4] प्रस्तुत पंक्ति में पिछड़ा पंछी व्याकुलता और अकेलेपन में भी अपने नीड़ को ढूँढ रहा है । अंतरिक्ष में वह अकेला है । उसका कभी इधर और कभी उधर उड़ना अतिशय व्याकुलता का प्रतीक है । उसके पंख इस अन्वेषण में भी थकते नहीं है, वह निरन्तर अबाधगति से उड़ता जा रहा है । यह भी आवश्यक नहीं कि उसका नीड मिल ही जाए किन्तु उसका निरन्तर नीड़ खोजने में निरत रहना अधिक महत्वपूर्ण है । जीवन के दुख-दर्द को कवि ने 'पीत-पात' के प्रतीक द्वारा व्यक्त किया है -

है यह पतझड़ की शाम, सखे !
नीलम से पल्लव टूट गए,
मरकत से साथी दूर गए,
अटके फिर भी दो पीत पात जीवन-डाली को थाम सखे ।[5]

---

1. बच्चन : मधुशाला (खण्ड-1) रू. 50 पृ0-52
2. बच्चन : वही रू. 57 पृ0-53
3. बच्चन : मधुबाला (खण्ड-1) पृ0-95
4. बच्चन : निशा-निमन्त्रण (खण्ड-1) गीत-5 पृ0-163
5. बच्चन : वही गीत-12 पृ0-165

'बूँद' के प्रतीक द्वारा कवि ने कूपमंडूकता से बाहर निकले मानव को सम्बोधित किया है - 'तू कुएं से उछली, तो तूने बहुत अच्छा किया । तू कूप से ही नहीं निकली, कूपमण्डूकत्व से भी निकली, बाहर हुई ।'[1] 'यात्रान्त' में कवि ने रथ को शरीर का और अश्व को मनुष्य-मन का प्रतीक बनाया है- 'अश्व चकनाचूर थककर और रथ की चूल-चूल हिली हुई ढीली पड़ी है---- थके घोड़ों को जरा सा थपथपादो और अपने हाथ का देकर सहारा मुझे नीचे को उतारो-[2]

प्रतीकात्मकता की दृष्टि से बच्चन जी की कविता 'पहाड़-हिरन, घोड़ा, हाथी'[3] की अभिव्यक्ति सर्वाधिक उत्कृष्ट बन पड़ी है । प्रस्तुत कविता में 'हिरन बाल्यकाल का, घोड़ा युवावस्था का और हाथी वृद्धावस्था का प्रतीक है । 'खोटा सिक्का' कविता में कवि ने चालाक और बेकार आदमी का व्यंग्यात्मक किन्तु कटु सत्य पर आधारित प्रतीक प्रस्तुत किया है- 'खोटा सिक्का टकसाली सिक्के से आगे-पहले चलता ।' और इसके विपरीत 'टकसाली सिक्का- 'उससे कुछ न खरीदा जाये, लेकिन उसको नहीं खरीदा जा सकता है ।'[4]

इसी प्रकार 'चार चने'[5] कविता में भी कवि ने नियतिवादी, अस्तित्ववादी समष्टिवादी और अवसरवादी लोगों को प्रतीक के माध्यम से प्रस्तुत किया है । 'भारत के साँप' कविता में शोषक और धूर्त लोगों को प्रतीकात्मक

---

1. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृ0-264
2. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-221
3. बच्चन : वही पृ0-201-203
4. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-161-162
5. बच्चन : वही पृ0-158-159

माध्यम से स्पष्ट किया है । 'निशा-निमन्त्रण' के एक गीत में मृत्यु का परिवेश चित्र प्रतीकों के द्वारा मुखरित है-

> यह पावस की साँझ रंगीली
> घिरे घनों से पूर्व गगन में,
> आशाओं सी मुर्दा मन में
> जाग उठीं सहसा रेखाएं- लाल, बैगनी, पीली, नीली ।[1]

रात-रात भर श्वानों का भूँकना[2] और बिल्ली का 'आउ-आउ कर रोना[3] मानो आगत मृत्यु की आशंका के प्रतीक हैं । कुत्तों का भोंकना मन के दबे हुए अतृप्त अरमानों और इच्छाओं के प्रतीक हैं । 'गुलहजारा' श्यामा §कवि-पत्नी§ का प्रतीक है । बच्चन जी के अपने काव्य-पथ में अनेक प्रतीक-पथिक भी साथ-साथ चले हैं । यदि हम विचार करें तो कवि ने अनेक प्रकार की प्रतीक-योजना की है, समृद्धि और सम्पन्नता के साथ-साथ बोधगम्य बनाने के लिये विभिन्न समालोचकों ने उनकी प्रतीक-योजना को वर्गों में विभाजित कर दिया है । जिसके अन्तर्गत-प्राकृतिक प्रतीक, सांस्कृतिक प्रतीक, जीवन व्यापार के प्रतीक, पौराणिक प्रतीक, आध्यात्मिक प्रतीक, ऐतिहासिक प्रतीक और अन्यान्य प्रतीक सन्निहित हैं । जिसके कुछ उद्धरण प्रस्तुत हैं ।

<u>प्राकृतिक प्रतीक</u> - मयूरी-परिणीता, नागिन-प्रमदा, जुगनू- आशा की किरण, इन्द्रधनुष-हर्षोल्लास ।[4]

---

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-13 पृ0-166
2. बच्चन : वही गीत-44 पृ0-178
3. बच्चन : वही गीत-45 पृ0-178
4. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§

सांस्कृतिक प्रतीक- लक्ष्मण रेख-बन्धन, कुबेर-धनपति[1]

जीवन-व्यापार के प्रतीक- मधुशाला-प्रेमरस, हाला-मस्ती, भोग, मधुबाला, साकी-भोग, विलास की प्रेरणाएं ।[2] हलाहल-जीवन का कटु तिक्त यथार्थ-मृत्यु[3], फूल-झाड़ियाँ-क्षणभंगुर खुशी[4]

पौराणिक प्रतीक- सिसिफस-निरर्थक यांत्रिक श्रम, हनुमान-सार्थक लोकोपकारी श्रम[5] रावण-कंस-असत्[6]

आध्यात्मिक प्रतीक- लहर-आत्मा, सागर-परमात्मा[7] ।

ऐतिहासिक प्रतीक- हलाहल की कविताओं में कवि ने अकबर, नूरजहाँ, मुमताज और औरंगेब आदि को विनष्ट वैभव-विलास के प्रतीकात्मक रूप में उतारा है ।

इसके अतिरिक्त कवि ने शास्त्रीय प्रतीकों बीन, वीणा, गीत, सितार आदि का प्रयोग भी किया है । कवि ने अन्य भिन्न प्रतीकों में राजनीतिज्ञों की खजूर धर्मिता राजनीति पर व्यंग्य किया है । 'दिल्ली की मुसीबत' में कवि ने समाधि के विशिष्ट प्रतीक द्वारा नेताओं की समाधियों पर व्यंग्य किया है । कवि की संवेदनशील प्रतीक प्रेषणीयता के विषय में भाटी जी का निम्न वक्तव्य दृष्टव्य है- 'ये प्रतीक बच्चन की अभिव्यक्ति में नदी का वेग भर देते हैं । इन्हीं प्रतीकों से बच्चन का काव्य शैशव से यौवन और यौवन से प्रौढ़ता तक आ

---

1. बच्चन : दो चट्टाने §खण्ड-2§
2. बच्चन : मधुशाला, मधुबाला §खण्ड-1§
3. बच्चन : हलाहल §खण्ड-1§
4. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ गीत-26 पृ0-61
5. बच्चन : दो चट्टाने §खण्ड-3§
6. बच्चन : जाल समेटा §खण्ड-3§ पृ0-385

पहुँचा है । वे हर अवस्था में अभिव्यक्ति का सौन्दर्य बढ़ाते रहे हैं ।'[1] अतः बच्चन जी सशक्त, समर्थ और वैविध्य पूर्ण, प्रतीक-योजना के प्रखर कवि हैं । उनके समान प्रतीक-योजना अन्यत्र दुर्लभ है ।

विम्ब-विधान :- जिस प्रकार प्रतीक एवं अलंकारों का महत्व निर्विवाद आवश्यक है ठीक उसी प्रकार काव्य में विम्ब-विधान का भी अपना अलग महत्व और अस्तित्व है । विम्ब-योजना के द्वारा कवि भाव-विचारों और वस्तुओं के कल्पित रूप को इन्द्रियग्राह्य बनाने का प्रयत्न करता है । विम्ब काव्यगत भावों की संवेदनशीलता को प्रखर बनाने के साथ-साथ उसके मूर्त रूप को प्रत्यक्ष-संवेद्य और चित्रात्मकता के कारण सुग्राह्य बना देता है । आधुनिक कवि विम्ब का सम्बन्ध काव्य रूप एवं कथावस्तु दोनों से मानते हैं । इसी सम्बन्ध में केदारनाथ सिंह ने लिखा भी है कि- 'विम्ब-विधान का सम्बन्ध जितना काव्य की विषयवस्तु से होता है उतना ही उसके रूप से भी । विषय के वह मूर्त और ग्राह्य बनाता है, रूप को संक्षिप्त और दीप्त ।'[2]

विम्ब-योजना की चित्रात्मक प्रणाली का प्रयोग रीतिकालीन काव्य में अधिकांशतः मिलता है किन्तु आधुनिक काल में भी प्रायः कवि की कविताओं या कृतियों में जाने-अन्जाने यह प्रणाली धीरज में चली ही आती है । अन्तर इतना है कि किसी के काव्यमें कम और किसी में ज्यादा देखने को मिलती है । आधुनिक कवियों में विम्ब-विधान के पीछे कुछ नया करने की उमंग या चाहत रहती है अतः वह नवीनता के आग्रह में दुरूहता को त्याग रहा है । इसी सन्दर्भ में रामविलास शर्मा के कथन को हम प्रस्तुत कर सकते हैं- 'मूर्ति-विधान वही है जो

---

1. डॉ॰ जयप्रकाश भाटी : बच्चन का कथ्य और शिल्प, पृ0-213
2. केदारनाथ सिंह- वक्तव्य, तीसरा सप्तक पृ0-114

भावों से अनुप्राणित हो, जिसमें सहज इन्द्रिय-बोध का निखार हो । दूर की कौड़ी लाना काव्य रचना नहीं, बौनों का बौद्धिक-व्यायाम है ।'[1] अतः इसी प्रकार सहज बोधगम्य ऐन्द्रिय विम्ब बच्चन जी के काव्य में सर्वत्र बिखरे पड़े है । स्पर्श, दृश्य, घ्राण और श्रवणादि ऐन्द्रिय-अनुभूतियों को तरलता और सरलता प्रदान करने वाले विम्ब इनके काव्य में हमें देखने को मिलते हैं । दृश्य-विम्ब का एक मनोहारी चित्र देखिये-

'कितने घर, कितनी झोपड़ियों में
माटी के दिवले जलते,
जिनके उजियारे में धनियाँ
धान पकाती,
होरी अपनी गोरी का घूँघट सरकाता,
होरिल अपनी माँ का आँचल ।'[2]

'निशा-निमन्त्रण में कवि ने विम्ब-विधान किया है यत्र-तत्र यह विम्बात्मकता अत्यन्त तरल और रम्य बन पड़ी है एक चित्र द्रष्टव्य है-

'सन्ध्या सिन्दूर लुटाती है !
रंगती स्वर्णिम रज से सुन्दर
निज नीड़-अधीर खगों के पर,
तरुओं की डाली-डाली में कंचन के पात लगाती है !
× × ×
करती सरिता का जल पीला,
जो था पल भर पहले नीला,
नावों के पालों को सोने की चादर सा चमकाती है ।

---

1. राम विलास शर्मा : पुनश्च, तारसप्तक पृ0-126
2. बच्चन:बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-163

सन्ध्या सिन्दूर लुटाती है ।'[1]

प्रस्तुत कविता में दृश्य-विम्ब अपने पूर्ण वैभव पर है -

ताल के तट पर झुके हम
स्वच्छ जल में
स्वच्छ विम्बित हो रहे थे ।
पाँव से मैंने दिया हिलकोर पानी;
हिली छायाएं,
मिली कहने लगीं कुछ
जिसे कर पाती नहीं है व्यक्त वाणी ।[2]

दृश्य विम्ब की भाँति श्रवण-विम्ब के चित्र भी कवि के काव्य में विद्यमान हैं । एक उदाहरण श्रवण-विम्ब का देखिये- कोयल:

"तुझे
एक आवाज मिली क्या
तूने सारा आसमान ही
अपने सिर पर उठा लिया है-
कुऊ...... कुऊ ...... कू !
कुऊ ...... कुऊ ...... कू ![3]

एक अन्य उदाहरण में देखें-

'पिछला पहर रात का होगा-
खट्ट - खट्ट ....
खट - चर्र - चर्र ....

---

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-4 पृ0-162
2. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-192
3. बच्चन : वही पृ0-170

सुनकर मैं जागा,
मेरा मस्त, जवान पहाड़ी नौकर
लकड़ी चीर रहा था ।'[1]

अक्षरों के माध्यम से श्रवण-विम्ब खड़े करना सिर्फ बच्चन जी ही कर सकते हैं-

पर उठते ही मैं गिरा
अक्षर-भरी गगरी में
और स.....प..श. हा करके
पड़ गया ठण्डा ।[2]

'मिलन-यामिनी' में अनेक स्थलों पर कवि ने स्पर्श-बिम्बों के रस-भीगे चित्र उपस्थित किये हैं । 'मिलन-यामिनी' के उत्तर गीतों में स्पर्श विम्बों-से समग्र प्रकृति नहा उठी है सराबोर हो गयी है ।

घ्राण-दृश्य और स्पर्श का एक मिश्रित विम्ब अत्यन्त उत्तम बन पड़ा है-

'गंधक वाली नीली-पीली आग उगलता,
लाल खून सा पिघला लावा,
काला धूंआँ ।'[3]

बच्चन जी ने अनेक अमूर्त भावों का मूर्तीकरण किया है । मानस विंबों के चित्र भी बहुत सुन्दर बन पड़े हैं । 'जाल समेटा' की 'एक पावन मूर्ति'[4] कविता जो कवि ने केवल वयस्कों के लिए लिखी है, विम्ब विधान की उत्कृष्ट छवि को अंकित करती है । प्रस्तुत कविता में कवि ने प्राकृतिक नग्नता में ढ़ली हुई मूर्तियों की कलात्मक अभिव्यक्ति की हृदय से भूरि-भूरि प्रशंसा की है । बच्चन जी ने उक्त

---

1. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज (खण्ड-3) पृ0-284
2. बच्चन : वही पृ0-278
3. बच्चन : बहुत दिन बीते (खण्ड-3) पृ0-154
4. बच्चन : जाल समेटा (खण्ड-3) पृ0-393-395

कलाकृति को विम्ब विधान के माध्यम से पूर्ण सशक्तता प्रदान की है । कवि ने अपनी सम्पूर्ण काव्य-यात्रा में सभी प्रकार के विम्बों का यथाशक्ति यथावसर प्रयोग किया है । इस प्रकार विम्ब-विधान की दृष्टि से बच्चन जी का काव्य सर्वतः समग्रतः सफल और सशक्त है । उनका विम्ब-विधान चलचित्र की भाँति मानस पटल पर विंब उपस्थित करता हुआ प्रभावान्विति तक ले जाता है ।

छन्द :- आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार छन्द की सृष्टि अर्थमयी भाषा और संगीत के मिलन से होती है । अर्थहीन छंद-प्रवाह संगीत है । पर जब उनमें सार्थकता आ जाती है, तब वह छन्द हो जाता है ।[1] प्राचीन हिन्दी-काव्य पूर्ण रूपेण छन्दबद्ध था, इसका मुख्य कारण है कि छन्द-बद्ध रचना छन्दहीन रचना की अपेक्षा अधिक सरलता से याद रखी जा सकती है । छन्दों के माध्यम से काव्य की व्यंजना-शक्ति द्विगुणित व अधिक सशक्त हो जाती है । कभी-कभी छन्दों के परम्परागत या रूढ़ ढाँचे काव्य के यथार्थ तथा सहज अभिव्यक्ति में बाधा डालते हैं तब कवि परम्परागत रूढ़ छन्दों का त्याग कर नए छन्दों का निर्माण करता है अथवा उन्हीं को नवीन साज-सज्जा और रूप-सौन्दर्य के साथ अवतरित करता है। छन्दों में मनुष्य हृदय को मुग्ध करने का अद्भुत नाद, लय और विलक्षणता रहती है। बच्चन जी ने भी काव्य-क्षेत्र में छन्दों को महत्त्व दिया है ।[2] छन्द के सम्बन्ध में स्वयं बच्चन जी के विचार इस प्रकार हैं- 'कविता में भाव, भाषा और छन्द का अटूट सम्बन्ध है । कोई छन्द लिया जाए तो उससे सम्बद्ध भाव और उसमें ढली भाषा सहज ही समझ में आ जाती है । किसी विशेष प्रकार के भाव, किन्हीं विशेष प्रकार

---

1. मुकुन्द द्विवेदी {सम्पादक} हजारी प्रसाद द्विवेदी, ग्रन्थावली, खण्ड-6, पृ0-130
2. बच्चन : आरती और अंगारे {खण्ड-2} भूमिका पृ0-187

की भाषा छन्दों की अवतारणा करते हैं ।[1]

'जीवन के कवि होने के नाते विभिन्न जीवन-परिस्थितियों में स्वतः अधिक संख्या में छन्द प्रयोग हो गया है । उनकी मानसिक स्थिति ही छन्द-विभिन्नता का कारण रही है ।[2] इसी विभिन्नता को देखकर ही चन्द्र देव जी मानते हैं- 'जहाँ तक छन्दों का प्रश्न है आधुनिक हिन्दी कविता के किसी भी रचनाकार ने इतनी अधिक संख्या में छन्दों का प्रयोग नहीं किया है जितना बच्चन ने ।'[3] कवि का मानना है कि- 'छन्द वास्तव में सब प्रकार की शब्दाभिव्यक्ति के चरण हैं । लय उनकी गति है । तुक को उनका विश्राम कह सकते हैं ।[4]

छन्दों के स्वरूप निर्धारण के पश्चात हम बच्चन जी के काव्य में प्रयुक्त अनेकानेक तुकान्त और अतुकान्त छन्दों के विषय में चर्चा करेंगे ।

<u>मुक्त छन्द</u> :- बच्चन जी अपनी 14-15 वर्ष की अवस्था में मुक्त छन्द में ही रचना करते थे । शनैः-शनैः बढ़ती हुई उम्र और समय के साथ कवि में परिपक्वता और विदग्धता के दर्शन मिलते हैं । जब कवि ने तुकान्त छन्दों में ही अपनी अधिकाँश रचनाएं लिखीं । 'बंगाल का काल' लिखते समय सभी छन्दों की कड़ियाँ तड़ककर टूट गयीं ।[5] और कवि ने मुक्त छन्द में ही 'बंगाल का काल' का सृजन किया । इसके पश्चात 'बुद्ध और नाचघर', 'त्रिभंगिमा', 'चार खेमें चौंसठ खूँटे',

- -

1. बालस्वरूप राही : मेरा रूप, तुम्हारा दर्पण , भूमिका पृ0-4
2. डॉ सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-285
3. चन्द्रदेव सिंह : बच्चन एक पहेली पृ0-130
4. बच्चन : बुद्ध और नाचघर {खण्ड-2} पृ0-267
5. बच्चन : वही पृ0-268

'दो चट्टानें', 'बहुत दिन बीते', 'कटती प्रतिमाओं की आवाज', 'उभरते प्रतिमानों के रूप' 'जाल समेटा', 'आदि काव्य कृतियों को कवि ने मुक्त छन्द में बाँधा है । कवि का मानना है कि- 'अतुकान्त छन्द प्रयोजनार्थ कही जाने के समान है । जब तक ध्येय न प्राप्त कर लिया जाए तब तक रुकने की कोई जगह नहीं, बराबर चले जाओ ।[1] मुक्त छन्द की सहज संप्रेषणीयता के विषय में निराला जी ने लिखा है-

मुक्त छन्द,
सहज प्रकाशन वह मन का-
निज भावों का प्रकट अकृत्रिम चित्र ।[2]

मुक्त छन्द की मूल प्रवृत्ति को इंगित करते हुए पंत ने लिखा है- "यह 'स्वच्छन्द छन्द' ध्वनि अथवालय पर चलता है । जिस प्रकार जलौघ पहाड़ से निर्झर नाद में उतरता, चढ़ाव में मंदगति, उतार मेंक्षि प्रवेग धारण करता, आवश्यकतानुसार अपने किनारों को काटता-छाँटता, अपने लिए ऋजु-कुंचित पथ बनाता हुआ आगे बढ़ता है, उसी प्रकार यह छन्द भी कल्पना तथा भावना के उत्थान-पतन, आवर्तन-विवर्तन के अनुरूप संकुचित प्रसारित होता, सरल-तरल, ह्रस्व-दीर्घ गति बदलता रहता है ।"[3]

सत्यता तो यह है कि मुक्त छन्द को किसी नियम या परिभाषा के अन्तर्गत नहीं बाँधा जा सकता । इसका कारण भावों तथा विचारों की जटिलता अथवा कोमलता के चलते इसके स्वरूप में भी परिवर्तन होता रहता है । परम्परागत रूढ़ बन्धन में न बँधकर भी लयात्मकता एवं संगीतात्मकता का महत्त्व निश्चित है ।

- -

1. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृ0-267
2. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' - जागरण परिमल पृ0-8
3. सुमित्रानन्दन पन्त 'प्रवेश', 'पल्लव' पृ0-32

असमान व लम्बी पंक्तियों के साथ-साथ मुक्त छन्द गद्यात्मकता से दूर का भी रिश्ता नहीं रखना चाहता । बच्चन जी का मानना है कि मुक्त छन्द के द्वारा ही जीवन की कुछ-कुछ क्यों, बहुत सी ऐसी समस्याएं हैं जो केवल उसके द्वारा ही मुखरित की जा सकती हैं तो उसके विकास और विविधता की सम्भावनाए असीमित हैं । और मुक्त छन्द के द्वारा काव्य और काव्य की भाषा का विपर्यय भी घटाया जा सकता है ।[1] मुक्त छन्द में भी एक लय होती है । वर्णों की अनु-रूपता से एक मिठास आ जाती है-

'जहाँ ख़ुदा की नहीं गली दाल,
वहाँ बुद्ध की क्या चलती चाल,
वे थे मूर्ति के खिलाफ,
इसने उन्हीं की बनाई मूर्ति ।'[2]

डॉ॰ सुरेशचन्द्र का कहना है- 'उन्होंने छन्द के क्षेत्र में नवीनताओं का स्वागत किया है ।[3] रेणु जी ने बच्चन जी के मुक्त छन्द की रचनाओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की है ।[4] और इन्दु जी ने भी सच कहा है कि 'बच्चन के मुक्त छन्द के काव्य 'रिद्म' से पढ़े जा सकते हैं ।[5]

इन सबके अतिरिक्त कवि ने लोकगीतों पर उनकी धूनों तथा उनसे सम्बन्धित छन्दों का प्रयोग कर हिन्दी साहित्य में एक नया आयाम स्थापित किया है जो निश्चय ही गौरव का प्रतीक है । बच्चन के लोकगीत कानों में एक

---

1. बच्चन : बुद्ध और नाचघर (खण्ड-2) पृ0-273
2. बच्चन : वही पृ0-352
3. डॉ॰ सुरेशचन्द्र गुप्त : आधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त पृ0-487
4. रेणु मलहोत्रा : बच्चन का परवर्ती काव्य पृ0-127
5. डॉ॰ इन्दुबाला दीवान : बच्चन : अनुभूति और अभिव्यक्ति पृ0-73

मधुर व अमिट गूँज छोड़ जाते हैं । निष्कर्षतः प्रतिभा किसी का मुँह कभी नहीं देखती, अतः जीवन के भावपूर्ण कवि गायक होने के कारण कवि ने भावानुरूप छन्दों का चयन व निर्माण भी किया है । छन्दों की मात्रा, नवगति, नवलय, तालहरों के उतार चढ़ाव में बच्चन सिद्धहस्त हैं । भाव और लय से पूर्ण उनका मुक्त छन्द-विधान सस्वर पढ़ने से कर्णप्रिय श्रुतिमधुर लगता है ।

<u>रोला छन्द</u> :- प्रस्तुत छन्द में 24 मात्राएं होती हैं । ग्यारह तेरह मात्राओं पर यति होती है । और अन्त में दो गुरु या दो लघु पड़ते हैं । जैसे-

'कवि वह है जिसके मन को चोट पहुँचती है
जब होती जग में सुन्दरता की अवहेला,
अनजाने भी अपमान किसी का हो जाता,
अनजाने भी अपराध कभी हो जाते हैं,[1]

यह छन्द 'आरती और अंगारे', 'मिलन यामिनी' और प्रायः 'त्रिभंगिमा' में प्रयुक्त हुआ है ।

<u>सरसी छन्द</u> :- 27 मात्राओं वाले इस छन्द में 16-11 पर यति और अन्त में गुरु लघु पड़ने चाहिये, यथा-

'ढलता चाँद, चाँदनी झड़ती, देख उदास चकोर ।
छोड़ कमल की सेज न भँवरा, दूर न अब तो भोर ।[2]

और 'सुन्दरता जोगी के दर पर, ले यौवन उपहार,
किन्तु पुकार रहा है उसको रंगमहल से प्यार ।'[3]

---

1. बच्चन : मिलनयामिनी (खण्ड-2) पृ0-40
2. बच्चन : त्रिभंगिमा (खण्ड-2) पृ0-408
3. बच्चन : वही पृ0-409

माधव मालती छन्द :- 28 मात्राओं वाला यह एक नया छन्द है । सात मात्राओं वाले सप्तक § § की चार आकृतियों से यह पूर्णता प्राप्त करता है । इसकी तीसरी, दसवीं, सत्रहवीं और चौबीसवीं मात्रा लघु होती है और अन्त में दो गुरु होते हैं । यथा-

'प्राण प्राणों से सकें मिल किस तरह, दीवार है तन,
काल है घड़ियाँ न गिनता, बेड़ियों का शब्द झन-झन,
वेद-लोकाचार प्रहरी ताकते हर चाल मेरी,
बद्ध इस वातावरण में क्या करे अभिलाष यौवन !'[1]

आधुनिक काल में गीतों में इस छन्द का बहुतायत से प्रयोग मिलता है । इस छन्द की लोकप्रियता के सम्बन्ध में डॉ॰ पुत्तूलाल जी लिखते हैं- 'इसकी लय में उत्सव के बाद का अवसाद होता है, जो मधुर स्मृतियों से भरा प्रतीत होता है । इसी लिये यह छन्द वियोग श्रृंगार में संयोग से भी अधिक सफल होता है ।[2] 19 मात्राओं वाले माधवी मालती छन्द का 'खादी के फूल' में और लय के आधार पर 17 मात्राओं वाले माधवी मालती छन्द का 'सतरंगिनी' के कुछ गीतों में प्रयोग हुआ है ।

चामरी छन्द :- बच्चन जी ने 18 मात्राओं वाले चामरी छन्द का प्रयोग भी नैसर्गिक रूप में किया है । इस छन्द की पहली, चौथी, सातवीं, दसवीं, तेरहवीं और सोलहवी मात्रा लघु होती है ।[3] उदाहरणार्थ-

"शिशिर-समीर बन गया मलय पवन,
नवीन गीत-प्राण से गूँजा गगन,

- -

1. बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृ0-128
2. डॉ॰ पुत्तूलाल शुक्ल : आधुनिक हिन्दी कविता में छन्द योजना पृ0-200
3. वही पृ0-270

नवीन रक्त-राग से रँगी अवनि,
प्रकृति खड़ी सुरस पगी, सअंकुरित ।[1]

हरिगीतिका छन्द :- यह 28 मात्राओं का यौगिक जाति का छन्द है । इसमें 16-12 मात्राओं पर यति होती है । अपनी उपयोगिता और प्रयोगिता की दृष्टि से यह छन्द बहुत लोकप्रिय हुआ है । एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

'किस प्रभात का चपल पवन था, उसको छूकर आया,
जो उनकी सुकुमार सुरभि ने तुमको विकल बनाया ।'[2]

उपर्युक्त छन्दों के अतिरिक्त बच्चन जी ने 'निशा-निमन्त्रण' में एक नवीन समृद्ध और प्रभावशाली छन्द का प्रयोग किया है । इसमें प्रथम दो पंक्तियाँ छोटी और बाद में एक बड़ी पंक्ति रहती है-

'चाहता उछलूँ विजय कह,
पर ठिठकता देखकर यह-
रात का राजा खड़ा है राह में बनकर भिखारी ।[3]

'एकान्त-संगीत' का छन्द विधान भी इसी प्रकार है अन्तर दोनों में मात्र इतना है कि कवि ने दोनों मात्राओं के लघु-गुरु अपने अनुसार ढाल दिये हैं । आकार-प्रकार में दोनों काव्य-कृतियों के छन्दों में समानता दृष्टिगत होती है किन्तु मूल अन्तर मात्राओं का है ।

इसके अतिरिक्त बच्चन जी ने 'मधुशाला में 16 मात्रा के रुबाई के चार चरण वाले छन्द का प्रयोग किया है । 'मधुबाला' में भी 16+16=32 मात्राओं

---

1. बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-70
2. बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ गीत-3 पृ0-192
3. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-77 पृ0-191

का छन्द प्रयुक्त है । 'मधुकलश' में उर्दू के 'रमल'[1] पर आधारित छन्द का भी प्रयोग हुआ है जिसे 'माधव मालती' कहते हैं । 'प्रणय-पत्रिका' और 'आरती और अंगारे' में छंदों में विविधता है फिर भी 16 मात्राओं वाले छन्द का अधिकता से प्रयोग हुआ है । 'सतरंगिनी' और 'बहुतदिन बीते' में लघु छन्दों का प्रयोग भी है । 'आकुल-अन्तर' में छन्द 14, 16 मात्राओं के छन्द के साथ साथ छन्द की स्वच्छन्दता भी है । मिलन-यामिनी के पूर्व भाग में 21 और मध्य भाग में 16 तथा उत्तर भाग के गीतों में 18 मात्राओं के छंद का प्रयोग अधिक हुआ है । 'सूत की माला' और 'खादी के फूल' में छन्द की विविधता है, फिर भी इनमें 24 मात्रा वाले छन्द का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है । फिर भी- 'उनके छन्दों में कहीं गतिहीनता नहीं आने पाई है और उन्होंने प्रायः भाव और प्रसंग के अनुकूल छोटे या बड़े छन्दों का चयन किया है ।[2] बच्चन जी को 16+16= 32 और 18, 24 मात्राओं वाले छन्द अधिक प्रिय हैं, उनके काव्य का अनुशीलन करने से ऐसा ज्ञात होता है । डॉ॰ नगेन्द्र के अनुसार- 'बच्चन ने यों तो छन्द-विधान में अनेक प्रयोग किये हैं, ---- परन्तु प्रायः सर्वत्र ही उनकी स्वर-योजना और लय-विधान में एक सादगी और ऋजु-सरल वेग मिलता है- ----उनके लय विधान में रोमानी सूक्ष्म प्रभावों के स्थान पर व्यवहार जगत की शक्ति मिलती है।[3] निष्कर्षतः अपनी भावधारा के उतार चढ़ाव व उद्दाम वेगानुसार ही बच्चन ने छन्दों के बाँध को छोटा या बड़ा आकार प्रदान किया है, यह उनकी अपनी निजी विशेषता है । परंपरा पर चलते हुए भी कवि ने नवीन छन्दों को साग्रह ग्रहण किया है जो सहज-सरल हैंऔर पठन और गायन की दृष्टि से भी मनोहारी और सराहनीय हैं

---

1. डॉ॰ पुत्तूलाल शुक्ल : आधुनिक हिन्दी काव्य में छन्द योजना, पृ0-109
2. डॉ॰ सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-288
3. डॉ॰ नगेन्द्र : आस्था के चरण §बच्चन की कविता§ पृ0-420

शैली :- शैली शब्द अंग्रेजी शब्द स्टाइल का अनुवाद है । यह शब्द अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से हिन्दी साहित्य में आया है । डॉ० देवराज के अनुसार- "शैली अनुभूत विषय-वस्तु को सजाने के उन तरीकों का नाम है, जो उस विषय-वस्तु की अभिव्यक्ति को सुन्दर एवं प्रभावपूर्ण बनाते हैं ।"[1] प्रत्येक कवि या लेखक की शैली पृथक होती है । उसमें उसके गहन अध्ययन और अनूठे व्यक्तित्व की अमिट छाप होती है । इसीलिए पाश्चात्य विद्वानों ने स्टाइल इज द मैन हिम-सेल्फ कहकर शैली को व्यक्तित्व से जोड़कर देखने का प्रयास किया है । शैली काव्याभिव्यक्ति का प्रमुख मूर्त साधन है । शैली की परिवर्तनशील प्रवृत्ति का स्पष्टीकरण करते हुए कवि श्री बच्चन कहते हैं- साहित्य में शैली का परिवर्तन जीवन के भौतिक और मानसिक क्षेत्रों में परिवर्तन की अचूक निशानी है । ---- जनता नवीन चेतना और अनुभूतियों के प्रति उतनी उदासीन नहीं रहती जितना उसे समझा जाता है । केवल शैली की विचित्रता से वह धोखा भी नहीं खाती । आपकी भावना, विचारावली, चेतना, अनुभूति, कल्पना- एक शब्द में- प्रेरणा के अश्व व्यग्र हैं तो उन्हें नवीन शैली के रथ में जोत दीजिए । जनता आकर उसमें बैठेगी, आपके साथ चलेगी ।आप नवीन शैली का रथ खड़ा कर लेखनी से उसे ठेलना चाहेंगे तो वह आपके प्रति उदासीन रहेगी, आप पर हँसेगी ।[2]

संक्षेप में स्वानुभूत विषय वस्तु को कवि जिस रूप, आकार, प्रकार, अभिव्यंजना पद्धति में ढालता है, पिरोता है, वह विशेष अभिव्यंजना पद्धति या वह ढाँचा ही कवि की शैली कहलाता है । बच्चन जी ने अपनी विभिन्न काव्य-

- -

1. हिन्दी साहित्य कोश §भाग-1§ पृ0-837
2. बच्चन : बुद्ध और नाचघर§खण्ड-2§ पृ0-274

कृतियों पर अनेकानेक प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है । जिनका मुख्य विवरण इस प्रकार है-

<u>सम्बोधनात्मक शैली</u> :- जहाँ किसी दूसरे को पुकार कर या सम्बोधित कर कुछ कहा जाता है वहाँ इस शैली का प्रयोग होता है । यह शैली बच्चन के काव्य में हमें बहुतायत से देखने को मिलती है-

'साथी, सो न कर कुछ बात ।'[1]

<u>वर्णनात्मक शैली</u> :- जहाँ किसी एक ही वस्तु अथवा व्यक्ति का अनेक प्रकार से वर्णन किया जाता है वहाँ इस शैली का प्रयोग होता है । यथा-

'जो सुन्दर थी, सरल थी, कमनीय थी, कुलीन थी, संस्कारी थी, सौम्य थी, शिष्ट थी, शालीन थी, पावन थी, पावनकारी थी ।'[2]

<u>प्रश्नोत्तर शैली</u> :- इस शैली में प्रश्न और उत्तर का साथ-साथ समावेश रहता है । यथा-

'चिड़िया ने मुझसे पूछा, 'तुम्हारे शब्दों में
मेरे परों की रंगीनी है ?
मैंने कहा, 'नहीं ।'
तुम्हारे, शब्दों में मेरे कण्ठ का संगीत है ?'
नहीं ।
तुम्हारे शब्दों में मेरे डैनों की उड़ान है ?
'नहीं ।'
'जान है ?'
नहीं ।'[3]

---

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-175
2. बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-2§ पृ0-339-340
3. बच्चन : जाल समेटा §खण्ड-3§ पृ0-407

बच्चन जी ने इस शैलीका प्रयोग अनेक स्थानों पर किया है ।

सूत्र शैली :- वर्णनात्मक शैली के ठीक विपरीत इस शैली में कवि अपनी बात को सूत्र रूप में छोटी-छोटी कविताओं के माध्यम से व्यक्त करता है । जैसे-

ज्ञान
अनुकरण से
आरम्भ हुआ करता है,
पूर्ण, सृजन में ।[1]

चित्रात्मक शैली :- जहाँ कवि अपने मनोभावों को चित्रों के रंगों में रंगकर प्रस्तुत करे वहाँ इसी शैली के दर्शन मिलते हैं । एक रम्य दृश्य का अवलोकन कीजिये-

दिग्वधुओं का मुख तमाच्छन्न
अब अस्फुट आभा से प्रसन्न,
यह कौन उषा का अवगुण्ठन गा-गाकर के खोलने लगी ?
श्यामा तरु पर बोलने लगी ।[2] और-

सन्ध्या सिन्दूर लुटाती है ।[3] गीत में यह चित्रात्मक शैली अपने पूर्ण सौष्ठव के साथ अभिव्यंजित हुई है ।

व्याख्यात्मक शैली :- इसमें कोई बात कहकर या सूत्ररूप में रखकर उसकी व्याख्या की जाती है । यथा-

इन्कलाब जिन्दाबाद ।
अपनी रोटी, अपना राज-
इस नारे को अपना करके
धर्म-युद्ध के लिए चल पड़ो ।

---

1. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-219
2. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-73 पृ0-190
3. बच्चन : वही गीत-04 पृ0-162

शपथ अन्न की लेकर कहता,
जो मनुष्य है भूखा रहता
वह पापी है ।[1] और-

'सच पूछो तो, अधिक सचेत, सतर्क, सजग, रहने की बेला अब आई है ।[2]

पुनरावृत्ति शैली :- इसमें एक ही बात को प्रभाव वृद्धि से बार-बार कहा जाता है । यथा-

इस घोड़े के
लक्कड़ दादे
के लक्कड़ दादे
के लक्कड़ दादे
के लक्कड़ दादे का दादा
था वह घोड़ा ।[3]

'रूस की गुड़िया'[4] कविता में भी पुनरावृत्ति शैली के दर्शन मिलते हैं ।

तुलनात्मक शैली :- नाम से ही स्पष्ट है कि जहाँ दो वस्तुओं या व्यक्तियों में तुलना की जाती है वहाँ इस शैली का प्रयोग होता है । इस शैली में कवि ने अनेक कविताएं लिखी हैं- 'कविता और राजनीति', 'कवि और राजनीतिज्ञ', 'नए पुराने', 'खोटा सिक्का', 'नेता-अभिनेता', 'कोयल-कैक्टस : कवि', 'कवि दार्शनिक', 'मैं तुम', 'लेनिन : गाँधी', 'छोटा देश बड़ा देश', 'पगदण्डी :सडक प्रजातन्त्र और परिवार तन्त्र', 'पतझर : बसंत, 'दो प्रतीक' आदि कविताएं द्रष्टव्य हैं ।

---

1. बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृ0-441
2. बच्चन : बहुत दिन बीते §खण्ड-3§ पृ0-198
3. बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप §खण्ड-3§ पृ0-305
4. बच्चन : वही पृ0-304

निष्कर्ष शैली :- जब कवि अपने अनुभव से तथा सांसारिक सत्यों के आधार पर कुछ निष्कर्ष देता है तब इस शैली का प्रयोग करता है । यथा-

> है चमकता जो सितारा, वह प्रभा से हीन होगा,
> बढ़ रहा जो चाँद नभ में एक दिन फिर क्षीण होगा,
> क्षीण होगा पूर्ण फिर से, म्लान फिर द्युतिमान होगा,
> भ्रान्त इस आवर्त में ही, विश्व-जीवन लीन होगा, ।[1]

श्रृंखला शैली :- इस शैली में कवि ने किसी कथन की परस्पर गुंफित लड़ी सी बाँध दी है-

> ऊपर चढ़ा,
> पौधे से पेड़ हुआ,
> प्रकृति की दुआ,
> फुनगी पर फूला,
> फूल में फल लगा,
> फल फूला,
> रस भरा ।[2]

संवाद शैली :- कवि ने यत्र-तत्र सुन्दर संवादों की योजना भी की है । 'चाँदी की सीढ़ी'[3] कविता में व्यंग्य के माध्यम से मोहक संवाद दृष्टव्य हैं ।

संलाप शैली :- जहाँ वार्तालाप के माध्यम से मनोभावों को व्यक्त किया जाता है वहाँ इसी शैली का प्रयोग होता है । यथा- 'मुझसे चाँद कहा करता है ।[4]

- -

1. बच्चन : मधुकलश {खण्ड-1} पृ0-130
2. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज {खण्ड-3} पृ0-239
3. बच्चन : उभरते प्रतिमानों के रूप {खण्ड-3} पृ0-359-362
4. बच्चन : निशा-निमन्त्रण {खण्ड-1} गीत-33 पृ0-174

और-

तम भरा तू, तम-भरा मैं,
गम-भरा तू, गम भरा मैं,
आज तू अपने हृदय से हृदय मेरा तोल, बादल !
आज मुझसे बोल, बादल ![1]

उपर्युक्त शैलियों के अतिरिक्त बच्चन जी ने अभिधेयात्मक, निषेधात्मक भावप्रधान, और गीति-शैली इत्यादि शैलियों का भी यथावसर, यथाशक्ति, यथा-स्थान प्रयोग किया है । लोकगीत शैली के लिए बच्चन स्मरणीय हैं । बच्चन जी के व्यक्तित्व की भाँति उनकी शैली में भी स्पष्टता व सजीवता है । मार्मिक प्रवाहमयी भाषा के साथ-साथ बिंबविधान, रस-निष्पत्ति और साधारणीकरण की अद्भुत क्षमता शक्तिकेन्द्र हैं बच्चन का सुमधुर काव्य ।

000
0

---

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-42 पृ0-177

अध्याय - छः

वस्तु विधान एवं प्रकृति चित्रण

अ ध्या य - 6

वस्तु विधान के वैविध्य एवम् वैशिष्ट्य की समीक्षा

बच्चन जी का व्यक्तित्व जितना बहुमुखी और विस्तृत है उतना ही बहुमुखी और विस्तृत उनका वस्तुविधान भी है । हमें आश्चर्य होता है कि एक ही व्यक्ति में अनेक व्यक्तियों का व्यक्तित्व समाहित है । बच्चन जी सर्वांग में उत्तम गायक, आत्मकथालेखक, शैलीकार, अनुवादक, निबन्धकार, संस्मरणकार, गीतकार, समीक्षक, शोधकर्ता, भूमिका लेखक, पत्रलेखक, नाटिका लेखक, कहानीकार, युगदृष्टा-शब्द-शिल्पी और रसवादी कवि हैं । आधुनिक हिन्दी साहित्य के श्रेष्ठ कवि श्री बच्चन का सम्पूर्ण जीवन विपत्तियों, संघर्षों, विपन्नताओं और अभावों में बीता है किन्तु कवि ने अपना साहस और स्वाभिमान नहीं छोड़ा । बच्चन की कविता अन्तःप्रेरित और सहज स्वाभाविक कविता है । अपने जीवन में उन्होंने जो दुःख-सुख का कटु-मधु अनुभव संचित किया है, उसी का परिणाम उनका काव्य है । बच्चन मुख्यतः मानव-भावना अनुभूति और जीवन-संघर्ष के कवि हैं । जीवन में भोगा हुआ सत्य तथा तज्जन्य अनुभूति उनके काव्य में सर्वत्र बिखरी पड़ी है । बच्चन जी के काव्य मे एक ओर सांस्कृतिक भावना और देश-प्रेम का प्रवाह है तथा दूसरी ओर धार्मिक और आध्यात्मिक भावना है । बच्चन जी का सौंदर्य बोध शाश्वत जीवन पर और जीवन-दर्शन भारतीय आध्यात्म पर आधारित है । उनकी काव्य-कृतियों के आद्योपांत विवेचन से स्पष्ट है कि उनकी काव्य-कृतियों की वस्तु में वैविध्य है, वैशिष्ट्य है और एक नवीनता है जो सबसे अलग बात है । वस्तु-विधान के इसी वैविध्य एवं वैशिष्ट्य को मैं निम्न बिन्दुओं के रूप में रखकर उनकी समग्र विवेचना करने का प्रयास करूँगी ।

1. राष्ट्रीय काव्य :- राष्ट्रीय काव्य सृजनका आरम्भ वीरगाथा काल से लेकर आधुनिक काल तक किसी न किसी रूप और अंश में होता रहा है । बच्चन के समकालीन भी अनेकानेक कवियों ने वीर रस से परिपूर्ण ओजपूर्ण राष्ट्रीय कविताएं लिखी हैं, जिनमें श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' का विशेष योगदान है । दोनों ही कवियों ने राष्ट्रीय काव्य का सृजन किया है किन्तु इनकी विचार - धाराओं में अलगाव सा है । दिनकर की राष्ट्रीयता एक सीमा तक माखनलाल जी से प्रभावित है और आगे चलकर उसने अपना स्वतन्त्र और मौलिक रूप धारण कर लिया है ।[1] बच्चन का राष्ट्रीय संग्राम में प्रत्यक्ष योग रहा है ।

अनेक विद्वानों ने राष्ट्रीयता के विषय में अपने विचार व्यक्त किये हैं । विश्व में राष्ट्रीयता की भावना प्राचीन काल से लेकर आज तक प्रवाहमान है । हिन्दी-साहित्य में आरम्भ से ही यह भावना पाई जाती है । विदेशी आक्रमणों के कारण साहित्य में यह भावना प्रबल होती चली गयी । शूमैन के अनुसार सभी भक्तियों की अपेक्षा राष्ट्रभक्ति सर्वश्रेष्ठ है ।[2] जिस समय बच्चन ने काव्य साहित्य में प्रवेश किया वह क्रान्ति का युग था । अंग्रेजों का दमन-चक्र चल रहा था ।

बच्चन का राष्ट्रीय संग्राम में प्रत्यक्ष योगदान रहा है । उन्होंने जुलूसों में भाग लिया, गीत लिखे हैं । उनके काव्य में देश-प्रेम की नैसर्गिक आभा है । उन्हीं दिनों बच्चन जी ने जुलूसों में गाने के लिये कई राष्ट्रीय गीत लिखे, जिनमें 'सर जाए तो जाए पर हिन्द आजादी पाए'[3] वाला गीत बहुत प्रसिद्ध

---

1. डॉ. के. जी. कदम : कवि श्री बच्चन - व्यक्ति और दर्शन पृ0-217
2. शूमैन, एफ. एल. : इन्टरनेशनल पॉलिटिक्स पृ0-422
3. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-6§ पृ0-194

हुआ । राष्ट्र पिता गाँधी के प्रति कवि ने अपना आदर प्रकट किया है । 'गाँधी जी के विलायत प्रस्थान पर भारत माता की विदा'[1] और 'गाँधी जी के जन्म दिन पर भारत माता की बधाई'[2] कविताओं में युवा कवि की भावभीनी श्रद्धा देखते ही बनती है । इसी श्रद्धा और भक्ति का सम्मिश्रण तथा तेजोमय रूप हमें 'खादी के फूल' और सूत की माला' में दिखाई देता है । भारत की उर्वरा धरती से कवि का निवेदन है कि वह गाँधी-से सपूत ही पैदा करे-

भारत माता की युग-युग उर्वर धरती पर
सब जगवन्दित बापू की छाती का शुचितर
जो रक्त गिरा है रक्त-बीज वह बन जाए,
भारत माता गाँधी से बेटे उपजाये ।[3]

गाँधी जी के महाप्रयाण पर आस्था की श्रद्धाँजलियाँ अत्यधिक गरिमामय बन पड़ी हैं-

'अवनी गौरव से अंकित हों नभ के लेखे,
क्या लिये देवताओं ने ही यश के ठेके,
अवतार स्वर्ग का ही पृथ्वी ने जाना है,
पृथ्वी का अभ्युत्थान स्वर्ग भी तो देखे ।'[4]

प्रारम्भिक रचनाएं भाग-1 की कुछ कविताओं जैसे 'झंडा', 'बंदी', और 'बंदी मित्र' में देशभक्तों को उत्साहित किया है । 'चुंबन' और 'मधुकर' जैसी कविताओं में परतन्त्र देश की दुर्दशा का चित्रण है । कवि को अपनी मातृ-

---

1. बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं भाग-2 §खण्ड-3§ पृ0-513
2. बच्चन : वही पृ0-518
3. बच्चन : खादी के फूल §खण्ड-3§ पृ0-490
4. बच्चन : वही पृ0-487

भूमि से अटूट-अभिन्न और असीम अनुराग है । 'कवि और देश भक्त' में उसका भारत के प्रति यही प्रेम प्रकट हुआ है-

जीवन से ऊबा, इच्छा है जन्म न फिर मैं पाऊँ,
पर यदि जन्म पड़े लेना ही भारत में ही आऊँ ।[1]

कवि ने अपना स्वतन्त्रता-प्रेम भी प्रकट किया है-

वीर सुतों के हृदय-रक्त की आज बना रक्तिम हाला,
वीर सुतों के वर शीशों का हाथों में लेकर प्याला,
अति उदार दानी साकी है आज बनी भारत माता,
स्वतन्त्रता है तृषित कालिका, बलिवेदी है मधुशाला ।[2]

'बंगाल का काल' में कवि ने भुजबल एवं क्रान्ति को श्रेष्ठ माना है और शक्ति का उद्घोष करते हुए कहा है- 'निर्बल के बल राम नहीं हैं, निर्बल के बल हैं दो घूँसे ! ------ मन से अब सन्तोष हटाओ, असन्तोष का नांद उठाओ, करो क्रान्ति का नारा ऊँचा---- अपनी रोटी, अपना राज, इन्कलाब जिन्दा-बाद ।[3]

'राष्ट्रध्वजा' के प्रति कवि का स्वाभिमान दृष्टव्य है-

न साम-दाम के समक्ष यह रुकी,
न दण्ड-भेद के समक्ष यह झुकी,
सगर्व आज शत्रु शीश पर ठुकी,
निडर ध्वजा हरी, सफेद, केसरी ।[4]

---

1. बच्चन : प्रारम्भिक रचनाएं भाग-2 §खण्ड-3§ पृ0-52।
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 45 पृ0-05।
3. बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृ0-425-44।
4. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-158

बच्चन जी शहीदों को स्मरण करते हुए उन्हें प्रणाम करते हैं-

रुको प्रणाम इस जमीन को करो,
रुको सलाम इस जमीन को करो,
समस्त धर्म-तीर्थ इस जमीन पर
गिरा यहाँ लहू किसी शहीद का ।[1]

राष्ट्रीय भावों से परिपूर्ण 'मधुशाला' भारत की वर्तमान समस्याओं के समाधान प्रस्तुत करती है । कवि की दृष्टि में सम्पूर्ण भारतवर्ष 'पावन मधुशाला'[2] और भारतमाता 'मंदिर'[3] है । देश-विभाजन की कसक और तड़प के साथ उनमें उदबोधन और निर्माण का स्वर है ।[4] साथ ही कवि ने अपने गीतों में युगीन राजनीति की अवांछनीय गतिविधियों की व्यंग्यपूर्वक भर्त्सना की है ।[5] देश की प्रगति और समृद्धि के लिये आपसी भेदभाव मिटाकर एकता से रहने की शिक्षा दी है ।[6] कवि की वाणी में ओज है । वह गौरव गान करता है । स्वातंत्र्य-सुरक्षा के लिये वह कर्तव्यबोध कराता है-

हल्का फूल नहीं आजादी वह है भारी जिम्मेदारी
उसे उठाने को कंधों के, भुजदण्डों के, बल को तोलो ।[7]

चीनी आक्रमण में फँसा भारत देश रुदन-क्रन्दन की स्थिति को त्याग जब जोशो-खरोश में फ़ुफकार उठा, प्रांतीयता और स्वार्थ की जंजीरों को तोड़कर सर्वांग एकत्रित हो राष्ट्रीय भावना से दीप्तमान हो उठा उस समय कवि हर्षातिरेक

---

1. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-170
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 44 पृ0-51
3. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-138
4. बच्चन : वही पृ0-158-161
5. बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृ0-525-526
6. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-161

में कहा उठता है-

'हो रहा है प्रकट मेरे देश का अब रूप सच्चा ।'[1]

राष्ट्रोन्नति और राष्ट्रीय एकता में भाषा का बहुत महत्व होता है । देश की एकसूत्रता के लिये कवि ने भाषा-ऐक्य पर बल दिया है-

कि जो समस्त जाति की उभार हो,
कि जो समस्त जाति की पुकार हो,
कि जो समस्त जाति-कण्ठहार हो,
स्वदेश को जबान एक चाहिए ।'[2]

स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये बच्चन जी ने शक्ति-बल प्रयोग[3] और न्याय धर्म की रक्षा के लिये लड़ने का संदेश दिया है ।[4] कवि ने स्वतन्त्र भारत में योजनाएं बनाने वाले नेताओं पर कटाक्ष किया है तथा गिरी हुई नैतिकता की ओर संकेत करके वह कहता है- 'यह प्रलम्बासुर मरेगा । जबकि शक्ति समेत हलधर जन्म लेंगे ।[5] 'महागर्दभ'[6] कविता में व्यंग्य अपनी पराकाष्ठा में पहुँचकर मुँह चिढ़ाता है ।

'बंगाल का काल', 'धार के इधर-उधर', 'त्रिभंगिमा', 'दो चट्टाने', 'बुद्ध और नाचघर' और 'बहुत दिन बीते' की अनेक कविताओं में कवि की ओजपूर्ण वाणी राष्ट्रीय भावना से सराबोर होकर निःसृत हुई है । स्वातन्त्र्य सुरक्षा के लिये कवि ने शक्ति सामर्थ्य को महत्व प्रदान किया है ।

---

1. बच्चन : दो चट्टाने §खण्ड-3§ पृ0-026
2. बच्चन : धार के इधर-उधर §खण्ड-2§ पृ0-156
3. बच्चन : वही पृ0-160
4. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृ0-310
5. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-453
6. बच्चन : वही पृ0-453-459

यद्यपि 'दिनकर' और बच्चन-दोनों ही कवि गाँधीवादी विचारधारा से प्रभावित तो हैं, किन्तु उनके काव्य में गाँधीवादी विचारधारा कहीं-कहीं पीछे छूट जाती है और वे क्रान्ति का समर्थन करते हुए दिखाई देते हैं। अधिकारों को पाप्त करने के लिये मानव-मानव के बीच समता स्थापित करने के लिए उन्होंने अपने काव्य में हुँकार भी भरी है। जुलूसों में भाग लिया, गीत लिखे हैं[1] उनके काव्य में देश-प्रेम की स्वाभाविक क्रान्ति व चमक है।

बच्चन जी ने स्वातन्त्र्योत्तर भारत की अनेक राष्ट्रीय समस्याओं और सामाजिक असंगतियों की ओर संकेत किया है, पंड्या जी के अनुसार-'कवि ने राष्ट्रीय भावनाओं को अपनी कविता का विषय बनाकर विविध समस्याओं पर अपनी लेखनी उठाई है।'[2] 'कवि ने अपनी वाणी से हृदयों को नई धड़कनें एवं प्राणों को नए स्वर दिये हैं।'[3] डॉ. सुधाकर कलवडे का कथन शत् प्रतिशत सत्य की प्रतीत कराता है- 'बच्चन जैसे कवि राष्ट्रीय संघर्ष का शंखनाद कर युवकों को समय से मोर्चा लेने के लिये ललकारते हैं।'[4]

निष्कर्षत: बच्चन जी का राष्ट्रीय काव्य वीर रस, ओज गुण, राष्ट्र भक्ति और राष्ट्र प्रेम सम्पन्न है। स्वाभिमान की घोर गर्जना करने वाला, स्वाधिकारों की रक्षा पर मर मिटने वाला उनका राष्ट्रीय काव्य अमर है। बच्चन जी की अपने राष्ट्र के प्रति निष्ठा एवं प्रेम को प्रदर्शित करने वाली निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

---

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-6§ आत्मकथा पृ0-194
2. डॉ. कृष्णचन्द्र पंड्या : बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृ0-275
3. सं. बाँकेबिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि पृ0-004
4. डॉ. सुधाकर कलवड़े : आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना, पृ0-266

जवान हिन्द के अडिग रहो डटे, न जब तलक निशान शत्रु का
हटे ।
हजार शीश एक ठौर पर कटे, जमीन रक्त-रुण्ड-मुण्ड से पटे,
तजो न सूचिकाग्र भूमि भाग भी ।[1]

मानवतावादी काव्य :- आधुनिक मानववाद मध्ययुगों की अनेक 'स्टैंडर्ड' मान्यताओं के प्रति एक विद्रोह है । उसने मानव और उसकी पूर्णता का विशेष आग्रह रखा है ।[2] वह ऊपरी आरोपित शासन व प्रभुत्व को महत्व न देकर स्वानुभव के द्वारा सीखने को अधिक महत्व देता है ।[3] उसने मानव की स्वतन्त्र इच्छा और विकासमान वास्तविकता को आधारभूत सिद्धान्तों के रूप में अपनाया ।[4] मानव की बौद्धिक चेतना पर उसने विनय या मृदुलता की आवश्यकता को महत्वपूर्ण बताया है ।[5] समस्त पृथ्वी या सृष्टि में मानव से बढ़कर कोई नहीं है । इस लिये 'मानव' बच्चन के काव्य का मुख्य विषय है- 'मैंने मानव के हृदय को देखा है । मेरी कविता के विषय हैं मनुष्य के दुख, सुख, शोक विषाद, हर्ष, विमर्ष, संघर्ष - उसके मन-प्राणों का मन्थन । ----- अभिनेता मेरी कविता के मंच का केवल इन्सान है - इन्सानियत है- उसकी नियत भी, नियति भी ।'[6]

बच्चन जी मनुष्य को हर परिस्थिति में महान मानते हैं 'मिलन - यामिनी में उन्होंने मानव को स्पष्ट रूप में महान कहा है - 'मुझे मनुष्य सब जगह

- -

1. बच्चन : धार के इधर-उधर {खण्ड-2} पृ0-160
2. द रीडर्स कम्पेनियन टू वर्ल्ड लिटरेचर, पृ0-219
3. डिक्सनरी आफ वर्ल्ड लिटरेचर पृ0-213
4. ,, ,, ,, पृ0-213 कांटीन्यूड फ्राम पृ0-345
5. '..... नेसेसिटी आफ ह्यूमेनिटी एज ए कन्ट्रोल आन द ह्यूमन इन्टेलीजेन्स' इबिड पृ0-213
फ्राम- डॉ सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-218
6. बच्चन : सतरंगिनी {खण्ड-1} अपने पाठकों से पृ0-315

महान है ।[1] बच्चन मानव-जीवन को ही अपना काव्य-विषय मानते हैं । इसलिये उसे मानवता की उपेक्षा अस्वीकार्य है ।[2] 'आरती और अंगारे' में कवि ने महापुरुषों, महाकवियों, शिल्पकारों, पूर्वजों आदि की स्तुति की है अर्थात् आरती उतारी है । इस कृति में कवि का मानवतावादी दृष्टिकोण उभरकर सामने आया है । साथ ही कवि ने महान विभूतियों के आदर्शों पर चलने का संदेश दिया है । 'कवि का दृष्टिकोण मानवतावादी है ।'[3] कवि मनुष्य में देवत्व की स्थापना करना चाहता है । देवत्व का तेज लाना चाहता है ।[4] पृथ्वी पर दूषित मानवता को स्वीकार करना बच्चन के लिये कठिन काम है -

> सूर्य निकलता, पृथ्वी हँसती,
> चाँद निकलता, वह मुस्काती,
> चिड़ियाँ गाती, साँझ-सकारे,
> यह पृथ्वी कितना सुख पाती,
> अगर न इसके वक्ष स्थल पर यह दूषित मानवता होती,
> तब ग्रह गाते, पृथ्वी रोती ।[5]

कवि ने मनुष्य में ही भगवान ढूँढ लिये हैं- यह आदर्श प्रेम का मान, कभी न चल सकता था उस पर, मैं ईश्वर से स्नेह लगाकर, इस कारण मनुष्य में मैंने ढूँढ लिया भगवान ।[6]

- -

1. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ पृ0-79
2. साहित्य संदेश : बच्चन विशेषांक नवम्बर-दिसम्बर, 1967, पृ0-231
3. राजानन्द : साहित्य सन्देश, नवम्बर-दिसम्बर, 1967, पृ0-195
4. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृ0-281
5. बच्चन : धार के इधर उधर §खण्ड-2§ पृ0-143
6. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग-1 §खण्ड-3§ पृ0-497

नर में नारायणत्व की भावना भारत की बड़ी पुरानी भावना है। भारतीय संस्कृति का यह विशेष गुण है। स्वयं बच्चन के अनुसार 'मानवता की उपेक्षा, करके कोई भी महत्वपूर्ण कार्य नहीं किया जा सकता।'[1] 'मानवता के दुख-सुख संवेदना का सहभोक्ता होकर बच्चन ने अनेक गीत गाए हैं।'[2] कवि भारत के मुख से ही मानवता का संदेश देता है- 'भारत कहता मानवता के साँचे में सब लोग ढलो। देश-देश के पाहुन भारत के जन-गण का स्वागत लो। पूरब की इस परम पुरातन वेदी पर सब साथ मिलो।[3]

बच्चन अपने काव्य में ही नहीं, वैयक्तिक जीवन में भी मानवता को सर्वोपरि महत्व देते हैं। ... उनके 'हर किसी के' पत्र का तुरन्त उत्तर देने के पीछे यही भावना काम करती है। वे जीवित जाग्रत मनुष्य के विचार-भावों के आदान-प्रदान को बड़ा महत्व देते हैं,[4] अतः बच्चन की कविता इसीलिये है कि मनुष्य, मनुष्य के निकट आ सके।'[5]

सम्पूर्ण जगत् की पीड़ा को मुखरित करने का कार्य कवि ही कर सकता है-

सबके हित की बात अकेली कवि की वाणी कर सकती है,
अपने स्वर में आने वाली मानवता का भाग लिये है।[6]

गाँधी जी ने अपकार के बदले उपकार का सन्देश दिया, इसी में मानव की महानता बताई और अपने त्याग एवं बलिदान से दुनियां में फैली घृणा

- -

1. बच्चन - साहित्य संदेह - बच्चन विशेषांक, नवम्बर-दिसम्बर, 1947 पृ0-231
2. डॉ. सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य, पृ0-220
3. बच्चन : त्रिभंगिमा {खण्ड-2} पृ0-406
4. श्री नवलकिशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य, पृ0-140
5. सं. अजित कुमार एवं श्रीवास्तव : बच्चन निकट से, पृ0-191-192
6. बच्चन : आरती और अंगारे {खण्ड-2} पृ0-224

और विद्वेष की भावना को दूर करने का प्रयत्न किया, यही प्रेरणा बच्चन की भी है- "जो कि तुम्हारे हित विष घोले, तुम उसके हित अमृत घोलो"[1]

दूसरों के अपराधों के प्रति दया भाव रखना मानवता का मुख्य धर्म है, किन्तु कवि देखता है कि आज का मानव छिद्रान्वेषण में लीन रहता है इसीलिए वह मनुष्य के चरित्र का परिष्कार और उन्नयन कर उसमें देवत्व की स्थापना करना चाहता है-

अपने में क्या है जो तुम करो किसी को दान ।
बहुत बड़ा कलेजा चाहिये
किसी का करने को सम्मान,
और किसी की कमजोरियों का आदर-
यह है फरिश्तों के बूते की बात,
देवताओं का काम ।[2]

यथार्थतः किसी का आदर और सम्मान करने के लिये बहुत बड़ा हृदय चाहिये, दूसरों को आदर देने वाला 'जानकर अनजान बनने वाला वीर'[3] व्यक्ति महात्मा होता है ।

कवि को यह आभास होता है कि आज के मनुष्य की आस्थाएं, विश्वास नष्ट हो चुके हैं, आज की इन्सानियत कुंठित और पराजित हो गई है-

मनुजता कुंठित, पराजित हो रही है,
आस्थाएं टूटतीं, विश्वास का दम घुट रहा है ।[4]

कवि मनुष्य-मनुष्य में भेदभाव नहीं चाहता । वह मनुष्य के लिये प्रेम

- -

1. बच्चन : धार के इधर उधर {खण्ड-2} पृ0-167
2. बच्चन : बुद्ध और नाचघर {खण्ड-2} पृ0-316
3. वही पृ0-310
4. बच्चन : त्रिभंगिमा {खण्ड-2} पृ0-464

मय भूमि और प्रेममय आसमान की कामना करता है ।[1]

'बुद्ध और नाचघर' में कवि ने आज के मानव का अत्यन्त सजीव चित्र अंकित किया है । भगवान की सर्वव्यापकता पर नियन्त्रण कर, धार्मिक स्थानों के खुलने पर पाबंदी लगाकर ईश्वर की सर्वव्यापकता पर बंदिश लगा दी है क्यों कि यदि ईश्वर सर्वव्यापक होते तो मनुष्य कोई भी कार्य निर्बाध और निर्द्वन्द्व नहीं कर सकता था, यहाँ तक कि प्रेयसी से प्रेम भी खुलकर नहीं कर सकता था, चतुर मानव ने बुद्ध को - बना दिया उन्हें बाजार में बिकने का सामान[2]

कवि को आधुनिक औपचारिकता व सभ्यता में सांस्कृतिक मानव के दर्शन नहीं होते उनकी दृष्टि नितान्त यथार्थवादी है । वे कह उठते हैं -

छोटे में, इन्सान बड़ा होता है ।[3]

कवि खिन्न खण्डित, विश्रृंखल मानव का उन्नयन कर मानवता की सेवा करना चाहता है- 'आज मानव-मनस' इतना खिन्न खण्डित, विश्रृंखल है । बाँध यदि उसको सकूँ कुछ देर को मैं । किसी थिर, संतुलित, निष्ठायुत समर्पित एक से तो । मनुजता की कम नहीं सेवा करूँगा ।[4] कवि का मानना है कि मानवता के विकास के लिये विज्ञान को मानवता की सेवा के लिये प्रयुक्त करना चाहिए विज्ञान मानवता के ऊपर सवार होगा तो दैत्य होगा, मानव विज्ञान पर सवार होगा तो देवता ।[5]

- -

1. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृ0-286
2. वही पृ0-352
3. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृ0-252
4. बच्चन : दो चट्टाने §खण्ड-3§ पृ0-107
5. बच्चन : प्रवास की डायरी §खण्ड-8§ पृ0-239

निष्कर्षतः बच्चन जी मानवता के अमर गायक हैं । वे मनुष्य की मनुष्यता को विचित्र कहते हैं तथा उन्हें मनुष्य हर स्वरूप में पवित्र लगता है -

'मनुष्य विश्व-प्रेम में पगा हुआ,
मनुष्य आत्म-सुख में लगा हुआ,
हरेक प्रण-प्रयास में ठगा हुआ,
मनुष्य हर स्वरूप में पवित्र है ।'[1]

3. मानव-धर्म :-

बच्चन जी मानव-धर्म को सभी धर्मों से ऊँचा और श्रेष्ठ मानते हैं । वे सभी धर्मों में एकता चाहते हैं । धर्म के सम्बन्ध में बच्चन जी ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है- 'तथा कथित धर्मों को मैं क्या महत्व देता था, यह बहुत साफ-साफ और बहुत बार मेरी पंक्तियों में व्यक्त हो चुका था- 'धर्म-ग्रन्थ सब जला चुकी है जिसके अन्तर की ज्वाला ' आदि । ..... आज भी मैं ऐसा समझता हूँ कि मनुष्य का धर्म एक ही है, एक ही हो सकता है । भेद, विविधता, वैपरीत्य, विरोध अ-धर्म के लक्षण हैं, धर्म के लक्षण नहीं ।[2] बच्चन जी का मानना है कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई यहूदी आदि सभी का धर्म उतना ही है, जितना उसकी मानवता में समा गया है । शेष अधर्म है ।[3] बच्चन जी हिन्दू धर्म की विविधता में एकता और समन्वय चाहते हैं ।[4] बच्चन का काव्य धर्म-ऐक्य की शिक्षा देता है । उनकी मधुशाला हिन्दू और मुसलमानों को एकता से रहने का संदेश देती है -

- -

1. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-78
2. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर §खण्ड-7§ पृ0-388
3. वही पृ0-388
4. बच्चन : टूटी छूटी कड़ियाँ §खण्ड-6§ पृ0-320

'मुसल्मान औ' हिन्दू है दो, एक, मगर, उनका प्याला,
एक, मगर, उनका मदिरालय, एक, मगर, उनकी हाला,
दोनों रहते एक न जब तक मस्जिद-मन्दिर में जाते,
बैर बढ़ाते मस्जिद-मन्दिर, मेल कराती मधुशाला ।[1]

'मधुशाला' छुआ-छूत और जाति भेद को दूर करने की संदेश वाहिका है-

कभी नहीं सुन पड़ता, 'इसने, हा, छू दी मेरी हाला,'
कभी न कोई कहता, 'उसने जूठा कर डाला प्याला,'

सभी जाति के लोग यहाँ पर साथ बैठकर पीते हैं, सौ सुधारकों का करती है काम अकेली मधुशाला ।[2]

जाति भेद पर करारा व्यंग्य कवि ने किया है- कुछ नहीं, एकलव्य द्रोणाचार्य की उस करुण गाथा में, कि जिसको याद कर अभिमान अपने पूर्वजों पर कर सकूँ मैं ।[3]

कवि मस्जिद, मठों में प्रार्थना की अपेक्षा वह मनुष्य को कर्मपथ पर अग्रसर होते देखना चाहता है, कवि के दृष्टिकोण से मानव का धर्म स्तुति नहीं, संघर्ष है-

युद्ध क्षेत्र में दिखला भुजबल
रहकर अविजित, अविचल प्रतिपल,
मनुज पराजय के स्मारक हैं मठ, मस्जिद गिरजाघर ।
प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर ।[4]

भाभड़ा जी के मत से कवि की दृष्टि अनास्थापरक है- 'राम नाम का रोड़ा हटाकर क्रान्ति का सन्देश देने वाली बच्चन की विद्रोहात्मक प्रवृत्ति

- -

1. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 50 पृ0-52
2. वही रू. 50 पृ0-53
3. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-435
4. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-254

में अनास्थापरक जीवन दृष्टि प्रतिबिम्बित होती है ।[1] कवि जब समाज में मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारों को सांप्रदायिकता को जन्म देने की स्थिति में देखता है तब ऐसी स्थिति में ही कवि का इन मन्दिर, मस्जिद, मठों के प्रति श्रद्धा भाव हट जाता है और तभी वह अनास्थावादी बनकर इन पर कटु प्रहार करने लगता है, वैसे बच्चन जी भारतीय संस्कृति और धर्म के प्रबल समर्थक एवं पोषक हैं तथा उनके प्रति आस्थावान हैं ।

बच्चन का धर्म सम्बन्धी विश्वास भी एक विशिष्टता में डूबा हुआ है प्रेम ही उनका धर्म और भगवान है - धर्म हमारा पूछो प्राण ? - ईश्वर को मैं नहीं जानता, उसकी सत्ता नहीं मानता, जिसे न देखा जाना कैसे उसको लेता मान? जगती में मैं अब तक, प्राण ! केवल एक प्रेम पहचानूँ, उसे हृदय का स्वामी मानूँ, सब कहते भगवान प्रेम है - प्रेम हमें भगवान ।[2]

'बच्चन' क्रान्तिकारी कवि कबीर के सदृश पुरानी परम्परा को तोड़ देना चाहते हैं ।[3] वे धर्म के मूल स्त्रोत में जाने के लिये पुरातनता या आधुनिकता का छद्मावरण पसन्द नहीं करते, बल्कि शाश्वत 'अर्ज' को ही आवश्यक मानते हैं।[4]

कवि की 'मधुशाला' विविधता में एकता स्थापित करने का संदेश देती है, धर्म, जाति, एकता स्थापित करने का संदेश देती है, धर्म, जाति-पाति और छुआ-छूत का बच्चन ने डटकर विरोध किया है । 'मधुशाला' सर्वांग और सर्वांश में प्राचीन परम्पराओं, रूढ़िवादी मान्यताओं पर कठोर कुठाराघात करने

- -

1. श्री नवल किशोर भाभडा : बच्चन : जीवन और काव्य, पृ0-138
2. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं-। §खण्ड-3§ पृ0-470
3. लोकप्रिय बच्चन : दीनानाथ शरण पृ0-130
4. बच्चन : टूटी-छूटी कड़िया §खण्ड-6§ पृ0-421

वाली काव्यकृति है । अतः हम सुधाबहन पटेल जी के कथन को ही समीचीन समझ कर निष्कर्ष पर पहुँचते हैं- बच्चन का धर्म सम्बन्धी विश्वास केवल एकान्तिक रूप से भक्त का विश्वास नहीं है, वे सद् गृहस्थ, लोकहित साधक और मानवतादर्श के कवि हैं । उनकी आराधनात्मक प्रकृति वैयक्तिक वस्तु है, सामाजिक अथवा साम्प्रदायिक क्रियाकलाप नहीं ।[1]

4. सांस्कृतिक काव्य :-

क्रिया-कलाप, आदतें, आचार-संहिता, रीति-नीतियाँ, नैतिक-मूल्य, कलात्मक अभिरुचियाँ, आस्था, विश्वास, लोकव्यवहार आदि संस्कृति के अंग हैं । विद्वानों के मतानुसार संस्कृति मन और मस्तिष्क का संस्कार-परिष्कार करने वाली तथा मानव जाति का श्रेय संपादन करने वाली है । भारतीय संस्कृति के प्रति बच्चन के हृदय में आस्था और श्रद्धा के भाव हैं ।[2] बच्चन जी ने अतीत-कालीन भारतीय कला पर प्रेम व्यक्त किया है ।[3] 'बुद्ध और नाचघर' में भी प्राचीन संस्कृति का उल्लेख है । कविवर बच्चन अपनी भारतीय ललित कलाओं-विशेष रूप से भारतीय साहित्य एवं साहित्यकारों के प्रति सदैव आदर का भाव रखते हैं । 'आरती और अंगारे' में कवि ने महान विभूतियों वाल्मीकि, कालिदास, जयदेव, जगन्नाथ , विद्यापति, कबीर, तुलसी, जायसी, सूर, मीरा, रहीम, भारतेन्दु बाबू, मैथिलीशरण गुप्त, खैयाम, मीर, गालिब, इकबाल, रवीन्द्र बाबू की प्रशंसा के गीत गाए हैं । पौराणिक धार्मिक कथाओं की ओर संकेत कर कवि ने अपना मंतव्य व्यक्त किया है ।

---

1. डॉ॰ सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-41।
2. बच्चन : जाल समेटा §खण्ड-3§ पृ0-393-395
3. बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ पृ0-207-210

चेतावनी[1] और मिट्टी का द्रोणाचार्य[2] शीर्षक कविताओं में कवि ने अपने संदेश को प्रचारित-प्रसारित किया है । ऐतिहासिक, प्रसंगों का उल्लेख कर कवि ने अपने धर्म तथा संस्कृति से प्रेम व्यक्त किया है - यहाँ वामन बन त्रिविक्रम, नापते त्रैलोक्य ।

अपने तीन डग में, और आधे के लिये बलि, देह अपनी विनत प्रस्तुत कर रहे हैं । यहाँ दुर्गा महिष मर्दन कर, विजयिनी का प्रचण्डाकार धारे । एक उंगली पर यहाँ पर, कृष्ण गोवर्धन सहज निःश्रम उठाये, तले ब्रज के गोप-गो सब शरण पाये, औ' भगीरथ की तपस्या यहाँ चलती है कि, सुरसरि बहे धरती पर उतरकर, सगर के सुत मुक्ति पायें ।[3] पवित्र गंगाजल,[4] शिव प्रतिमा,[5] यज्ञ-अग्नि,[6] तपोवन[7] इत्यादि शब्दों का प्रयोग अपनी मधुशाला में करके कवि ने भारतीय संस्कृति के प्रतीक इन शब्दों के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट की है । प्राचीन कथाओं के प्रति कवि का आदर प्रकट हुआ है । 'दो चट्टानें' में कवि ने सिसिफस के मूल्यहीन व्यर्थ श्रम और हनुमान के सार्थक एवं लोकोपकारी संजीवनी शक्ति के श्रम को व्यक्त किया है । कवि ने भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता स्थापित की है । हनुमान का सम्पूर्ण प्रसंग हमारी गौरवशाली सांस्कृतिक धरोहर है ।

बच्चन जी विदेशी साहित्य परम्परा से प्रभावित होते हुए भी

---

1. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-432
2. वही पृ0-435
3. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज §खण्ड-3§ पृ0-293
4. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 19 पृ0-47
5. वही रू. 19 पृ0-47
6. वही रू. 54 पृ0-52

भारतीयता एवं संस्कृति के प्रशंसक रहे हैं ।[1] बच्चन ने हनुमान के आदर्श को श्रेष्ठ माना है । लोक मान्यताओं और लोकविश्वासों के प्रति कवि ने आस्था प्रकट की है-

लंका में अपशकुन सैकड़ों साथ हुए थे,
वाम अंग फड़के थे सहसा लंका पति के,[2]

और

'दाहिनी मेरी फड़कती आँख । अब तुम आ रहे अपने बसेरे ।'[3] कवि संस्कृति और सभ्यता की रक्षा के लिये व्यंग्योक्तियों का भी सहारा लेता रहा है । कवि ने जनता को जागृत किया है- ' ...... अब उसे सजग प्रहरी बनकर जीना होगा । तभी हमारी भारतीय संस्कृति, सभ्यता, जीवन-पद्धति की रक्षा हो सकेगी । इन्हें खोकर भारत भारत न रहेगा । भारतीयता खोकर भारत के जीने से तो अच्छा है कि वह भारतीयता की रक्षा में अपने प्राणों की बलि चढ़ा दे ।'[4]

निष्कर्षतः बच्चन के काव्य में हमें भारतीय संस्कृति के प्रति एक असीम अनुराग परिलक्षित होता है । जिसका स्वरूप लोक मंगलकारी है । बच्चन के काव्य में ही नहीं उनके जीवन में भी भारतीय संस्कृति के दर्शन होते हैं ।

5. अध्यात्म, रहस्य और दार्शनिक विचारधारा का काव्य :-

बच्चन के काव्य में आध्यात्मिक भावना के भी दर्शन होते हैं । कवि भक्ति भावना में डूबता उतराता रहता है और अपने प्रियतम से निमिष मात्र के लिये विलग नहीं होना चाहता - मेरे प्रियतम नाच रहे हैं, मैं कैसे हट जाऊँ ।[5]

---

1. सं. प्रो. दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृ0-74
2. बच्चन : दो चट्टानें §खण्ड-3§ पृ0-131
3. बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ पृ0-121
4. बच्चन : टूटी-छूटी कड़िया §खण्ड-6§ पृ0-385
5. बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृ0-495

पंचतत्व के सिद्धान्त का उद्घोष कवि बड़ी तन्मयता से करता है-

क्षिति की क्षमता, जल की समता,
पावक-दीपक जाग्रत-ज्योतित निशि-दिन प्रभु का नेह, री,
प्रभु मन्दिर यह देह, री ।
गगन असीमित, पवन अलक्षित,
प्रभु-करुणा से पल-पल रक्षित यह पंच महला गेह, री ।[1]

उप हार[2] और मातृ मंदिर[3] कविता में भी कवि का अध्यात्म भाव प्रकट हुआ है । बच्चन के काव्य में रहस्यमयी भावना की अभिव्यक्ति प्रायः यत्र-तत्र दिखाई देती है । 'नभ का निमन्त्रण' कविता में कवि को सितारे इशारे कर रहे हैं- एक दिन भोली किरण की लालिमा ने, क्यों मुझे फुसला लिया था, एक दिन घन-मुसकराती चंचला ने क्यों मुझे बहका दिया था, एक राका ने सितारों से इशारे, क्यों मुझे सौ-सौ किये थे ।[4] कवि को अज्ञात मंजिल बुलाती है ।[5] अज्ञात के प्रति कवि के पास केवल गीत अर्पित करने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है- गीत छोड़कर पास तुम्हारे मानव का पहुँचा ही क्या है । अब तुमको अर्पित करने को मेरे पास बचा ही क्या है ।[6]

कवि को लहरों में आमन्त्रण की अनुभूति होती है- तीर पर कैसे रुकूँ मैं, आज लहरों में निमन्त्रण ।[7] 'प्रणय पत्रिका' और 'चार खेमें चौंसठ खूँटे' के अधिकांश गीतों में यह रहस्य भावना स्पष्ट देखी जा सकती है ।

- -

1. बच्चन : चार खेमें चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृ0-495-496
2. बच्चन : प्रारंभिक रचनाए-1 §खण्ड-3§ पृ0-470
3. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं-2 §खण्ड-3§ पृ0-551
4. बच्चन : चार खेमे चौंसठ खूँटे §खण्ड-2§ पृ0-493
5. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-068
6. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-397
7. बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृ0-140

कवि के नयन श्रद्धानत होकर चरण-कमल में अर्घ्य चढ़ा-चढ़ा कर पुनः पुनः भर आते हैं - 'नयन तुम्हारे चरण-कमल में अर्घ्य चढ़ा फिर-फिर भर आते ।[1] कवि को अज्ञात शक्ति के मौन संदेश मिलते हैं- 'मेरी तो हर साँस मुखर है, प्रिय तेर सब मौन संदेसे ।[2]

बच्चन के काव्य में हमें दार्शनिक विचारधारा का संकेत उनकी आरंभिक कृतियों से ही मिलना प्रारम्भ हो जाता है- "ईश-जीव में भेद नहीं है, जहाँ जीव है ईश वहीं है,
'प्रेम,' 'प्राण' तुम दोनों मेरी-शंकर वचन प्रमाण ।"[3]

और

साकार वृक्ष से नि-राकार, तुम निकल हुई कैसे बयार ?
सब ओर तुम्हारा अब प्रसार, इस नभ मण्डल के आर-पार ।[4]

बच्चन ने परम प्रिय परमात्मा से एकाकार होने के लिये एक ही राह पकड़कर चलने का संदेश दिया है- 'राह पकड़ तू एक चला चल, पा जायेगा मधुशाला।[5] साथ ही- 'प्रियतम, तू मेरी हाला है, मैं तेरा प्यासा प्याला, अपने को मुझमें भरकर तू, बनता है पीने वाला ।[6]

बच्चन ने मनुष्य को क्षणभंगुर प्याले के प्रतीक द्वारा नश्वर जीवन के शाश्वत सत्य से भी परिचित कराया है । कवि की दृष्टि में प्रत्येक वस्तु विनाश-शील है । मृत्यु ही शाश्वत सत्य है - 'मिट्टी का तन, मस्ती का मन क्षण भर

- -

1. बच्चन : प्रणय पत्रिका		§खण्ड-2§	पृ0-103
2. वही			पृ0-098
3. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं-1		§खण्ड-3§	पृ0-481
4. बच्चन : वही	-2	§खण्ड-3§	पृ0-541
5. बच्चन : मधुशाला	रू. 6	§खण्ड-1§	पृ0-45
6. वही	रू. 3		पृ0-45

जीवन- मेरा परिचय ।'[1] साथ ही-

'क्षीण, क्षुद्र, क्षण भंगुर, दुर्बल मानव मिट्टी का प्याला,
भरी हुई है जिसके अन्दर कटु-मधु जीवन की हाला,
मृत्यु बनी है निर्दय साकी अपने शत-शत कर फैला,
काल प्रबल है पीने वाला संसृति है यह मधुशाला ।'[2]

मधुशाला में अद्वैतवाद के दर्शन भी होते हैं- इस उधेड़बुन में ही मेरा सारा जीवन बीत गया- मैं मधुशाला के अन्दर या मेरे अन्दर मधुशाला ।[3] भगवान का वास कण-कण में होता है- घट-घट में साईं रमता वाली बात भी कवि की दृष्टि में सत्य है- पथिक बना मैं घूम रहा हूँ, सभी जगह मिलती हाला ।[4]

निष्कर्ष रूप में यह निर्विवाद सत्य है कि हमें बच्चन के काव्य में अध्यात्म, रहस्य और दर्शन की त्रिवेणी के दर्शन होते हैं अतः दर्शन मात्र से प्यास नहीं बुझती इसलिये हमें उस पवित्र त्रिवेणी के पावन संस्पर्श में अवगाहन करना है, डुबकी लगाना है ताकि हमारा सर्वांग उस पूत भावना में डूब जाए, भीग जाए ।

6. प्रकृति सम्बन्धी काव्य :-

'प्रकृति पर मैं कविता लिखता ही नहीं । पारिवारिक जीवन-मेरी अपनी अनुभूतियाँ ही मुख्य विषय हैं ।'[5] यद्यपि कवि का उद्देश्य प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करना नहीं था, उनकी कविता के मुख्य विषय तो मनुष्य और उसके सुख-दुख ही हैं । कवि स्वयं स्वीकार करता है- 'प्रकृति चित्रण को सृजन का लक्ष्य बनाना

- -

1. बच्चन : मधुबाला {खण्ड-1} पृ0-95
2. बच्चन : मधुशाला {खण्ड-1} रू. 73 पृ0-55
3. वही रू. 119 पृ0-62
4. वही रू. 47 पृ0-51
5. सं. प्रो. दीनानाथशरण : लोकप्रिय बच्चन पृ0-12

तो दूर, प्रसन्नता देना भी कभी मेरा ध्येय नहीं रहा ।'[1] फिर भी बच्चन जी ने प्रकृति के सभी रूपों का स्पर्श किया है और अपनी कोमल भावनाओं के द्वारा उनका चित्रण किया है । प्रकृति का विस्तृत वर्णन मैं आगे करूँगी ।

7. नियतिवादी काव्य :-

> नियतिःकारणं लोके नियतिः कर्मसाधनम्
> नियतिः सर्वभूतानां नियोगेष्विह कारणम् ।[2]

बच्चन जी नियति की सत्ता से इन्कार नहीं करते क्योंकि उनके जीवन में अनेक बार ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई जब उन्हें नियति पर आश्चर्यजनक विश्वास हुआ । प्रारंभिक रचनाएं भाग-2 में नियति मनुष्य को अपनी उंगलियों में मौन नचाती है-

> 'नियति उंगलियों पर है तेरी मुझे नाचना मौन ।[3]

जो अंकित होता है वही उसका प्राप्तव्य है, प्राप्य है ।[4] विधि की विडम्बना हो तो सपनों के राजप्रासाद क्षण में विनष्ट हो जाते हैं- 'राजमहल कितने सपनों का पल में नित्य ढहा करता है ।'[5] कवि की दृष्टि में- 'भाग्य प्रबल, मानव निर्बल है ।[6] मनुष्य कितना लाचार और परवश है कि वह न तो इन्कार कर सकता है और न ही वरण कर सकता है- मनुज के अधिकार कैसे, हम यहाँ लाचार

- -

1. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-209
2. वाल्मीकि रामायण, कि. कां. 25-4
3. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं-2 §खण्ड-3§ पृ0-535
4. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 70 पृ0-055
5. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-174
6. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 97 पृ0-058

ऐसे, कर नहीं इन्कार सकते वरण भी । स्वप्न भी छल, जागरण भी ।[1] कवि नियति की सत्ता को स्वीकार करता है- ''जिसे हमारे पूर्वज 'दैव' कहते थे उसे हम भाग्य, नियति, घटना, मौका §चांस§ कुछ भी कहें उसकी सत्ता से इन्कार नहीं किया जा सकता ।[2]

मनुष्य बाध्य है-

'हम जिस क्षण में जो करते हैं हम बाध्य वहीं हैं करने को,
हँसने के क्षण पाकर हँसते, रोते हैं पा रोने के क्षण ।'[3]

श्यामा जी की मृत्यु को बच्चन जी अपने प्रति नियति का घोर अन्याय मानते हैं-

ऐसी ही थी रात अंधेरी, जब सुख की, सुखमा की ढेरी मेरी लूट नियति ने ली थी, करके मेरा तन-मन जर्जर । कोई रोता दूर कहीं पर ।[4]

किन्तु कवि की दृष्टि में एक दूसरा चरण या सोपान भी है- भाग्य लेटे का सदा लेटा रहा है, जो खड़ा है भाग्य उसका उठ खड़ा है, चल पड़ा जो भाग्य उसका चल पड़ा है ।[5]

'निशा-निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अन्तर' तथा 'मधुशाला आदि कृतियों में कुछ पाठकों और समालोचकों ने निराशा और अवसाद का स्वर सुना है । पर 'बच्चन' के शब्दों में- 'सच तो यह है कि मैं सदा आशा की ही किरण को खोज रहा था, पर मैं उसे किसी सैद्धान्तिक, काल्पनिक अथवा नकली सतह से नहीं उठा लेना चाहता था । मैं अन्धकार और निराशा की अंतिम तह तक गया और वहाँ भी जो किरण उजाला कर रही थी, वहाँ भी जिसने मेरा

- -

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण	§खण्ड-1§	पृ0-168
2. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर	§खण्ड-7§	पृ0-285
3. बच्चन : मधुकलश	§खण्ड-1§	पृ0-127
4. बच्चन : निशा-निमन्त्रण	§खण्ड-1§	पृ0-175
5. बच्चन : चार खेमें चौसठ खूँटे	§खण्ड-2§	पृ0-531

साथ नहीं छोड़ा था, उसी के सहारे मैं ऊपर उठा । मेरी आस्था, प्रत्यक्ष और परोक्ष दोनों की कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण होकर निकली ।[1]

बच्चन के काव्य में पलायनवाद के दर्शन कहीं भी नहीं होते, वह नित्य जीवन संघर्ष की प्रेरणा, देते हैं- तीर पर कैसे रुकूँ मैं, आज लहरों में निमन्त्रण ।[2] स्वाभिमानी मनुष्य उत्साह के साथ संघर्ष की मुद्रा में अज्ञात नियति को चुनौती देता है ।[3] कवि का कर्मवाद 'चरैवेति', 'चरैवेति' से ध्वनित होता है - 'सोने वाले की किस्मत सोती रहती है, उठ बैठे की किस्मत उठ बैठा करती है, खड़े हुए का भाग्य खड़ा हो जाता है, चलने वाले का चल पड़ता है । चरैवेति .... चरैवेति ।[4]

बच्चन के नियति वाद में आशा की किरण के सहारे, कठिनाइयों से निबटते हुए, उल्लासित होत हुए कर्मपथ पर आगे बढ़ने का उर्जस्वल उपदेश भी समाया हुआ है ताकि दुर्भाग्य भी मनुष्य का निर्माता बन जाए ।[5]

बच्चन का 'अग्निपथ'[6] 'प्रार्थना मत कर'[7] 'अग्निदेश से आता हूँ मैं'[8] 'तुम्हारा लौह चक्र आया'[9] 'क्षतशीश मगर नतशीश नहीं'[10] इत्यादि गीतों में नियति के प्रति घोर विद्रोह है, महासंघर्ष की प्रतिध्वनियाँ हैं जो निराशा और अपराजेय जिजीविषा के बीच चल रही थीं ।

---

1. बच्चन : एकान्त संगीत (खण्ड-1) पृ0-211
2. बच्चन : मधुकलश (खण्ड-1) पृ0-140
3. बच्चन : आकुल अन्तर (खण्ड-1) पृ0-280
4. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज (खण्ड-3) पृ0-244
5. डॉ. सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-272
6. बच्चन : एकान्त संगीत (खण्ड-1) पृ0-246
7. वही पृ0-254
8. वही पृ0-248
9. बच्चन : एकान्त संगीत (खण्ड-1) पृ0-244
10. वही पृ0-238

इस प्रकार बच्चन का नियतिवाद कृष्ण के आशावाद से युक्त कर्मवाद का प्रतीक है- निराशा वाद से बहुत दूर ।[1] 'सतरंगिनी' और मिलनयामिनी के असीम आशावाद और उल्लास, आह्लाद के गीतों में नियति का घोर अपमान और नियति को चुनौती है, ललकार है ।

8. व्यंग्यात्मक काव्य :-

'त्रिभंगिमा', 'बुद्ध और नाचघर', 'बहुत दिन बीते', 'चार खेमें चौंसठ खूँटे, 'कटती प्रतिमाओं की आवाज', 'जाल समेटा' आदि संकलनों में व्यंग्यपरक कविताएं भरी पड़ी है । क्यों कि 1960 के लगभग राजनीतिक, सामाजिक और साहित्यिक वातावरण इतना अव्यवस्थित और विसंगत था कि कवि को बरबस व्यंग्य के लिये अपनी लेखनी से मुक्तक कविताएं लिखनी पड़ी जो सायास नहीं हैं, स्वतः मुखरित हैं । 'खजूर'[2] और 'महागर्दभ'[3] में व्यंग्य बहुत पैना है । खजूर में अवसरवादी लोगों पर व्यंग्य है । राजनीतिज्ञों की योजनावादी शैली पर सरकार की अकर्मण्यता और लाल फीताशाही पर कवि ने पैने व्यंग्य किये हैं । सत्ता से मिलकर और चाटुकारिता से महाकवि की उपाधियुक्त होने वाले रचनाधर्मिता-शून्य साहित्यकारों की भी कवि ने बखिया उधेड़ी है-

> 'राष्ट्रपति और वजीरे आजम, औ' नेतागण भारी भरकम
> अपने फोटो खिंचवाने को ललुवाते थे,
> उसकी कोई रचना नहीं खरीदा या बाँचा करते थे ।[4]

---

1. सं. बाँकेबिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि पृ0-076
2. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ पृ0-452
3. वही पृ0-453-54
4. बच्चन : जाल समेटा §खण्ड-3§ पृ0-390

व्यंग्य के सभी रूपों और प्रकारों की धनी इनकी कृतियाँ आज के विघटित, विखंडित नैतिक मूल्यों की गाथा सचित्र प्रस्तुत करती है । 'परिवार नियोजन'[1] 'कीमतें और कीमतें'[2] 'नई दिल्ली किसकी है'[3] और 'दिल्ली की मुसीबत'[4] आदि कविताओं में राजनीतिक व्यंग्य अपने पूर्ण वैभव के साथ प्रकट हुए हैं । 'चार पीढ़ियाँ'[5] में भी व्यंग्य छिपा है ।

डॉ. जोशी ने बच्चन के व्यंग्य को डंक की संज्ञा दी है ।[6] जबकि डॉ. रमेश गुप्त बच्चन के व्यंग्य को डंक न मानकर धारदार तलवार का प्रहार मानते हैं । ..... उसका सीधा लक्ष्य शिकार को दो टूक कर देना है । व्यंग्य के लिये अभीष्ट भाषा और प्रखर शैली का प्रयोग बच्चन जी की विशेषता है । ......इसलिये बच्चन व्यंग्य कवियों की पंक्ति में भी अग्रपांक्तेय बन गए हैं ।[7]

9. हालावादी काव्य :-

'मधुशाला', 'मधुबाला' और 'मधुकलश' की कविताएं हालावाद के अन्तर्गत आती हैं । यद्यपि प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक के कवियों ने हाला, प्याला का वर्णन किया है किन्तु बच्चन जी पर हालावाद का लेबिल लगा दिया गया जो न तो न्यायसंगत है और न ही तर्कपूर्ण ही । बच्चन के मत से 1930-35 के बीच भारतवर्ष की परिस्थिति ही कुछ ऐसी थी जिसमें वह रुबाईयात

---

1. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज (खण्ड-3) पृ0-235
2. वही पृ0-279
3. बच्चन : जाल समेटा (खण्ड-3) पृ0-391
4. वही पृ0-389
5. बच्चन : कटती प्रतिमाओं की आवाज पृ0-268
6. डॉ. जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व पृ0-121
7. सं. रमेश गुप्त : बच्चन निकष पर, पृ0-174, 177, 179

का स्वागत करने को तैयार था ।[1] 'मधुशाला' लिखकर कवि ने कोई वाद नहीं चलाया, प्रतीकों के माध्यम से अपने उद्गारों को अभिव्यक्ति प्रदान की है ।

जियें-भोगे सत्य को वाणी दी है । हालावाद के विषय में बच्चन कहते हैं- 'इन कविताओं को 'हालावाद' के नाम से पुकारा गया । यह तो सतही बात की गयी । इनकों प्रतीकवादी कहा जाता तो अधिक वैज्ञानिक होता । मैंने इसकी महत्ता केवल इतनी मानी कि इस कविता को लोग छायावाद के गल्ले में न डाल सके । यह उससे कुछ अलग चीज थी, आज भी यह अपनी सत्ता अलग बनाए हुए है ।[2] बच्चन की मधुशाला- 'कुचल हसरतें कितनी अपनी हाय बना पाया हाला'[3] वाली मधुशाला है तथा 'मधुशाला वह नहीं, जहाँ पर मदिरा बेची जाती है वरन् भेंट जहाँ मस्ती की मिलती मेरी तो वह मधुशाला ।'[4]

फारसी प्रतीकों हाला, प्याला, साकी से प्रभावित कवि की 'मधुशाला' एक अमूल्य कृति है । साहित्य की अमर विरासत है । आलोच्य विषय के प्रथम खण्ड में हम 'मधुशाला' के अन्तर्गत सभी पक्षों पर प्रकाश डाल चुके हैं । संक्षेप में हालावाद का परिचय इतना ही समीचीन है । निष्कर्षतः बच्चन ने हाला-वाद के द्वारा समाज में फैली हुई सड़ी-गली मान्यताओं, धार्मिक भेदभाव, ऊँच-नीच, जाति-पाति विभेद को दूर कर क्रान्ति की प्रेरणा दी है ।

10. आशावादी काव्य :-

बच्चन जी ने अपनी निराशा में छिपी हुई आशा को अनेक स्थलों

---

1. बच्चन : खैयाम की मधुशाला §खण्ड-4§ पृ0-41
2. बच्चन : नए-पुराने झरोखे §खण्ड-6§ पृ0-216
3. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रू. 133 पृ0-064
4. वही रू.121 पृ0-062

पर बेबाकी से स्पष्ट किया है- 'आज आशा, कल निराशा फिर हृदय में शून्य सा कुछ-कुछ विरोधी कण समूहों से हुआ निर्माण मेरा । चाहे जो परिस्थितियाँ और परिणाम हो, मेरा जीवन दर्शन है जीना और सृजन करना तथा दूसरों को सृजन करने में हो सके तो, सहायता देना । क्या यह निराशावाद है ? मैं तो 'निशा-निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' पढ़ता हूँ तो मुझे लगता है कि मैं बड़ा बेहया आशावादी हूँ. 'निश्चय था गिर मर जाएगा, चलता रहा किन्तु जीवन भर ।' अथवा 'दे न सको तुम किन्तु बनूँ मैं पाने का अधिकारी ।' .... मैं कहीं भी रूकूँ, मरण या संहार पर नहीं रूकता । वहाँ मैं जाता हूँ । बच्चन जी की निशा-निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' 'आकुल अन्तर इत्यादि कृतियों में पीडा,-विषाद, वेदना, व्यथा, कसक और एकाकीपन का स्वर मुखरित हुआ है । इसी को देखते हुए भ्रमवश कुछ समालोचकों ने उन्हें निराशावादी, पलायनवादी की संज्ञा दे दी । चूँकि कवि की पहली पत्नी श्यामा की मृत्यु के बाद यह स्वाभाविक ही था कि कवि में विषाद एवम् नैराश्य के लक्षण प्रकट होते हैं । उक्त रचनाएं श्यामा जी की मृत्यु के बाद लिखी गई हैं इसलिए हो सकता है कि इन रचनाओं में विषाद वेदना तथा एकाकीपन का भाव प्रकट हुआ है । इसलिये समालोचकों द्वारा उन्हें पलायन-वादी या निराशावादी की संज्ञा देना औचित्य पूर्ण नहीं है । क्यों कि बच्चन ने काव्य में सुख-दुःख, आशा-निराशा, हास-रुदन दोनों का समधर्मी होकर चित्रण किया है । कवि के अनुसार 'जीवन में उल्लास और पीडा दोनों के लिये स्थान है-

'रोदन-गायन दोनों के स्वर, से सधती जग-वीणा की लय ।'[1]

सत्य तो यह है कि- 'उन्होंने निज जीवन की अनुभूतियों को प्रकत रूप में अभिव्यक्ति दी है ।'[2] परिवर्तनशील परिस्थितियों और व्यक्तित्व के

- -

1. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ पृ0-100

अनुरूप ही उनकी काव्य-गंगा की लहरें प्रवाहित होती रहीं । बच्चन के ही शब्दों में- §मेरी कविता§ सदा मेरे जीवन के समकक्ष रही है । जब जैसा मैं अनुभव करता हूँ वैसा ही लिखता हूँ । जीवन ने जब जो अनुभूति मुझे दी है, मैंने उसे काव्यबद्ध किया है ।[1]

कवि की 'सतरंगिनी' और 'मिलनयामिनी' के गीत आस्था, विश्वास, उल्लास, आह्लाद और पूर्णरूपेण आशा के गीत हैं । 'सतरंगिनी' आग से राग के संसार में पदार्पण का बोध कराती है और 'मिलन-यामिनी' राग के संसार को जीने-भोगने की अनुभूति है ।[2]

अपनी आत्मकथा में कवि ने स्वयं दुःख के बाद सुख की परिणति की व्याख्या की है- 'अंधेरा सब दिन छाया नहीं रह सकता । जो अंधकार से लड़ता है वह एक दिन प्रकाश देखता है । प्रकाश को मैंने देख लिया था । जब प्रकाश बादलों के आँसुओं को पार करता है तो इन्द्रधनुष अनुरंजित होता है । .... 'सतरंगिनी' स्वर शब्दों का वह सेतु है जो मैंने अपनी कल्पना और जीवन के बीच में निर्मित किया है ।'[3] 'है अंधेरी रात पर दीवा जलाना कब मना है ?[4] और 'जो बीत गई सो बीत गई'[5] 'सुमुखि, ये अभिसार के पल चल करें अभिसार'[6] 'अंधेरी रात में दीपक जलाये कौन बैठा है ?[7] आदि गीत बच्चन

---

1. सं. बाँकेबिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि — पृ0-65
2. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर §खण्ड-7§ — पृ0-285
3. वही — पृ0-454
4. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ — पृ0-339
5. वही — पृ0-343
6. वही — पृ0-358
7. वही — पृ0-334

के अतीतकालीन विषाद के विरोधी हैं, इन गीतों में आशा ही आशा पल्लवित, पुष्पित होती दीख पड़ती है । कवि का कहना है ऋषियों की अमर वाणी अब भी गूँजती है, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मा अमृतंगमय । मैं भी तमिस्त्रा से, मरण से, पूरी तरह जूझकर ज्योति की ओर, जीवन की ओर जाने को ही भीतर-ही भीतर संघर्ष कर रहा था ।[1] इसलिये 'सतरंगिनी' तम-भरे गम-भरे बादलों के ऊपर इन्द्रधनुष रचने का प्रयास है- अवसाद के अन्धकार से प्रसन्नता की रंगच्छटा में आने का-

काले घनों के बीच में, काले क्षणों के बीच में,
उठने गगन में लो लगी, यह रंग-बिरग विहंगिनी ।
सतरंगिनी, सतरंगिनी ।[2]

कवि के विषय कवि के मुख से- मेरी कविता के विषय हैं मनुष्य के दुख, सुख, शोक, विषाद, हर्ष, विमर्ष, संघर्ष- उसके मन प्राणों का मन्थन । .... अभिनेता मेरी कविता के मंच का केवल इन्सान है- इन्सानियत है- उसकी नियत भी, नियति भी ।[3]

आशावादी कवि 'क्षत शीश मगर नतशीश नहीं'[4] 'अग्निपथ'[5] 'प्रार्थना मत कर'[6] आदि अनेक गीतों में स्वाभिमानी मानव के साथ-साथ आशा का स्वर संचरित हुआ है । 'प्रणय पत्रिका' के गीतों में भी आशा मुखरित हुई है । 'नीड़ का निर्माण फिर-फिर ।' 'नेह का आह्वान फिर-फिर ।'[7] आदि गीतों में कवि की

- -

1. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-307
2. वही पृ0-309
3. वही पृ0-315
4. वही पृ0-308
5. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-246
6. वही पृ0-254

आशा अपने पूर्ण यौवन पर गा रही है, नाच रही है और अपने अस्तित्व का बोध करा रही है । निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि बच्चन के काव्य में जीवन के सभी पक्षों को छुआ गया है कोई भी पक्ष अनछुआ नहीं है । पलायनवादी और निराशावादी जैसे सीमित नाम देकर कवि के आशावाद को नकारना उसके साथ घोर अन्याय है । अपनी प्रबल आशा के सहारे ही बच्चन जी अपने जीवन संघर्षों में भी गीत गाते रहे हैं । गीत गाना ही आशा का स्पष्ट संकेत है ।

11. प्रेम काव्य :-

प्रेम काव्य के अन्तर्गत बच्चन ने प्रणय के दोनों पक्षों संयोग और वियोग को भोगा है और लिखा भी है । मिलन और वह विरह के क्षणों की मादक स्मृतियों में डूबता उतराता कवि संघर्ष में जूझकर भी प्रणय को नहीं भूल पाया सम और विषम सभी परिस्थितियों में कवि ने प्रेम के गीत गाए हैं । कवि को प्रणय की शक्ति पर विश्वास है ।[1] प्रेम पर बच्चन जी संसार निछावर कर देना चाहते हैं-

है निछावर प्रेम पर संसार मेरा ।[2]

प्रेम के प्रति कवि का दृष्टिकोण द्रष्टव्य है- 'भावना प्रेरित कविताएं लिखने के लिए प्रेमानुभूति अनिवार्य है क्यों कि भावों की गहराइयां प्रेमानुभूति में ही छुई जा सकती हैं ।'[3] डॉ॰ विनय से साक्षात्कार के समय बच्चन जी ने प्रेम को अध्यात्म से जोड़ते हुए कहा है- 'प्रेम की अनुभूति ही एक स्तर पर जाकर अध्यात्म की अनुभूति हो जाती है ।'[4] कवि की सर्वाधिक प्रिय पंक्तियाँ भी प्रेम से संबंधित

- -

1. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-26
2. वही पृ0-35
3. बच्चन : टूटी-फूटी कड़ियां §खण्ड-6§ पृ0-426
4. बच्चन : साक्षात्कार §खण्ड-9§ पृ0-64

हैं- "प्यार किसी को करना, लेकिन कहकर उसे बताना क्या ?"[1] नारी के प्रति कवि का दृष्टिकोण स्वस्थ है वह नारी को अपने जीवन की संगिनी मानता है जो सुख:दुःख में उसका सह यात्री की भाँति साथ देती है- 'झलक तुम्हारी मैंने पायी सुख-दुख दोनों की सीमा पर ।'[2] बच्चन जी प्रेम को अजर और अमर मानते हैं- 'संकट-सन्ताप नहीं । प्रेम अजर, प्रेम अमर ।'[3] 'सतरंगिनी' और 'प्रणय-पत्रिका के गीतों में कवि को प्रेम से ही प्रेरणा मिलती है । 'निशा निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत', 'आकुल अन्तर' 'सतरंगिनी', 'मिलनयामिनी', 'प्रणय पत्रिका' इत्यादि कृतियों में कवि ने प्रेम के सभी पक्षों का उद्घाटन किया है ।

प्रथम पत्नी के रूप में श्यामा और श्यामा की मृत्यु के उपरान्त दूसरी पत्नी के रूप में तेजी जी कवि के जीवन में आईं, किन्तु उनके अतिरिक्त कवि के जीवन में चम्पा, §बच्चन के मित्र कर्कल की पत्नी§रानी, §मित्र श्रीकृष्ण की प्रेमिका§ और आइरिस तालिबुद्दीन भी आई थीं, जिनके बारे में कवि ने अपनी आत्मकथा में ईमानदारी और पूर्ण बेबाकी से चित्रण किया है, और कुछ कविताएं भी लिखी हैं ।

'निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अन्तर' के अधिकांश गीत श्यामा जी पर ही लिखे गये हैं । 'सतरंगिनी', 'मिलन यामिनी' और 'प्रणय-पत्रिका' के लगभग सभी गीत तेजी बच्चन से सम्बन्धित हैं । अपनी पत्नी तेजी को सम्बोधित करते हुए एक गीत में कवि के प्रेम का पूर्ण परिपाक द्रष्टव्य

---

1. बच्चन : साक्षात्कार §खण्ड-9§ पृ0-29
2. बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ पृ0-123
3. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-361

है- 'इसी लिये क्या मैंने तुझसे साँसों के सम्बन्ध बनाये, मैं रह-रहकर करवट लूँ तू मुख पर डाल केश सो जाये, रैन अँधेरी, जग जा गोरी, माफ आज की हो बरजोरी, सो न सकूँगा और न तुझको सोने दूँगा, हे मन-बीने ।'[1]

आइरिस तालिबुद्दीन के लिये भी बच्चन जी ने गीत लिखा है- 'तुम्हारे नील झील से नैन, नीर-निर्झर से लहरे केश ।' कवि ने लिखा भी है- 'वह मैं आइरिस के लिए भी कह सकता था, शायद उस कविता को लिखते समय कहीं आइरिस भी मेरे अवचेतन में मौजूद हो- कविता का शीर्षक देने में भी-शायद आपने ध्वनि-साम्य पकड़ा हो- काव्य-सृजन की प्रक्रिया बहुत ही गूढ़, जटिल और रहस्यपूर्ण है ।[2] आइरिस के लिये धर्म परिवर्तन और कवि-कर्म तक को त्यागने के लिये तैयार कवि बच्चन की निम्न पंक्तियाँ प्रेम की पराकाष्ठा को चित्रित करती हैं-

'तुमको कवि के बलिदान निमन्त्रण देते,
तुमको मेरे प्रिय प्राण निमन्त्रण देते ।[3]

रानी के साथ, बच्चन साथ-साथ स्रष्टा-भोक्ता बने थे, उस समय की अनुभूति की अभिव्यक्ति प्रस्तुत उदाहरण में स्पष्ट है-

'अरुण-हाला से प्याला पूर्ण ललकता, उत्सुकता के साथ
निकट आया है तेरे आज सुकोमल मधुबाला के हाथ,
सुरा-सुषमा का पा यह योग नहीं यदि पीने का अरमान,
भले तू कह अपने को भक्त कहूँगा मैं तुझको पाषाण,

- -

1. बच्चन : प्रणय पत्रिका {8} {खण्ड-2} पृ0-97
2. बच्चन : नीड़ का निर्माण फिर {खण्ड-7} पृ0-376
3. वही पृ0-388

हमें लघु मानव को क्या लाज गये मुनि-देवों के मन डोल,
सरसता से संयम को जीत रही बुलबुल डालों पर बोल ।'[1]

चम्पा को कवि ने 'वृक्षपरी'[2] कहा है । स्पष्ट रूप से चम्पा से सम्बन्धित कविता तो नहीं मिलती किन्तु अनेक गीतों से चम्पा-बच्चन के प्रणय-भाव स्पष्ट होते हैं ।

बच्चन जी प्रेम में किसी प्रकार का कोई बन्धन व नियन्त्रण नहीं चाहते- जब करूँ मैं प्यार, हो न मुझ पर कुछ नियन्त्रण,
कुछ न सीमा, कुछ न बन्धन
तब सकूँ जब प्राण प्राणों से करें अभिसार ।[3]

अपनी पत्नी तेजी बच्चन को सम्बोधित निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं- हम किसी के हाथ में साधन बने हैं, सृष्टि की कुछ माँग पूरी हो रही है, हम नहीं अपराध कोई कर रहे हैं, मत लजाओ और देखो उस तरफ भी-

प्राण रजनी भिंच गयी नभ के भुजों में, थम गया है शीश पर निरुपम रूपहरा चाँद, मेरा प्यार बारम्बार लो तुम ।[4] प्यार मानव जीवन की सबसे बड़ी दुर्बलता है ।[5] प्यार से कभी जी नहीं भरता[6] । कवि की वासना शीर्षक कविता में कवि ने प्रेम का विरोध करने वाले विभिन्न आरोपों, प्रत्यारोपों का दो टूक जवाब दिया है । पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-

- -

1. बच्चन : क्या भूलूँ क्या याद करूँ §खण्ड-7§ पृ0-216-217
2. वही पृ0-159
3. वही पृ0-162-163
4. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-56
5. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-253

"कह रहा जग वासनामय हो रहा उद्‌गार मेरा,
कल छिड़ी होगी-खतम कल प्रेम की मेरी कहानी
कौन हूँ मैं, जो रहेगी विश्व में मेरी निशानी ?
क्या किया मैंने नहीं जो कर चुका संसार अब तक ?
वृद्ध जग हो क्यों अखरती है, क्षणिक मेरी जवानी ?
मैं छिपना जानता तो जग मुझे साधू समझता,
शत्रु मेरा बन गया है, छल-रहित व्यवहार मेरा ।
कह रहा जग वासनामय हो रहा उद्‌गार मेरा ।"[1]

बच्चन की प्रणयानुभूति-निजानुभूति है, जो उनके जीवन के साथ बढ़ी, पली, विकसी और उन्मुक्त रही है । उसमें तन की तड़प भी है, मन की मनुहार भी ।[2] कवि के 'सखि यह रागों की रात नहीं सोने की'[3] और 'प्रिय, शेष बहुत है रात अभी मत जाओ ।'[4] आदि गीत प्रेम के संयोग पक्ष का उद्‌घाटन करते हैं । इसीलिये भाभड़ा जी बच्चन के प्रेम में सहज और प्राकृतिक प्रेम के दर्शन करते हैं- 'छायावादी कवियों के स्वप्निल, वायवी प्रेम के विपरीत बच्चन ने सामने आकर प्रेम के सहज और प्रकृति के रूप को खुलकर वाणी दी ।'[5] 'मिलन-यामिनी' के उत्तर भाग में संयोग श्रृंगार के बहुत ही मोहक चित्र प्राकृतिक व्यापारों के द्वारा व्यक्त किये गए हैं- 'समीर कह चला कि प्यार का प्रहर मिली भुजा-भुजा, मिले अधर-अधर, प्रणय-प्रसून सेज पर गया बिखर, निशा सभीत ने कहा कि क्या किया ।[6] कवि ने मिलन के क्षणों के आनन्दोल्लास के

- -

1. बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृ0-129
2. नवलकिशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य पृ0-122-123
3. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-60
4. वही पृ0-61
5. नवलकिशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य पृ0-122
6. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-72

उद्दाम वेग को तथा प्रेम में मान-मनुहार को भी चित्रित किया है ।[1] कवि प्यार की पीर को समझता है साथ ही उनका यह चिर विश्वास है कि प्यार से, प्रिय, जी नहीं भरता किसी का ।'[2] कवि की पूर्व पत्नी श्यामा के रोग-ग्रस्त होने के कारण कवि का मिलन के लिये आतुर प्रेमभाव, तेजी से विवाह होने पर पूर्णता को प्राप्त हुआ । मिलन के क्षणों की आतुरता, मादकता का सांगो-पाँग, वर्णन हमें 'सतरंगिनी', 'मिलन यामिनी' और 'प्रणयपत्रिका' के गीतों में प्राप्त होता है । इन गीतों में मिलन क्षणों की इन्द्रधनुषी आभा दीप्त हो उठी है । तेजी बच्चन से विवाह के पूर्व कवि के जीवन में जो दुख, विषाद, वेदना, क्षोभ, व्यथा, विपन्नता और एकाकीपन की गहन अनुभूतियाँ थीं वे तेजी के मिलन के साथ ही कवि के जीवन से तिरोहित हो जाती हैं और कवि मिलन के आनन्द में झूम उठता है । -

मैं जलन का भाग अपना भोग आया,
तब मिलन का यह मधुर संयोग आया ।[3] और

कवि मिलन के क्षणों को पूर्णरूपेण भोगना चाहता है-

'सुमुखि, ये अभिसार के पल, चल करें अभिसार ।
.....आज तो कह दो कि मेरा बन्द शयनागार ।[4]

कवि का प्रेम सहज, स्वाभाविक और मानवीय धरातल पर प्रशंसनीय है । अपने प्रेम की निश्छल अभिव्यक्ति ही कवि की विशेषता है । किन्तु कवि का प्रेम रीतिकालीन अश्लीलता से निष्कलुष है । संयोग श्रृंगार के प्राकृतिक दृश्यों द्वारा

- -

1. बच्चन : मिलन यामिनी §खण्ड-2§ पृ0-31
2. वही पृ0-38
3. वही पृ0-31
4. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-358

कवि ने प्रेम की व्यंजना की है किन्तु अभद्रता और अश्लीलता लेशमात्र भी कवि की कविता को नहीं छू पाते । अतः डॉ॰ नगेन्द्र की यह पंक्ति निर्विवाद सत्य का उद्घाटन करती है- 'अनुभूति-प्राण होने के कारण बच्चन के गीतों में रागात्मक एकता प्रायः सर्वत्र मिलती है ।[1]

भाभड़ा जी के अनुसार- उसकी विरहानुभूति में तन से मन प्रधान हो गया है, उसमें शुद्ध भावाकुलता अधिक है ।[2] कवि के प्रेम में समर्पण की भावना है ।[3] कवि का प्रेम आदर्श प्रेम है, प्रेम की पराकाष्ठा है- 'प्यार किसी को करना, लेकिन-कहकर उसे बताना क्या ? अपने को अर्पण करना, पर-औरों को अपनाना क्या ?[4] 'प्रेम के क्षेत्र में विविधता श्रेष्ठता एवं निष्ठा की दृष्टि से बच्चन हिन्दी के एक अत्यन्त उत्कृष्ट गीतकार हैं ।'[5] बच्चन ने प्रेम की विभिन्न भाव स्थितियों को अंकित किया है । उसके प्रेम में स्वाभाविकता और मधुरता है । उसका प्रेम शुद्ध मानवीय धरातल पर है और उसने सच्चे हृदय से अपने प्रेम को निश्छलता पूर्वक अभिव्यक्त किया है ।[6] जोशी जी के अनुसार 'बच्चन की संयोग श्रृंगार जैसी सरस पदावली अन्यत्र दुर्लभ है ।[7] 'छायावादोत्तर काल में प्रेम के क्षेत्र में सबसे अधिक स्पष्टवादी कवि बच्चन ही हैं ।'[8] बच्चन ने सशक्त रूप में लौकिक जीवन और प्रेम को सुन्दर और ग्राह्य कहा है । उसने संयोग-वियोग की

- -

1. सं॰ दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृ०-109
2. नवलकिशोर भाभडा : बच्चन : जीवन और काव्य पृ०-124
3. बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-10, 48 पृ०-98, 122
4. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं-। §खण्ड-3§ पृ०-466
5. डॉ॰ आशाकिशोर : आधुनिक हिन्दी गीति काव्य का स्वरूप और विकास पृ०-2
6. डॉ॰ रामेश्वर खण्डेलवाल : आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य पृ०-3
7. डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व पृ०-C
8. डॉ॰ आशाकिशोर : आधुनिक हिन्दी गीति काव्य का स्वरूप और विकास पृ०-2

स्थितियों को 'नार्मल' ढंग से व्यक्त किया है ।[1] इस प्रकार अपने काव्य में बच्चन ने प्रेम के उभयपक्षों का जिये-भोगे-सहे यथार्थ से सामना कराया है । श्रृंगार के दोनों रूपों में उनका हाथ सधा है । वस्तुतः वे प्रेम के कवि इसीलिए कहे जाते हैं क्योंकि उन्होंने जीवन के प्रेम के गीत गाए हैं ।

12. दुःख और वेदनानुभूति का काव्य :-

दुःख के आवश्यक तत्व त्याग और बलिदान मनुष्य को वासना से ऊपर उठाते हैं और संयम तथा मर्यादा का पाठ पढ़ाते हैं जो उसके उत्थान का कारण बनते हैं । यही कारण है कि साहित्य जगत् में वियोग, श्रृंगार तथा करुण रस के कवि दुःख का सहर्ष चित्रण करते हैं । 'गुप्त' जी ने साकेत में उर्मिला को नित्य दुःखी चित्रित किया, महादेवी वर्मा के काव्य में यही दुखवाद अंकित है। अज्ञेय ने दुख को शक्ति देने वाला तथा आत्मा का परिष्कार करने वाला माना है ।[2]

पंत ने भी दुःख से ही कविता की उत्पत्ति स्वीकार की है- वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान, निकलकर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान शैली ने भी दुःख के गीतों को मधुर गान कहा है- अवर स्वीटिस्ट सॉन्ग्स आर, दोज दैट टेल आफ सैडेस्ट थाट-

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भी करुण रस की व्यापकता को स्वीकार किया है । भवभूति करुण को रसराज की संज्ञा से विभूषित करते हैं । प्राचीन

- -

1. विवेचना संकलन §बच्चन की कविता, विश्वंभर मानव§ पृ0-227
   डॉ. के. जी. कदम. : कवि श्री बच्चन :व्यक्ति और दर्शन पृ0-164
2. डॉ. सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-260

साहित्य में क्रौंच-वध से आदि कवि वाल्मीकि की वाणी का मुखर होना भी इसी बात का संकेत करता है । स्वयं बच्चन जी के मुख से गीत सृजन की प्रक्रिया स्पष्ट है- 'मैं रोया, इसको तुम कहते हो गाना, मैं फूट पड़ा, तुम कहते, छन्द बनाना, क्यों कवि कहकर संसार मुझे अपनाये, मैं दुनिया का हूँ एक नया दीवाना।[1] कवि का सलोना नीड़ उजड़ गया सपना टूट गया, संगिनि साथ छोड़ गयी अतः कवि का सर्वांग दुःख और वेदना से नहा उठा । 'निशा निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अन्तर' इसी करुण-रस-स्नान की कुछ बूँदें हैं ।

अपनी पत्नी श्यामा जी की मृत्यु से कवि का जीवन एकाकीपन से घिर जाता है- 'कितना अकेला आज मैं ।'[2] पावस की अंधेरी रात कवि के विरह में साथ देती है ।[3] जब समस्त विश्व स्वप्न के जादू-भवन में खोया हुआ है, तब कवि आँख फाड़े जाग रहा है ।[4] 'निशा-निमन्त्रण' का पहला गीत कवि के सम्पूर्ण दुखः विषाद, विरह, वेदना और एकाकीपन को अपने में समाहित किए है- 'मुझसे मिलने को कौन विकल ? मैं होऊँ किसके हित चंचल ?- यह प्रश्न शिथिल करता पद को, भरता उर में विह्वलता है ।[5] और कवि कराह कर कह उठता है- 'किस पर अपना प्यार चढ़ाऊँ ? यौवन का उद्‌गार चढ़ाऊँ ?'[6] संध्या उपहार और श्रृंगार स्वरूप कवि के कपोलों पर आए आँसूओं को शोणित सा बना जाती है ।'[7] पक्षी को प्रतीक बनाकर कवि ने अपनी व्यक्तिगत वेदना को उड़ेला है-

---

1. बच्चन : मधुबाला : §खण्ड-1§ पृ0-112
2. बच्चन : एकान्त-संगीत §खण्ड-1§ पृ0-257
3. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-176
4. वही पृ0-180
5. वही पृ0-161
6. वही पृ0-188
7. वही पृ0-162

अन्तरिक्ष में आकुल-आतुर, कभी इधर उड़ कभी उधर उड़, पन्थ नीड़ का खोज रहा है पिछड़ा पंछी एक अकेला ।[1] गहन वेदना की असीम अनुभूति में कवि का विरह-विगलित हृदय मृत्यु का वरण करना चाहता है- 'आओ सो जाएं, मर जाएं ।[2] कवि का तन और मन दोनों ही भूखे हैं । अतः वह एकाकी क्षणों में किसी की गोदी में सिर रखकर सोना चाहता है प्यार और आशीष की कामना करता है ।[3]

दुःख से कवि को स्नेह हो गया है उसके बदले वह चिरसुख भी नहीं लेना चाहता- 'साथी, साथ न देगा दुख भी । काल छीनने दुख आता है, जब दुख भी प्रिय हो जाता है, नहीं चाहते जब हम दुख के बदले में लेना चिर सुख भी । साथी, साथ न देगा दुःख भी ।'[4] कवि कभी उल्कापात देखता है[5] कभी टूट रहे तारे को देखता है[6] कभी नदी के पार देहाती गाने का स्वर सुनता है ।[7] कुत्तों का रात-रात भर भोंकना[8] बिल्ली का आउ-आउ कर रोना[9] आदि रात्रि के नीरव वातावरण में कवि की असह्य वेदना को बढ़ा रहे हैं । कवि स्मृति और विस्मृति में डूब रहा है, उतरा रहा है- 'अगणित उन्मादों के क्षण हैं, अगणित अवसादों के क्षण हैं, रजनी की सूनी घड़ियों को किन-किन से आबाद करूँ मैं । क्या भूलूँ क्याद याद करूँ मैं ।[10] कुछ गीतों में अतीतकालीन

- -

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-163
2. वही पृ0-170
3. बच्चन : एकान्त संगीत गीत-4, 5 पृ0-216
4. बच्चन : निशा निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-199
5. वही पृ0-173
6. वही पृ0-173
7. वही पृ0-170
8. वही पृ0-178

स्मृतियाँ बच्चन को वेदना विह्वल कर देती हैं । किन्तु कवि को आश्चर्य है कि उसे सुख भूल गया और दुख याद रहा क्योंकि उसके जीवन में मात्र विषाद शेष रह गया है ।[1] विरह व्यथित हो कवि ने अश्रुपात किया, वही अश्रु गीत-मुक्ताहार बन गए । रुधे गले से बच्चन फिर भी संसार की जय कहते हैं और विश्व को अपना प्यार भरा उपहार देते हैं ।[2]

13. जीवन-संघर्ष का काव्य :-

बच्चन जी की 'निशा-निमन्त्रण' 'एकान्त संगीत' और 'आकुलअंतर' कृतियों में जीवन संघर्ष की, वेदना की जिजीविषा की ध्वनि स्पष्ट है । 'आरती और अंगारे' में बच्चन जी स्वयं स्वीकार करते हैं- 'मैं सदा संसार से लड़ता रहा हूँ, बस यही है हार मुझको, जीत मुझको ।[3] पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों के बाह्य जीवन संघर्षों से कवि का हृदय अपार भावराशि से आपूरित हो गया उसी को कवि अपनी कविताओं में उड़ेलने लगा ।

'बोझ सिर पर, कण्ठ में स्वर'[4] जैसी सशक्त रचनाओं के सृजेता कवि ने जिजीविषा और जीवन-संग्राम के गीत लिखे । 'अग्निपथ' ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ ![5] और 'प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर !'[6] 'अग्नि देश से आता हूँ मैं ।'[7] 'तुम्हारा लौह चक्र आया ।'[8] इत्यादि गीतों में कवि ने जीवन की

---

1. बच्चन : एकान्त संगीत ॥खण्ड-1॥ पृ0-248
2. बच्चन : निशा-निमन्त्रण, गीत-98, 100 ॥खण्ड-1॥ पृ0-200-201
3. बच्चन : आरती और अंगारे ॥खण्ड-2॥ पृ0-249
4. बच्चन : आरती और अंगारे ॥खण्ड-2॥ पृ0-183
5. बच्चन : एकान्त संगीत ॥खण्ड-1॥ पृ0-246
6. वही पृ0-254
7. वही पृ0-248

चुनौतियों का सामना करने की प्रबल प्रेरणा दी है । 'वज्र बनाई छाती मैंने' । चोट करे तो घन शरमाए ।'[1] कवि को दुनिया के हँसने की रत्ती भर भी परवाह नहीं है ।[2] संघर्षरत कवि कभी थकता और थमता नहीं है तो टूटना तो बहुत दूर की बात है । अनायास कवि को एकरशिम[3] मिलती है और कवि अजेय[4] होने का गान करने लगता है । पंत के मत से वे 'प्राणों की ज्वाला तथा जीवन संघर्ष के आत्मनिष्ठ कवि' हैं और उन्होंने 'युग के शंका, विषाद और निराशा के सिंधु को मथकर उसके गरल को अमृत में बदला है ।[5]

> 'वे तूफान और झंझावात के कवि हैं ।'[6]
>
> 'वे अपनी सारी कविता को जग-जीवन और काल के प्रति व्यक्ति का संघर्ष मानते हैं ।'[7]

'स्वतन्त्र भारत के भाल पर इस चिर तरूण कवि ने अपनी वज्रलेखनी से जो, स्वर्ण लेख लिखा है, वह काल प्रवाह के दुर्विनीत झोंकों में भी धूमिल नहीं हो सकेगा ।'[8]

इस प्रकार जीवन के उभय पक्षों- बाह्य और आभ्यन्तर को उन्होंने छुआ है, जिया और भोगा है एवं उसी को वाणी दी है । जीवन के सुख-दुख में समाहित सभी पक्ष बच्चन के काव्य के वर्ण्यविषय हैं, कथ्य है, वस्तु हैं । कुछ भी अनछुआ शेष नहीं हैं ।

---

1. बच्चन : प्रणय पत्रिका {खण्ड-2} पृ0-123
2. वही पृ0-095
3. बच्चन : सतरंगिनी {खण्ड-1} पृ0-298
4. वही पृ0-346
5. सं. बाँकेबिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि पृ0-023
6. डॉ. आशा किशोर : आधुनिक हिन्दी गीति काव्य का स्वरूप और विकास पृ0-
7. डॉ. जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व पृ0-219
8. डॉ. रामरतन भटनागर : साहित्य संदेश, नवं. दिस. 1967 पृ0-203

ख- प्रकृति के विविध रूपों की समीक्षा

नयनोन्मीलन की स्वर्णिम बेला में मनुष्य ने अपने को प्रकृति के सुविशाल प्रांगण में खड़ा पाया । आदि मानव का बाल सुलभ अबोध मन प्रथम परिचय में ही लगाया जा सकता है । सप्राण सावेग उसकी ओर आकृष्ट हो गया । कभी वह उषाकालीन सूर्य की सुनहली चित्रपरी को देखकर आनन्द विभोर होता, कभी वह नील गगन के विशाल वक्षस्थल पर चन्द्र ज्योत्स्ना को देखकर कल्पना लोक में विचरण करने लगता और कभी असंख्य नक्षत्रों को देख कर ईश्वरीय सत्ता का अनुभव कर स्तब्ध हो जाता । निर्जन स्थानों के बीच मर्मर करते हुए कानन और कलकल निनाद के साथ निःसृत होते हुए रजतफेनोज्ज्वल निर्झर उसके हृदय में विचित्र सुषमा साम्राज्ञी का चित्रण करते । पुष्पों की पराग-गन्ध, मेघ-खण्ड की झड़ी, वासन्ती विहंगमों की काकली ने उसका मन मोह लिया, आनन्द से उसका मन-मयूर नाचने लगता, रोम-रोम प्रफुल्लित होने लगता। कभी कोकिल की सुरीली तान, तो कभी खगकुल का कुलकुल शब्द, कभी भौंरों का गुंजन, कभी बसन्त के सुरभित साम्राज्य में विभिन्न पक्षियों की सुरीली रागिनी उसके कर्ण-कुहरों में अमृत की वर्षा करतीं और वह संगीत उसकी रग-रग में समा जाता । वह कभी गगनचुम्बी पर्वतों की हिमाच्छादित श्रृंखलाओं को आश्चर्यचकित होकर देखता, तो कभी अनन्त सागर की उत्ताल तरंगों से भयभीत हो जाता । और कभी निशीथ की नीरवता में स्वभाव चपला विद्युतद्युति को देखकर अनन्त शक्ति के दिव्य स्वरूप की कल्पना कर रोमांचित हो उठता ।

प्रकृति के अनन्त रूप-सौन्दर्य और वैभव को देखकर मानव आत्म-विभोर हो धन्य-धन्य कह उठता है । मानव और प्रकृति का सम्बन्ध उतना ही पुराना है, जितना कि सृष्टि के उदभव और विकास का इतिहास प्राचीन है ।

ममतामयी प्रकृति माँ की गोद में ही मानव शिशु ने आँखें खोली थीं, प्रकृति के अद्भुत क्रिया-कलापों से उसकी हृदयस्थ भावनाओं-भय, विस्मय, प्रेम आदि का प्रस्फुटन हुआ । यह मिश्रित भाव पूजा के रूप में प्रकट हुआ । सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र अपनी विशालता और तेज के कारण और मानव की क्षुद्रता के कारण पूजा के देवता बने । वैदिककाल में प्रकृति का यही रूप हमारे सम्मुख आता है । सौन्दर्य की भावना के साथ-साथ उसकी ओर संशय भी कम नहीं है । उपनिषद काल तक आते-आते साहचर्यगत अनुभवों के कारण उसके प्रति विस्मय और आशंका के भाव सौन्दर्यानुभूति में परिवर्तित होने लगे । शनैःशनैः घनिष्ठता के कारण वह हमारे जीवन का आवश्यक अंग बन गई और हमारे दुःख में उदास और सुख में उल्लासमयी प्रतीत हुई ।

सत्‌रूपी प्रकृति, चित्-रूपी जीव और आनन्द-रूपी परमतत्व-तीनों ही मिलकर सच्चिदानन्द परमेश्वर की सत्ता धारण करते हैं । मानव और प्रकृति के इस अटूट सम्बन्ध की अभिव्यक्ति धर्म, दर्शन, साहित्य और कला में चिरकाल से होती रही है । न जाने हमारे कितने ही कवियों को अब तक प्रकृति से काव्य-रचना की प्रेरणा मिलती रही है । आदि कवि ने प्रकृति के दो सजीव प्राणियों में से एक का वध देखकर इतने आँसू बहाए कि उनसे कितने ही भूर्ज पत्र गीले हो गए और वे आज भी गीले हैं । आषाढ़ के प्रथम बादलों को देखकर कवि-कुल शिरोमणि कालिदास तो इतने भावाभिभूत हो गए कि उनकी अनुभूतियाँ 'मेघदूत' का रूप धारण करके बरस पड़ीं । मध्यकालीन कवियों ने अपनी विरह-गाथा सुनाने के लिये प्रकृति की ओट बार-बार ली है आधुनिक कवियों में भी अनेक को काव्य-रचना की प्रेरणा प्रकृति से मिली है । प्रकृति हमारे कवियों के लिये प्रेरणा का स्त्रोत ही नहीं, आनन्द प्रदायक, सौन्दर्य का अक्षय भण्डार, कल्पना का अद्भुत

लोक, अनुभूति का अगाध सागर, विचारों की अटूट, अभिन्न श्रृंखला भी रही है । जीवनयापन के लिये भी मनुष्य प्रकृति का सबसे अधिक ऋणी है । निष्कर्षतः मानव प्रकृति का आदि सहचर है और प्रकृति उसकी आदिम सहचरी । 'वैज्ञानिकों का विकासवाद और आस्तिकों की अपौरुषेय सृष्टि-कल्पना दोनों ही इस विषय में एकमत हैं कि मानव ने प्रकृति के विशालक्रोण में जन्म धारण किया और उसके साहचर्य में चेतना को क्रमशः विकसित किया । वृक्षों ने फल दान द्वारा और निर्मल निर्झरों ने शीतल जल द्वारा मानव की सहज कृतियों का भी समाधान किया । फलतः मानव का प्रकृति के प्रति स्वाभाविक रूप से चिर-साहचर्य स्थापित हो गया। ....और उसकी चिर-सहचरी प्रकृति के विभिन्न रूप उसके अंतरंग मित्र बन गए ।'[1] इस प्रकार प्रकृति की सभी विशेषताओं का प्रभाव कवि के मानस-क्षितिज पर अंकुरित रहता है जिसकी अभिव्यक्ति देने के लिये वह बाध्य हो जाता है, इस लिये कोई भी कवि हो वह न्यूनाधिक रूप में प्रकृति चित्रण करने के लिए बाध्य होता है । यही कारण है कि कालिदास, भवभूति, बाणभट्ट, शैक्सपियर, मिल्टन, वर्ड्सवर्थ, सूर, तुलसी, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पन्त तथा अद्यतन सभी कवियों ने अपने-अपने ढंग से अपने-अपने काव्यों में प्रकृति को रूपायित किया है । प्रकृति भी विविध रूपा है, जिसके स्पष्टतः दो रूप दृष्टिगत होते हैं- §क§ सृजनात्मक §ख§ प्रचण्ड और ध्वंसात्मक । सच्चा प्रकृति-प्रेमी कवि अथवा कलाकार प्रकृति के सभी रूपों- कोमल, प्रचण्ड आदि- पर मुग्ध होता है और उनको काव्य में स्थान देता है । आचार्य शुक्ल का निम्नलिखित कथन इसी तथ्य की पुष्टि करता है- "भीषणता और सरसता, कोमलता और कठोरता, कटुता और मधुरता, प्रचण्डता

- -

1. डॉ. किरण कुमारी गुप्ता, हिन्दी काव्य में प्रकृति-चित्रण पृ0-37

और मृदुता का सामंजस्य ही लोक-धर्म का सौन्दर्य है ।"[1]

'प्रकृति' शब्द की व्युत्पत्ति और उसकी भारतीय-पाश्चात्य परिभाषाओं को स्पष्ट करना, हमारा विषय नहीं है अतः हम प्रकृति के विभिन्न रूपों की झाँकियाँ जिन पर बच्चन जी मुग्ध हुये हैं, उन्हीं का मूल्यांकन करने का प्रयास करूँगी । मानव सौन्दर्य का पुजारी है और प्रकृति सौन्दर्य की अक्षय आगार है । बच्चन जी की रचनाओं में प्रकृति अपने सारे रंग-रूपों, सारी मुद्राओं में सारे साभार के साथ आई है किन्तु प्रकृति के प्रति जो असीम अनुराग छायावादी कवियों में दृष्टिगत होता है उसका लगभग एकान्त अभाव बच्चन काव्य में पाया जाता है ।

'बच्चन' जी छायावाद-युग के होते हुए भी छायावादी कवि नहीं हैं । उन्होंने स्थूल के प्रति विद्रोह नहीं किया, स्थूल को सूक्ष्म का आकार दे दिया .... बाह्य प्रकृति से अधिक आभ्यान्तर प्रकृति को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया । प्रकृति का बाह्य सौन्दर्य, उसका अनुराग और आकर्षण उनके काव्य में भावना की अवैयक्तिक और निरपेक्ष स्थिति में शायद ही कहीं विद्यमान हो ।[2] इसका मुख्य कारण बच्चन के शब्दों में दृष्टव्य है- "प्रकृति पर मैं कविता लिखता ही नहीं ।"[3] इसके अतिरिक्त 'एकान्त संगीत' में 'अपने पाठकों से' में कवि ने स्वयं स्वीकार किया है कि '.... .प्रकृति चित्रण को सृजन का लक्ष्य बनाना तो दूर, प्रमुखता देना भी कभी मेरा ध्येय नहीं रहा ।'[4] डॉ॰ सियाराम शरण

---

1. चिन्तामणि §पहला भाग§, आचार्य शुक्ल, पृ0-216
2. कल्याणमल लोढ़ा : लोकप्रिय बच्चन, प्रो॰ दीनानाथ शरण, पृ0-018
3. वही पृ0-012
4. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-209

प्रसाद के शब्दों में '.....मैं इसे बच्चन की ईमानदारी मानता हूँ । बच्चन ने जिन दृश्यों, छवियों और रस को नहीं ग्रहण किया, नहीं देखा, उसे उनकी ईमानदारी काव्य में कैसे उतरने देती । यहाँ कवि की ईमानदारी ही प्रमुख है ।[1] बच्चन जी तो जीवनानुभूतियों के सच्चे कवि हैं ।

प्रकृति-प्रेम के प्रति कवि की सपाट बयानी कितनी सच्ची है देखिए- 'प्रकृति-प्रेम के संस्कार मुझमें जागे ही नहीं । याद नहीं पड़ता कि किसी स्थान के प्राकृतिक सौन्दर्य से आकर्षित होकर मैं उसे देखने गया हूँ ।'[2] कवि का हृदय प्रकृति से सीधे प्रभावित नहीं होता 'नए पुराने झरोखे' में उन्होंने स्पष्ट लिखा है "प्रकृति का निरीक्षण मैंने नहीं किया, सिवा इसके कि ऊपर आसमान है, जहाँ रात को तारे निकलते हैं उसी में कहीं से बादल छा जाते हैं । सूर्योदय और सूर्यास्त मेरे लिये मकानों के पीछे से हुआ है । जब कभी प्रकृति के समीप गया ही हूँ तो अपनी भावनाओं से इतना अतिरंजित कि उसमें भी मुझे अपनी भावनाओं की ही छाया दिखाई दी ।"[3]

यद्यपि बच्चन जी ने प्रकृति के प्रति विशेष आकर्षण का अनुभव नहीं किया फिर भी उनकी कविताओं में प्रकृति अपने इन्द्र धनुषी रंगों में सर्वत्र अपनी सौन्दर्य राशि को विकीर्ण कर रही है । कवि सौन्दर्य-बोध से पूर्णतः परिचित है अतएव कवि की लेखनी से प्रकृति के स्वतः ही मनोरम चित्र बन पड़े हैं । यत्र-तत्र कवि ने प्रकृति का इतनी ललक भरी आत्मीयता और बारीकी से पर्यवेक्षण किया है कि उनकी अनुभूति से प्रकृति अपने पूर्ण यौवन में नर्तन करने लगती है । बच्चन के गीतों

- -

1. डॉ. सियाराम शरण प्रसाद : लोकप्रिय बच्चन, प्रो. दीनानाथ शरण पृ0-34
2. बच्चन : नए पुराने झरोखे {खण्ड-6} पृ0-288
3. वही पृ0-212

में प्रकृति के मानव-सापेक्ष चित्र ही पाए जाते हैं- उसके स्वतंत्र व आलंबनगत चित्र नहीं हैं। फिर भी बच्चन जी के काव्य में प्रकृति का सौन्दर्य अपनी निजी सत्ता को स्थापित करता है।

बच्चन जी ने प्रकृति के विशुद्ध आलंबन रूप का कम ही चित्रण किया है उनका अधिकांश प्रकृति चित्रण मानव जीवन की विभिन्न मनःस्थितियों का उद्घाटन करने से सम्बन्धित है। फिर भी अपनी खट्टी मीठी, भूली बिसरी सुधियों में डूबता-उतराता कवि जहाँ भी भावातिरेक में बह चला है वहीं प्रकृति के अनुपम आलंबनगत चित्र हमें देखने को मिलते हैं-

सन्ध्या सिन्दूर लुटाती है।
रंगती स्वर्णिम रज से सुन्दर
निज नीड़-अधीर खगों के पर,
तरुओं की डाली-डाली में कंचन के पात लगाती है।
सन्ध्या सिन्दूर लुटाती है।
करती सरिता का जल पीला,
जो था पल भर पहले नीला,
नावों के पालों को सोने की चादर-सा-चमकाती है।
सन्ध्या सिन्दूर लुटाती है।[1]

उक्त गीत में कवि ने सन्ध्या का मनोहारी चित्रण किया है। कवि ने रंगसाम्य स्थापित करते हुए सायंकाल का बिंबात्मक वर्णन किया है।

बच्चन ने प्रकृति के विविध रूप-व्यापार, सर-सरिता, निर्झर-सागर, नभ-घटा, तरुवर-पक्षी आदि का बहुत बारीकी से चित्रण किया है -

---

1. बच्चन : निशा निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-4 पृ0-162

यथा-

श्यामा तरु पर बोलने लगी ।
है अभी पहर भर शेष रात,
है पड़ी भूमि हो शिथिल-गात
यह कौन ओस-जल में सहसा मिश्री के कण घोलने लगी ?
श्यामा तरु पर बोलने लगी ।
दिग्वधुओं का मुख तमाच्छन्न
अब अस्फुट आभा से प्रसन्न,
यह कौन उषा का अवगुण्ठन गा-गाकर के खोलने लगी ?
श्यामा तरु पर बोलने लगी ।[1]

वर्षा ऋतु में भीगते हुए भुवि के आँगन और वृक्षों का चित्रण द्रष्टव्य है-

भीग रहा है भुवि का आँगन ।
भीग रहे हैं पल्लव के दल,
भीग रहीं हैं आनन डालें,
भीगे तिनकों के कुंजों में भीग रहे हैं पंछी अनमन ।
भीग रहा है भुवि का आँगन ।[2]

कवि की प्रारंभिक रचनाओं में कोयल, मध्यान्ह, चुम्बन, मधुकर, कलियों से, झूला आदि कविताओं में प्रकृति का आलंबनगत वर्णन देखने को मिलता है ।[3]

'भ्रातृ द्वितीया' कविता में कवि ने मानवीय सम्बन्धों के द्वारा व्योम और उषा को भाई बहन के कोमल और मधुर सम्बन्ध से चित्रित किया है-

---

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-73 पृ0-190
2. बच्चन : आकुल : अन्तर §खण्ड-1§ गीत-58 पृ0-293
3. बच्चन : प्रारंभिक रचनाए §खण्ड-3§ §भाग-1§

"बन्धु-व्योम प्राची-मस्तक पर छायी थी जब अँधियाली,
ऊषा-भगिनी ने आकर दी उस पर टीके की लाली ।
पुलकित होकर दिया व्योम ने तारक मणियों का उपहार,
ग्रहण किया ऊषा ने हर्षित हो निज अंचल धवल पसार ।

'पल्लव से', 'भेंट के फूलों से', 'सौन्दर्य सुख', 'जौहरी', 'कल्पना' 'विरव' 'प्रवंचना', 'उपवन', 'ग्रीष्म बयार', 'गीत विहंग', 'गान बाल', 'माली से', 'माली', 'सुमन चयन' आदि कविताओं में सुन्दर प्रकृति-चित्रण है ।[1] प्रकृति के कमनीय रूप का चित्रण करते हुए कवि पृथ्वी से आकाश तक देखता है और विभिन्न रंगों से रंगी हुई सम्पूर्ण प्रकृति को देखकर होली खेलने के लिये मचल उठता है-

अम्बर ने ओढ़ी है तन पर चादर नीली-नीली,
हरित धरित्री के आँगन में सरसों पीली-पीली,
सिन्दूरी मंजरियों से है अम्बा शीश सजाये,
रोलीमय सन्ध्या-ऊषा की चोली है ।
तुम अपने रंग में रंग लो तो होली है ।[2]

प्रकृति के केवल कमनीय रूपों पर ही कवि मुग्ध नहीं है वह प्रकृति के भयंकर और रौद्र रूप का भी चित्रण पूरे उत्साह के साथ करता है-

वह नभ कम्पनकारी समीर,
जिसने बादल की चादर को दो झटके में कर तार-तार,
दृढ़ गिरि श्रृंगों की शिला हिला, डाले अनगिन तरुवर उखाड़,
होता समाप्त अब वह समीर कलि की मुसकानों पर मलीन !
वह नभ कम्पनकारी समीर ।
वह जल प्रवाह उद्धत-अधीर,

---

1. बच्चन : प्रारंभिक रचनाएं भाग-2 §खण्ड-3§

2. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-14 पृ0-100

जिसने क्षिति के वक्षस्थल को निज तेजधार से दिया चीर,
कर दिये अनगिनत नगर-ग्राम-घर बेनिशान कर मग्न-नीर,
होता समाप्त अब वह प्रवाह तट-शिला-खण्ड पर क्षीण-क्षीण ।
वह जल प्रवाह उन्मत्त-अधीर ।[1]

इस प्रकार प्रकृति बच्चन के भावों की भावप्रवण सहचरी बनकर प्रकट हुई है । कवि के मधुकाव्य में मधुर मस्ती के साथ प्रकृति भी मधुमय हो गई है । वियोग काव्य में प्रकृति वेदना के क्षणों में संवेदनशील हो उठी है । निशा-निमंत्रण का सम्पूर्ण प्रकृति-चित्रण इसी संवेदना की पुष्टि करता है । मिलन के मधुर क्षणों में सारी प्रकृति कवि के प्रणय से राग-रंजित है ।[2] डॉ॰ सुधा बहन पटेल बच्चन के प्रकृति-चित्रण को मांसल अभिव्यक्तियों के सन्दर्भ में उचित मानती हैं- 'जीवन की मांसल, अभिव्यक्तियों के संदर्भ में प्रकृति-चित्रण मोहक और समीचीन जरूर है ।'[3] डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी भी इसी प्रकार का आक्षेप लगा रहे हैं- यद्यपि अलंकरण विधान की दृष्टि से बच्चन का प्रकृति चित्रण किसी विशिष्टता का आभास नहीं देता किन्तु पृष्ठभूमि के रूप में प्रकृति ने बच्चन की मांसल अनुभूति को अभिव्यक्ति के नूतन आयाम प्रदान किये हैं ।'[4]

कवि ने प्रकृति के उपादानों में मानवीय चेतना के दर्शन किये हैं । प्रकृति के साथ उसके सम्बन्ध जड़ नहीं अपितु जीवन्त हैं-

सर में जीवन है, इससे ही वह लहराता रहता प्रति पल,
सरिता मे जीवन, इससे ही वह गाती जाती है कल-कल,[5]

- -

1. बच्चन : आकुल-अन्तर §खण्ड-1§ गीत-22 पृ0-276
2. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ पृ0-68-79
3. डॉ॰ सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-259
4. डॉ॰ जीवन प्रकाश जोशी, बच्चन व्यक्तित्व और कवित्व पृ0-045
5. बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृ0-125

कहींतो कवि ने प्रकृति के शुद्ध आलम्बनत्व का निर्वाह किया है और कहीं अपनी भावना के अनुरूप ही प्रकृति को चित्रित किया है । कवि के जीवन में मादकता की जो लहर है, वह प्रकृति के किसी भी रूप को किसी भी व्यापार को सदैव स्वतन्त्र नहीं छोड़ सकती ।[1]

भाभडा जी बच्चन की प्रकृति को उनकी अनुभूति का जीवन्त अंग मानते हैं- 'बच्चन के काव्य मंच पर विभिन्न भाव नटों के बदलते ही प्रकृति के रंगमंच की भी सारी सज्जा बदल जाती है । प्रकृति उनकी अनुभूति का जीवंत अंग है । उनकी अभिव्यक्ति का प्रमुख माध्यम है । विराट प्राकृतिक सत्यों के साथ बच्चन ने अपनी अनुभूति का तादात्म्य कर लिया है । प्रकृति की यह आनुभूतिक तरलता बच्चन के काव्य की बहुत बड़ी विशेषता है ।[2] कहीं-कहीं कवि के अभिसार के पलों में प्रकृति भी उद्दाम वासना से भर गई है ।[3] इस प्रकार हम देखते हैं कि बच्चन ने प्रकृति के कोमल, कमनीय तथा कठोर और रौद्र रूप का चित्रण किया है। कवि ने प्रकृति का विशुद्ध आलंबन रूप का पर्याप्त चित्रण किया है । अनेक आलोचकों का मानना है कि बच्चन ने प्रकृति के आलंबन रूप का चित्रण नहीं किया लेकिन उनके द्वारा लगाया गया यह आरोप निराधार है क्योंकि प्रारंभिक रचनाओं से लेकर 'निशा-निमन्त्रण', 'सतरंगिनी', 'प्रणय-पत्रिका' और 'मिलन-यामिनी' में अनेक स्थलों पर कवि ने प्रकृति का आलंबनगत चित्रण किया है । 'बंगाल का काल' जो कवि की मुक्त छन्द की रचना है जिसमें अकाल की भयानक विभीषिका का चित्रण है, वहाँ भी कवि बंगाल की शस्य श्यामला, धान और फलों से भरित-पूरित

- -

1. डॉ॰ लक्ष्मीनारायण सुधांशु : बच्चन का काव्य विकास, लोकप्रिय बच्चन- सं॰ दीनानाथ शरण, पृ0-28
2. नवलकिशोर भाभडा : बच्चन : जीवन और काव्य पृ0-131
3. बच्चन : प्रणय-पत्रिका, मिलनयामिनी §उत्तर भाग§ §खण्ड-2§

वसुन्धरा की रमणीय झाँकी प्रस्तुत करने में पीछे नहीं हटा ।[1]

प्रकृति का उद्दीपक वातावरण कवि के अंतस्थल को उद्दीप्त करने लगता है और वह अनायास ही पूँछ उठता है-

'क्या था उस मादक लाली में, क्या उस मोहक हरियाली में,
जिससे छाती में तीर चुभे, जिससे अन्तर में चाह जगी ।
सहसा बिरवों में पात लगे, सहसा बिरही की आग जगी ।'[2]

प्रकृति को उद्दीपन स्थिति में तो कितने ही कवियों ने उपस्थित किया है, किन्तु एक बिरही के हृदय और जल भरे बादल की स्थिति का साम्य-वैषम्य निम्नांकित पंक्तियों से सुन्दर अन्यत्र नहीं मिलेगा -

आज मुझसे बोल, बादल ।
तम-भरा तू, तम-भरा मैं,
गम-भरा तू, गम-भरा मैं,
आज तू अपने हृदय से हृदय मेरा तोल, बादल !
आज मुझसे बोल, बादल ।[3]

वियोग के क्षणों में कवि ने प्रकृति का उद्दीपनकारी चित्रण किया है प्रायः उद्दीपन रूप में चित्रण रात्रि के समय के ही बन पड़े हैं क्योंकि नीरव-निशीथ में नितान्त एकान्त बैठकर कवि का हृदय हाहाकार कर उठता है-

आज खड़ी हो छत पर तुमने होगा चाँद निहारा ।
फूट पड़ी होगी नयनों से सहसा जल की धारा ।
इसके साथ जुड़ी जीवन की कितनी मधुमय घड़ियाँ
यह चाँद नया है, नाव नई आशा की ।[4]

---

1. बच्चन : बंगाल का काल §खण्ड-1§ पृ0-418-419
2. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ गीत-7 पृ0-45
3. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-42 पृ0-177
4. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-26 पृ0-107

कवि हृदय अपने अकेलेपन पर रो-रो उठता है-

अंधकार से मैं घिर जाता,
रोना ही रोना बस भाता
ध्यान मुझे जब-जब यह आता-
दूर हृदय से कितने मेरे, मेरे जो सबसे प्यारे भी ।
नभ में दूर-दूर तारे भी ।[1]

पावस की रंगीली साँझ को देखकर कवि अपनी अतीत की गलियों में भटकने लगता है और साँझ के रमणीय स्वर्णिम रूप को देखकर कवि की आँखें नम होने लगती हैं और वह अपनी प्रियतमा की स्मृति में डूब जाता है-

इन्द्रधनुष की आभा सुन्दर
साथ खड़े हो इसी जगह पर
थी देखी उसने औ' मैंने-सोच इसे अब आँखें गीली ।
यह पावस की साँझ रंगीली ।[2]

चाँदनी रात में कवि की भावनाएं कवि के मन को उद्दीप्त कर रही हैं और आह-दाह में कवि बरबस कह उठता है-

'भूमिका उर तप्त करता चन्द्र शीतल,
व्योम की छाती जुड़ाती रश्मि कोमल,
किन्तु भरतीं भावनाएं दाह मन में,
चाँदनी फैली गगन में चाह मन में ।[3]

कवि अपने कल्पित साथी से न सोने का आग्रह कर रहा है- साथी, सो न, कर कुछ बात ! बोलते उडगण परस्पर, तरु दलों में मन्द 'मरमर', बात करतीं सरि-लहरियाँ कल से जल-स्नात । साथी, सो न, कर कुछ बात ।[4]

- -

1. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ गीत-8 पृ0-218
2. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-13 पृ0-166
3. बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ गीत-1 पृ0-23
4. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-36 पृ0-175

प्रकृति के उद्दीपन रूप की चरम अभिव्यक्ति निम्नलिखित पंक्तियों में की जा सकती है-

> क्या भूलूँ, क्या याद करूँ मैं ।
> अगणित उन्मादों के क्षण हैं,
> अगणित अवसादों के क्षण हैं,
> रजनी की सूनी घड़ियों को किन-किन से आबाद करूँ मैं ।
> ....क्या भूलूँ, क्या करूँ मैं ।[1]

बच्चन जी की कृतियों में मानवीकरण अपने पूर्ण वैभव के साथ दृष्टिगत होता है । प्रकृत्याश्रित मानवीकरण के ढेरों कमनीय और रमणीय रूप-बिम्ब बच्चन के काव्य में दृष्टिगोचर होते हैं । सन्ध्या के चल बसने पर क्षितिज ने एक गहरी साँस लेकर संध्या की सुनहरी साड़ी को छोड़ दिया-

> चल बसी सन्ध्या गगन से ।
> क्षितिज ने ली साँस गहरी
> और सन्ध्या की सुनहरी
> छोड़ दी सारी, अभी तक था जिसे थामे लगन से ।
> चल बसी सन्ध्या गगन से ।[2]

तथा- 'जैसे, प्रकृति ने ली विदा दिन के पवन से ।[3] अब निशा नभ से उतरती ।[4] और घन तिमिर में अपना मुख छिपाकर रात रो रही है-

आज रोती रात, साथी !
घन तिमिर में मुख छिपाकर, है गिराती अश्रु झर झर-[5]

---

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-92 पृ0-197
2. वही गीत-6 पृ0-163
3. वही पृ0-163
4. वही गीत-9 पृ0-164
5. वही गीत-43 पृ0-178

मानवीकरण की पराकाष्ठा 'मिलनयामिनी के उत्तरार्द्ध के गीतों में बहुत सुन्दर व आकर्षक बन पड़ी है- जैसे-

किरण छिपी तड़ाग-अन्तराल में,
सिमट गयी सरोजिनी मृणाल में.[1] एक अन्य दृश्य

"बसन्त-दूत कुंज-कुंज कूकता,
बसन्त-राग कुंज-कुंज फूँकता,
पराग से सजी सुहाग मंजरी
बसन्त गोद में लसी प्रकृति परी ।"[2]

'मिलन-यामिनी' के उत्तरार्द्ध के गीतों में कवि ने जो प्रकृति का मानवीकरण किया है वह संयोग कालीन है । यत्र-तत्र कवि ने अपने मिलन-स्वप्नों को प्राकृतिक व्यापारों के द्वारा व्यक्त किया है । कुछ गीतों में संयोग चित्रों एवं मिलन की उद्दाम भावना चित्रित है । अभिसार चित्रों में प्रकृति कवि की भाव सहचरी बनकर मिलन के रंगों मे रंग गई है । प्रणयराग और प्राकृतिक रंगों का अद्भुत सम्मिश्रण है । प्रकृति के साथ गहन तादात्म्य इन गीतों की मुख्य विशेषता है-

'समीर कह चला कि प्यार का प्रहर,
मिली भुजा-भुजा, मिले अधर-अधर,
प्रणय-प्रसून सेज पर गया बिखर,
निशा सभीत ने कहा कि क्या किया ।[3]

मानवीकरण की इस विम्ब-प्रतिबिम्ब योजना में बच्चन ने रूप, रंग दृश्य और क्रिया साम्य पर विशेष ध्यान दिया है । डॉ॰ मृदुला गुप्ता के विचार बच्चन के प्रकृति-चित्रण के सन्दर्भ पर इस प्रकार हैं- 'बच्चन प्रकृति के जड़ स्वरूप की

---

1. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ गीत-18 पृ0-74
2. बच्चन : वही गीत-09 पृ0-71
3. बच्चन : वही गीत-12 पृ0-72

अपेक्षा उसके चेतन स्वरूप को अधिक महत्त्व देते हैं । ...... इसीलिए प्राकृतिक वस्तुओं की स्पर्श-संवेदना तथा मानवीय स्पर्श की मांसल अनुभूति के सर्वाधिक चित्र बच्चन के काव्य में उपलब्ध होते हैं ।'[1]

उपमान रूप में प्रकृति चित्रण करना चिर पुरातन और चिर नवीन है कवियों ने प्रकृति से एक से एक अधिक आकर्षक तथा रागोत्प्रेरक उपमान ढूँढ निकाले हैं । मधुशाला का एक चित्र द्रष्टव्य है-

> यज्ञ-अग्नि सी धधक रही है मधु की भट्ठी की ज्वाला,
> ऋषि सा ध्यान लगा बैठा है हर मदिरा पीने वाला,
> मुनि-कन्याओं सी मधु घट ले फिरतीं साकी बालाएं,
> किसी तपोवन से क्या कम है मेरी पावन मधुशाला ।'[2]

नील-नेत्रों को देखकर कवि कह उठता है-तुम्हारे नील झील-से नैन, नीर निर्झर-से लहरे केश ।[3]

कवि ने अपने को बाण बिद्ध मराल के समान कहा है ।[4] आशा की लतिकाएं आकुल-व्याकुल सी हैं ।[5] कवि ने अपने प्यार को प्रात-मुकुलित फूल-सा कहा है- प्रात मुकुलित फूल-सा है प्यार मेरा ।[6]

बच्चन जी ने आलंकारिक रूप में भी प्रकृति का विशद वर्णन किया है । शब्दालंकार और अर्थालंकार के लगभग सारे रूपों को उन्होंने स्पर्श किया है । अलंकारों पर भाषा एवं शिल्प के अध्याय मे विस्तृत वर्णन है ।

---

1. डॉ॰ मृदुला गुप्ता : बच्चन के काव्य में बिम्ब योजना पृ0-45, 49
2. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रुबाई-54 पृ0-52
3. बच्चन : प्रणय पत्रिका §खण्ड-2§ गीत-39 पृ0-115-116
4. वही गीत-48 पृ0-122
5. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ गीत-12 पृ0-49
6. वही गीत-24 पृ0-34

अन्योक्ति रूप में बच्चन ने यत्र-तत्र प्रकृति चित्रण किया है यथा- कमल अब तू सड़ रहा है । तू सरोवर की सतह पर । एक चूल्हा पोतने के पोतने-सा । रूप-संज्ञा-रंग-प्रतिहत । प्राणगत शव की तरह । उतरा रहा है ।[1]

अत्यधिक भावावेग प्रतीकों के माध्यम से ही प्रकट हो पाता है । सामान्य शब्द उस क्षण अपर्याप्त सिद्ध होते हैं । ये प्रतीक अधिकांशतः प्रकृति से ही लिए गए होते हैं । कुछ कविताएं तो प्रतीकों के माध्यम से ही रूप तथा आकार प्राप्त कर पाई हैं । प्रतीक उतने ही पुराने हैं जितनी पुरानी भाषा है। संभवतः मनुष्य प्रथम बार और फिर इसी प्रकार सबसे अन्तिम बार प्रतीकों में ही बोलता है ।

भावना या विचार भी जब सम्यक प्रतीकों में ढलकर निकलते हैं, तो उनकी प्रेषणीयता और भी अधिक सटीक और गहन होती है । 'जीवन के सबसे गहरे सत्य, प्रतीकों में बोला करते हैं ।[2] प्रतीक किसी अदृश्य, अमूर्त व जटिल भाव-विचार का उदबोधन करने वाला मूर्त संकेत हैं ।

बच्चन जी के काव्य में प्रकृति का प्रतीकात्मक रूप से चित्रण अनेक स्थानों पर हुआ है । उनके प्रतीक सांकेतिकता औरसूक्ष्म प्रेषणीयता की दृष्टि से बहुत सफल हैं- सौ सुधारकों का करती है, काम अकेली मधुशाला ।[3]
यहाँ मधुशाला सुधारकों के रूप में प्रयुक्त है ।

'प्याला' क्षणभंगुर जीवन का प्रतीक है- 'मिट्टी का तन मस्ती का मन । क्षण भर जीवन, मेरा परिचय ।'[4]

---

1. बच्चन : त्रिभंगिमा §खण्ड-2§ सड़ा हुआ कमल पृ0-446
2. बच्चन : जाल समेटा पृ0-395
3. बच्चन : मधुशाला §खण्ड-1§ रु. 57 पृ0-053
4. बच्चन : मधुबाला §खण्ड-1§ प्याला पृ0-095

'रात-रात भर श्वान भूँकते[1] और 'रो, अशकुन बतलाने वाली । 'आउ-आउ' कर किसे बुलाती ?[2] यहाँ पर 'श्वान भूँकते' और 'आउ-आउ' करने वाली बिल्ली क्रमशः अतृप्त अरमानों और आगत मृत्यु की आशंका के प्रतीक हैं ।

बच्चन की कविताओं में प्रायः चिड़िया को मानव जीवन के कर्म साधनारत अस्तित्वबोध के रूप में प्रयुक्त किया गया है- एक चिड़िया चोंच में तिनका लिये जो जा रही है । वह सहज में ही पवन उनचास को नीचा दिखाती है ।[3] 'टहनी पर बैठी गौरैया । चहक-चहक कर कहती, भैया । नहीं कड़कते बादल का ही, मेरा भी अस्तित्व यहाँ है ।'[4]

'अंतरिक्ष में आकुल-आतुर । कभी इधर उड़, कभी उधर उड़ । पंथ नीड का खोज रहा है पिछड़ा पंछी एक-अकेला ।'[5]

पहले उदाहरण में चिड़िया की जिजीविषा द्रष्टव्य है । उसमें इतना साहस है कम से कम इतना आत्मविश्वास है कि वह प्रबल झंझावातों को चीरकर अपने गन्तव्य पर पहुँच सकती है । तिनका उसकी संघटनात्मक शक्ति का प्रतीक है । दूसरे उदाहरण में गौरैया अपने अस्तित्व के प्रति पूर्णतः सचेत है । बादल का अपना अलग अस्तित्व है और गौरैया का अपना अलग अस्तित्व है । बादल की कड़क के बीच भी उसकी प्रसन्नता लुप्त नहीं हो पाती । तीसरे उदाहरण में पक्षी अंतरिक्ष में- अनंत आकाश में व्याकुल है । उसका कभी इधर उड़ना, कभी उधर उड़ना अतिशय व्याकुलता का परिचय देता है । अकेलेपन में भी नीड़ ढूँढ़ने में निरत है ।

---

1. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-44 पृ0-178
2. वही गीत-45 पृ0-178
3. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-349
4. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ गीत-78 पृ0-192
5. वही गीत-05 पृ0-163

वह एकदम अकेला है फिर भी उसके डैने बोझिल नहीं होते । यह आवश्यक नहीं कि उसका नीड़ मिल जाए किन्तु वह लगातार बढ़ा चला जा रहा है । उसका लगातार नीड़ को खोजते रहना अधिक महत्वपूर्ण है । बच्चन का व्यक्तिवाद संघर्ष से भागता नहीं वह जीवन और अस्तित्व का उद्घोषनाद करता है ।

बच्चन के काव्य में- गुलहजारा-श्यामा[1] कोकिल-पपीहा-प्रणयराग ।[2] मयूरी-परिणीता[3]-नागिन-प्रमदा[4] हंस-जीव[5] इन्द्रधनुष-उल्लास[6] बादल-दुःख[7] शैल विहंगिनी-उन्मुक्त स्वच्छन्दता[8] चील-कौए[9]-नग्न यथार्थ के प्रतीक हैं । इसी प्रकार के प्रतीकों द्वारा बच्चन ने अपनी भावधारा को अच्छी तरह अभिव्यक्ति दी है। सुधाबहन पटेल के शब्दों में- 'बच्चन जी भले ही पंत जी की तरह प्रकृति के सफल चितेरे न हों किन्तु प्राकृतिक प्रतीकों के द्वारा मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति करने में बहुत प्रवीण हैं ।[10]

प्रकृति को नारी रूप में चित्रित करने की भी आधुनिक कवियों की परम्परा है । बच्चन के काव्य में प्रकृति नारी रूप में अनेक स्थलों पर चित्रित की गई है- प्राण रजनी भिंच गई नभ की भुजों में ।[11] और 'शिथिल पड़ी है नभ की बाहों में रजनी की काया ।'[12]

- -

1. बच्चन : मधुकलश §खण्ड-1§ पृ0-146-147
2. बच्चन : मिलनयामिनी §खण्ड-2§ गीत-06 पृ0-044
3. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-337
4. वही पृ0-334
5. बच्चन : प्रणय-पत्रिका §खण्ड-2§ पृ0-117-122
6. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-327
7. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-177
8. बच्चन : बुद्ध और नाचघर §खण्ड-2§ पृ0-317
9. वही पृ0-323
10. डॉ. सुधाबहन पटेल : बच्चन : जीवन और साहित्य पृ0-302
11. बच्चन : मिलन-यामिनी §खण्ड-2§ गीत-19 पृ0-056

प्रकृति का पृष्ठभूमि के आधार पर भी हमें बच्चन के काव्य में चित्रण मिलता है अर्थात पृष्ठभूमि रूप से तात्पर्य है घटित हो रही या घटित होने वाली घटना या भाव के अनुरूप प्रकृति को उपस्थित करना । तेजी जी के सम्पर्क में आते ही कवि बच्चन निराशा, अवसाद, विषाद, अन्धकार, एकाकी-पन से बाहर निकलकर प्रसन्नता में गुन गुना उठे-

'काले घनों के बीच में काले क्षणों के बीच में
उठने गगन में, लो लगी, यह रंग-विरंग विहंगिनी ।
सतरंगिनी, सतरंगिनी ।'[1]

प्रकृति का उपदेशिका रूप में भी कवि ने यत्र-तत्र वर्णन किया है- 'मृदु मिट्टी के हैं बने हुए । मधु घट फूटा ही करते हैं । लघु जीवन ले कर आये हैं । प्याले टूटा ही करते हैं ।[2] और 'तन यदि तूने आशा छोड़ी, । तो अपनी परिभाषा छोड़ी ।'[3]

'प्याले' के द्वारा कवि ने क्षणभंगुर नश्वर जीवन का उपदेश दिया है- 'मिट्टी का तन मस्ती का मन, क्षण भर जीवन- मेरा परिचय ।'[4]

कवि नाश के साथ ही निर्माण का सन्देश प्रकृति के उपादानों द्वारा दे रहा है-

क्रुद्ध नभ के वज्र दन्तों में उषा है मुस्कराती,
घोर गर्जनमय गगन के कंठ में खग पंक्ति गाती,
एक चिड़िया चोंच में तिनका लिये जो जा रही है,
वह सहज में भी पवन उंचास को नीचा दिखाती ।

- -

1. बच्चन : सतरंगिनी §खण्ड-1§ पृ0-328
2. वही पृ0-344
3. वही पृ0-348
4. मधुबाला §खण्ड-1§ पृ0-095

नाश के दुःख से कभी दबता नहीं निर्माण सुख
प्रलय की निस्तब्धता से सृष्टि का नव गान फिर-फिर
नीड़ का निर्माण फिर-फिर ।
नेह का आह्वान फिर-फिर ।[1]

सारांश रूप में हम कह सकते हैं कि यद्यपि बच्चन ने प्रकृति का आलंबनादि सभी रूपों में वर्णन किया है । फिर भी अधिकांश में मानव-सापेक्ष रूप में ही प्रकृति का चित्रण किया गया है । बच्चन की कविता के विषय हैं- मनुष्य और मनुष्य के सुख-दुःख आदि । बच्चन का यह मानना है कि प्रकृति तो बहुत उदार है, बहुत कुछ देने को तैयार है, बस लेने का अधिकारी होना चाहिए। फिर भी जीवन की आपाधापी में उन्हें इतना समय ही नहीं मिला कि वे उदार प्रकृति से लाभ ले सकें । समालोचकों का यह कथन कि उन्होने प्रकृति का विशुद्ध वर्णन नहीं किया, मेरी समझ में औचित्यपूर्ण नहीं है । प्रकृति अपने पूर्ण वैभव और इन्द्रधनुषी रंगों में उनके काव्य में उपस्थित हुई है । साथ ही प्रकृति-चित्रण की सभी प्रणालियों के दर्शन भी उनके काव्य में मिलते हैं ।

0 0
0

---

1. बच्चन : सतरंगिनी ॥खण्ड-1॥ पृ0-349

अध्याय - सात

उपसंहार

अध्याय - सात

उपसंहार

बच्चन जी छायावादोत्तर काव्यधारा के प्रवर्तक हैं । उनके कृतित्व का विस्तार छायावादोत्तर काल से लेकर आज तक की सुदीर्घ कालावधि में फैला हुआ है । बच्चन जी ने काव्य के इतिहास में 'स्रष्टा' के रूप में अपना नाम अंकित किया है । स्रष्टा के कार्य में नया संस्कार होता है और उसमें भाव तथा भाषा का नया विधान होता है । इस दृष्टि से उन्होंने हिन्दी काव्यधारा को एक नया आयाम, एक नया रूप प्रदान किया है । कवि नये युग का सन्देशवाहक होता है । कविता के पाठक जो छायावादी सुकुमारता, मधुरता, अतीन्द्रियता, सूक्ष्मता, लाक्षणिक अभिव्यंजना शैली से ऊब से गये थे बच्चन जी की कविता की सादाबयानी, सहजता, संवेदना, जीवंतता और गेयता आदि से तुरन्त प्रभावित हो गये ।

बच्चन जी प्रयाग की महान विभूति हैं । दैन्य संकटों और कठिनाइयों की काली परछाईं के बीच बच्चन जी का जन्म हिन्दी के लिए सौभाग्य शकुन हुआ । यहाँ विपरीत परिस्थितियों को ठेलकर कवि-मनीषी बच्चन सदैव अग्रसर हुए हैं । उन्होंने कभी दारिद्र्य एवं संघर्षों का रोना नहीं रोया, बल्कि आर्थिक संघर्ष और विपरीत परिस्थितियों के बीच भी उनकी काव्य-प्रतिभा प्रभावान रही है । अग्नि-संसर्ग से सोना शुद्ध हुआ । अर्थात बच्चन जी के व्यक्तित्व की आरम्भिक पृष्ठभूमि कुछ ऐसी रही है, जिसने आगे चलकर उन्हें एक ओर श्रेष्ठ कवि के रूप में उपस्थित किया है, तो दूसरी ओर उनमें आध्यात्मिक कवि की भक्ति-भावना और राष्ट्रीय-कवि के युग-बोध की अभिव्यंजना का आधार भी दिया है ।

'बच्चन जी' एक साथ युग द्रष्टा, शब्दशिल्पी, युगस्रष्टा, रसवादी कवि, शैलीकार, उत्तम गायक, कहानीकार, निबन्धकार, अनुवादक, आत्मकथा लेखक, संस्मरणकार, समीक्षक, शोधकर्ता, पत्रलेखक, गीतकार, भूमिकालेखक, नाटिका लेखक आदि हैं । गरिमामय व्यक्तित्व एवं कृतित्व से सम्पन्न कविवर डॉक्टर हरिवंशराय 'बच्चन' का नाम हिन्दी तथा हिन्दीतर विश्व के साहित्यिक मंच पर कौन नहीं जानता । यह तथ्य सर्वविदित है कि कवि 'बच्चन' के यौवनकाल में 'मधुशाला' के रसीले-चुटीले और मादक मुक्तकों §रुबाईयों§ को सुनने के लिए दूर और निकट से आए असंख्य श्रोतागण कवि सम्मेलनों में 'बच्चन' द्वारा कविता सुनाने की बारी आने की प्रतीक्षा करते रहते थे ।[1]

किसी भी साहित्यकार या कवि को अमर होने के लिये ढेरों पुस्तकें लिखना अनिवार्य नहीं है वह अपनी ढेरों पुस्तकों में से किसी एक कृति के आधार पर भी अजर-अमर हो सकता है । जिस प्रकार कवि बच्चन अपनी एक 'मधुशाला' के लिये देश-विदेश में सहृदयों के कंठहार बन गए ।

प्रेम, पीड़ा और दर्शन की त्रिवेणी प्रवाहित करने वाले कवि बच्चन अवश्य ही 'मधुशाला' से प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँचे, परन्तु उनके काव्य के मुख्य विषय प्रेम और करुणा ही हैं । कवि की सर्वाधिक प्रिय पंक्तियाँ भी प्रेम पर आधृत हैं- "प्यार किसी को करना, लेकिन कहकर उसे बताना क्या ?"

किसी भी रचना के मूल में अनुभूति की स्थिति अनिवार्य है । 'अच्छी रचना में जो सर्वश्रेष्ठ होता है, वह प्रयत्न से नहीं प्रेरणा से आता है ।'[2]

---

1. दैनिक अखबार राष्ट्रीय सहारा, बृहस्पतिवार, 16 दिसम्बर 1993
2. सं. बाँके बिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि, पृ0-60-61

बच्चन भी काव्य-सृजन के लिये जीवनानुभूति और जीवंत प्रेरणा को महत्त्व देते हैं । उनके मत से 'जीवन की अनुभूतियों का मुझे इतना भरोसा है कि मैंने उन्हीं पर अभिव्यक्ति का रूप निर्धारित करने का भार भी छोड़ दिया है- विषय, भाषा, छन्द, शैली आदि-आदि । यदि किसी समय कविता किसी ऐसी चीज को कहा जाये जो जीवनानुभूति के गीत-चीत्कार से भिन्न हो तो मैं कोई ऐसी तरकीब नहीं जानता जो मुझे कवि बना सके ।'[1]

उन्होंने यह भी कहा है- "तब जैसे मैं हूँ वैसे ही मेरी अभिव्यक्ति है । ...... अँग्रेजी में कहना चाहूँगा, 'आई लिव देम ।' मैं यह सब बर्तता हूँ । इन सब चीजों का सम्मिलित नाम है, मेरा व्यक्तित्त्व । मेरी अभिव्यक्ति का भी एक व्यक्तित्त्व है ।'[2] बच्चन जी जीवन की समस्त अनुभूतियों को कविता का विषय मानते हैं । उनका सम्पूर्ण काव्य जीवन के झेले-भोगे और सहे कटु-मधु अनुभवों का जीवंत काव्य है । जीवन के अभावों की पूर्ति के रूप में उनकी प्रारंभिक अनुभूति मधुकाव्य के रूप में अभिव्यंजित हुई है । बच्चन का मधु काव्य आशा-उल्लास-मस्ती से ओतप्रोत होते हुए भी जीवन के कटु गरल का आभास दिलाता है । पूर्व पत्नी श्यामा जी के स्वर्गवास के बाद घोर निराशा, उदासी, वेदना और अकेलेपन से जूझते हुए कवि ने अनेक काव्यों का सृजन किया । "निशा-निमन्त्रण में जिस अवसाद की छाया उतरी थी, उसके अन्तिम और सघनतम रूप को देखने के लिए मैं 'एकान्त संगीत सुनता हुआ 'आकुल अन्तर' की गुहा में बैठ गया । जहाँ अन्धकार सघनतम है, वहीं प्रकाश की पहली किरण है । उसी के धुँधले किन्तु निश्चित प्रकाश की ओर

---

1. बच्चन : आरती और अंगारे §खण्ड-2§ अपने पाठकों से पृ0-187
2. बच्चन : वही पृ0-180

हाथ फैलाता हुआ मैं 'आकुल-अन्तर से निकलकर 'सतरंगिनी' के आँगन में पहुँच गया ।'[1] इस प्रकार 'निशा-निमन्त्रण', 'एकान्त संगीत' और 'आकुल अन्तर' में कवि की विरहजन्य अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है और तेजी जी से विवाह होने के बाद प्रेम और मिलन के मादक क्षणों की अनुभूतियाँ 'सतरंगिनी' और 'मिलन यामिनी' में अंकित हैं । शोधकार्य के लिए इंग्लैण्ड जाकर अपने प्रवास-काल में कवि ने जो प्रणय-पातियाँ तेजी जी को समर्पित कीं वे सब 'प्रणय-पत्रिका में संग्रहित हैं । दिल्ली आने पर उन्होंने युग, जीवन, मूल्य-विघटन, बदलते मानवीय सम्बन्ध एवं अपने जीवन की परिवर्तनशील स्थितियों की अनुभूतियों को अपने परवर्ती काव्यों में अंकित किया है । अतः यह कहा जा सकता है कि "बच्चन जी ने अपनी वैयक्तिक जीवन-गाथा के उतार-चढ़ाव को सफलता से चित्रित किया है। .... उनकी सभी रचनाएं आत्मानुभूति की स्वाभाविक झंकृतियाँ हैं ।'[2]

बच्चन जी प्रधानतः गीतकार हैं । गीतकार के लिये आत्मानुभूति परम आवश्यक है । वैसे भी 'कविता घटनाओं का इतिहास नहीं है, घटनाओं से जिन भावनाओं की अनुभूति हुई है, उन्हें जगाने का साधन है ।'[3] पंत जी का यह कथन अर्थगर्भित है कि 'बच्चन ने छायावादियों की तरह विश्व चेतना और अधिमन से प्रेरणा ग्रहण न कर अपनी ही रागात्मक भावना एवं अस्मिता को अपनी रचनाओं में प्रधानता देकर अनुभूति के क्षेत्र को जनसामान्य के मानसिक स्तर पर मूर्त कर, उसमें भावात्मक घनता तथा व्यक्तिपरक ममत्व के तत्वों का समावेश कर दिया, जिसके कारण उनका काव्य जनसाधारण के अधिक निकट आकर सबके लिये

---

1. बच्चन : आकुल अन्तर §खण्ड-1§ अपने पाठकों से पृ0-262
2. डॉ॰ आशा किशोर : आधुनिक हिन्दी गीति काव्य का स्वरूप और विकासपृ0
3. बच्चन : आकुल अन्तर §खण्ड-1§ अपने पाठकों से पृ0-263

मर्मस्पर्शी बन सका ।"[1]

बच्चन की अनुभूतियों में मनुष्य मात्र के सुख-दुख की कथा अंकित है, उनका समस्त काव्य इसका प्रमाण है । अतः श्री भाभड़ा का यह कथन न्यायसंगत है कि- "बच्चन जी के वैयक्तिक जीवन की घटनाओं की प्रतिक्रिया, अनुभूतियों की रसमय प्रक्रिया में घुल-मिलकर सर्वसामान्य हो गई हैं ।"[2]

'नये पुराने झरोखे' में कवि ने कल्पना की अनिवार्यता पर भी बल दिया है किन्तु उनका मानना है कि कल्पना भी तभी सजीव व सबल होती है जब उसका आधार यथार्थ में हो । यथार्थ भी बाहरी मात्र नहीं अनुभूति का अंग बन कर भीतरी बन गया हो । उनके काव्य में यथार्थमूलक कल्पना के अनेक जीवंत चित्र मिलते हैं । एक उदाहरण द्रष्टव्य है-

> 'दे रही कितना दिलासा,
> आ झरोखे से जरा-सा
> चाँदनी पिछले पहर की पास में जो सो गयी है ।
> रात आधी हो गई है ।"[3]

चाँदनी के आ लेटने की यथार्थ कल्पना के पीछे कवि की पिछली अनुभूतियों-स्मृतियों का दंश है, विह्वलता है, अतः यहाँ अनुभूति और कल्पना दोनों तत्व अभिन्न बन गये हैं । 'निशा-निमन्त्रण' में जितनी उत्तमता से यथार्थ, अनुभूति और कल्पना के भावनात्मक रिश्ते का दिग्दर्शन कराया गया है वह हिन्दी के साहित्य में दुर्लभ है ।'[4] "बच्चन जी के काव्य में दूरारूढ़ कल्पनाश्रित बिम्ब

- -

1. सं. बाँकेबिहारी भटनागर, बच्चन : व्यक्ति और कवि, पृ0-30
2. श्री नवलकिशोर भाभड़ा, बच्चन : जीवन और काव्य पृ0-118
3. बच्चन : निशा-निमन्त्रण §खण्ड-1§ पृ0-180
4. प्रकाशन समाचार, राज कमल प्रकाशन, दिल्ली, नयी कविता का संघर्ष पृ0-0

कम हैं । इसका एक मात्र कारण उनका सारल्य और अनुभूति को यथावत् कह देने का आग्रह है । वे जनसाधारण की भावनाओं के अधिक से अधिक निकट आना चाहते थे, इसलिए उन्होंने अपनी कला-साधना को किसी भी प्रकार के शिल्प-कौशल की कृत्रिमता से अभिभूत नहीं होने दिया ।[1]

डॉ० नगेन्द्र का भी मानना है कि "बच्चन के काव्य में सहज कल्पना का प्राधान्य है ।"[2]

"उनकी कल्पना में अनुभूति के संबल से उपलब्ध सहजता, सरलता और मर्मस्पर्शिता है इसीलिए उन्होंने सहज कल्पना से अपनी अनुभूति को सजाया-सँवारा है ।"[3] और विजयदेव साही ने भी उनकी निश्छलता को स्वीकार करते हुए लिखा है कि "निश्छलता, निष्कपटता और सहजता पर जितना बल बच्चन ने दिया, उनसे पहले के किसी भी कवि ने नहीं दिया ।"[4]

इस प्रकार 'बच्चन' जी के कृतित्व पर आद्योपान्त दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि वे जीवन के गीत गाने वाले कवि हैं । जीवन के सुख-दुख ही उनकी अनुभूति और अभिव्यक्ति के विषय हैं । जहाँ कहीं भी कवि ने जीवन, जगत और प्रकृति की ओर निहारा है, वहीं कवि की कल्पना ने स्वस्थ आशावादी दृष्टिकोण के विविध रंग भरे हैं । कल्पना उनके काव्य में भावोत्कर्षकारिणी बनकर उपस्थित हुई है । बच्चन जी की कल्पना-शक्ति पर्याप्त सशक्त, भावप्रवण एवं मार्मिक है और अनुभूति पर आधृत है ।

- -

1. डॉ० जय प्रकाश भाटी : बच्चन का साहित्य: कथ्य और शिल्प, पृ०-225
2. डॉ० नगेन्द्र : आस्था के चरण, बच्चन की कविता, पृ०-418
3. श्री नवल किशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य पृ०-121
4. डॉ० जय प्रकाश भाटी : बच्चन का साहित्य : कथ्य और शिल्पपृ०-234

प्रेम के अन्तर्गत प्रिया के संयोग-वियोग का चित्रण तो कवि ने किया ही है साथ ही प्रेम के उदात्त रूप भी उनके काव्य में दृष्टिगत होते हैं । मानव-प्रेम, देश-प्रेम, विश्व-प्रेम, प्रकृति प्रेम और वात्सल्य के दर्शन होते हैं । बच्चन के काव्य में नियतिवाद को मानते हुए उसका घोर विद्रोह है । कवि ने स्वाभिमानी व्यक्तित्व को उभारते हुए "प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर !" का उद्घोष करते हुए मनुष्य मात्र को अधिकारों के प्रति सचेष्ट किया है—

> अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ !
> वृक्ष हों भले खड़े, हों घने हों बड़े
> एक पत्र-छाँह भी । माँग मत ! माँग मत ! माँग मत ।
> अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ
> यह महान दृश्य है !
> चल रहा मनुष्य है
> अश्रु-स्वेद-रक्त से
> लथपथ ! लथपथ ! लथपथ !
> अग्नि पथ ! अग्नि पथ ! अग्नि पथ ![1]

रहस्य, दर्शन और मूलतः अद्वैतवाद की स्पष्ट झाँकी बच्चन के काव्य में दृष्टिगत होती हैं । भक्ति-भावना से सराबोर अनेक गीत भी कवि के काव्य में प्रारंभिक रचनाओं से लेकर परवर्ती काव्य तक में दिखाई देते हैं । डॉ॰ बालकृष्ण राव उन्हें 'अनुभूति का कवि' कहते हैं ।[2] डॉ॰ नगेन्द्र के मत से "प्रत्यक्ष व्यक्तिगत जीवन की कविता होने के कारण बच्चन की कविता का मूल आधार है-अनुभूति और यही उसकी सबसे बड़ी और बहुत कुछ अंशों में एकमात्र शक्ति है ।"[3]

- -

1. बच्चन : एकान्त संगीत §खण्ड-1§ पृ0-246
2. डॉ॰ बालकृष्ण राव : विवेचना संकलन-1 : बच्चन कविता पृ0-221
3. सं. प्रो. दीनानाथशरण : लोकप्रिय बच्चन :बच्चन का काव्य :मुख्य प्रवृत्तियाँ [illegible]

अनुभूति की भाँति बच्चन के विचार भी सरल होते हैं । जीवन के प्रति उनकी बौद्धिक प्रतिक्रिया सदैव सीधी और प्रत्यक्ष रही है । इस जीवन में सभी कुछ नाशवान है, मृत्यु पर विजय पाना सर्वथा असंभव है, अतएव उसको भूलने का प्रयत्न करना चाहिये-

"झुका कर इसके आगे शीश, नहीं मानव ने मानी हार ।
मिटा सकने में यदि असमर्थ भुला सकते हम यह संसार ।"

यह बच्चन की विचारधारा का प्रथम सोपान है । किन्तु मनुष्य की शक्ति सीमित है, काल के सम्मुख वह सर्वथा दीन और असहाय है- "मिटटी दीन कितनी हाय ।" नियति के प्रति विद्रोह व्यर्थ है, आत्म-समर्पण के अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है, यह कवि का द्वितीय सोपान है । किन्तु जीवन का प्रेम मृत्यु के भय से अधिक समर्थ है । जीवन में दुःख आता है-ठीक है, परन्तु बीती को भूलना ही होगा । यह सृष्टि का नियम है । नाश की अपेक्षा निर्माण की प्रेरणा बलवती व स्वस्थ है । यह बच्चन की विचारधारा का तृतीय सोपान है ।

कविवर बच्चन की यह काव्यसाधना जितनी प्रेरणाप्रद है, उतनी ही उद्बोधक भी । डॉ॰ रणवीर रांग्रा के अनुसार- "कवि के लिये इससे अधिक गौरव की बात और क्या हो सकती है कि उसका स्वाभिमान राष्ट्र का मूल मंत्र बन चुका है, उसकी ओजस्वी वाणी राष्ट्र की हुंकार में गूँज उठी है और अग्नि पथ पर कदम बढ़ाये चलने की उसकी शपथ राष्ट्र के लौह संकल्प में परिणत हो चली है। बच्चन के भाग्य से आज किसे ईर्ष्या न होगी ?"[1] और यह सच भी है एक व्यक्ति में अनेक व्यक्तियों का महान व्यक्तित्व समाहित हो ऐसे कवि बच्चन ने गद्य-

---

1. सं. प्रो. दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन पृ0-41

साहित्य में भी अपनी धूम मचा रखी है । कहानी, निबन्ध, रेडियो वार्ता, रेखाचित्र, संस्मरण, रिपोर्ताज, पत्रलेखन, भूमिका लेखन, आत्मकथा के चार खण्ड जिसमें अन्तिम खण्ड को 'सरस्वती सम्मान' प्रदान किया गया । डायरी लेखन में सरलता, ऋजुता, चिंतन के साथ-साथ उनकी ईमानदारी प्रशंसनीय है । आत्मकथा में अपने विकारों का इतनी बेबाकी से चित्रण करने वाला कवि बच्चन के अतिरिक्त कोई और तो हो नहीं सकता । हिन्दी साहित्य के इतिहास में इससे पूर्व इतनी अच्छी और निश्छल आत्माभिव्यक्ति की आत्मकथा नहीं लिखी गई । आत्मकथा के बेबाकपन पर ही उसे पुरस्कृत किया गया है । अग्रवाल मन्जू के उद्गार कवि की आत्मकथा पर द्रष्टव्य हैं- "बच्चन की आत्मकथा साहित्यिक क्षेत्रों में खूब सराही गई है और उसको एक आधुनिक 'क्लासिक' माना जाता है, बच्चन के गद्य में एक संवेदनशील कविता समाहित है, यह आत्मकथा वास्तव में जादू की वह छड़ी है जिससे बच्चन के जीवन और सृजनात्मकता को समझने में सहायता मिलती है । डॉ. बच्चन का कहना है कि मैं जीवन की समस्त अनुभूतियों को कविता का विषय मानता हूँ लेकिन मेरी अनुभूति में कल्पना और जीवन में मरण सम्मिलित हैं ।"[1]

अनूदित साहित्य के क्षेत्र में भी बच्चन जी की देन सैद्धान्तिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है । उमर खैयाम की रुबाइयों का अनुवाद यूँ तो अनेक कवियों ने किया है किन्तु सर्वश्रेष्ठ अनुवाद बच्चन जी का ही सिद्ध हुआ, इतना ही नहीं अनुवाद, अनुवाद न लगकर मौलिक सृजन के सौन्दर्य से मण्डित हो गया है ।

- -

1. अग्रवाल मन्जू : सरस्वती का सम्मान : डॉ. हरिवंश राय बच्चन
§दैनिक ट्रिब्यून, 26 जनवरी, 1992§

बच्चन ने भगवान की अपेक्षा मानव को ही अपनी कविता का विषय और लक्ष्य बनाया है, उनकी दृष्टि में मनुष्य से महान और पवित्र कोई नहीं है, उससे हटकर साहित्य का कोई मूल्य नहीं है । छिन्न-खण्डित, विश्रृंखल मानव के चरित्र परिष्कार द्वारा मानवता की सेवा ही उनका लक्ष्य है ।

मानवीय भावनाओं के अनुरूप प्रकृति के मादक रूपों की भी झाँकियाँ अंकित की हैं । जो रीतिकालीन अलंकृत वर्णन से परे हैं और श्रेष्ठ भी हैं । प्रिया के प्रणय-संयोग में कवि ने मर्यादा का भी मान रखा है । नख-शिख वर्णन न होकर प्रिया के रूप सौन्दर्य का मधुर वर्णन है । विरह की तीव्रानुभूतियाँ हृदय को आन्दोलित कर देती हैं । कवि ने प्रकृति के स्थूल रूप के प्रति विद्रोह न कर उसे सूक्ष्म का आकार प्रदान कर आभ्यन्तरिक प्रकृति को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया, उनका प्रकृति चित्रण मानव सापेक्ष है । छायावाद से अलग हटकर उनका प्रकृति चित्रण जीवन की मांसल रागमय अभिव्यक्तियों को उद्घाटित करता है ।

दुख को जीवन की साधना मानने वाले बच्चन दुख रूपी हलाहल को हँसते हुए पी कर्मवाद का पाठ सिखाते हैं । पूर्वजन्म और भाग्य पर विश्वास करने वाले अकर्मण्य व्यक्तियों को कवि कृष्ण के 'आशावाद और कर्मवाद का पाठ पढ़ाते हैं और निरन्तर जीवन की विभीषिकाओं व कठिनाइयों को उल्लसित होकर झेलते हुए सतत् प्रयत्नशील रहने व आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं ।

कवि के काव्य की भाँति उसका एक बौद्धिक पक्ष भी होता है, एक चिन्तन भी होता है । कवि अपने समस्त जीवन में जो अनुभव करता है उससे उसका एक जीवन और जगत तथा यहाँ की सभी गतिविधियों के प्रति एक अपना निजी दृष्टिकोण भी बन जाता है जो उसका व्यक्तिगत चिन्तन होता है । इसी प्रकार बच्चन जी का बौद्धिक पक्ष भी सतत् चिन्तन-मनन द्वारा निष्कर्ष पर पहुँचता है

और नए झरोखों को खोलता है । बच्चन जी राष्ट्र के प्रति आस्थावादी दृष्टिकोण रखते हैं । उनके काव्य में हमें राष्ट्र प्रेम की अनुपम झलक मिलती है, साहस और ओज उनकी कविता के गुण हैं । यूँ तो बच्चन के समवर्ती अनेक कवियों ने राष्ट्र प्रेम पर आधारित काव्य लिखे हैं किन्तु बच्चन जी का राष्ट्रीय संग्राम में प्रत्यक्ष योगदान रहा है इसलिये उनके काव्य में राष्ट्र प्रेम की हार्दिक और नैसर्गिक आभा है । स्वतन्त्रता की रक्षा हेतु हिंसा पर भी कवि ने बल दिया है यह उनका अपना चिन्तन है ।

जीवन, जगत और ब्रह्म पर भी कवि ने अपने आध्यात्मिक एवं दार्शनिक दृष्टिकोण को मुखरित किया है । 'प्याला' का प्रतीक कवि के विशद चिन्तन को रूपायित करता है । बच्चन जी स्पष्ट शब्दों में यह भी लिखते हैं कि- "मेरी कविता में कोई दर्शन है तो जीवन-दर्शन । जीवन को भोगकर जो मेरी प्रतिक्रिया हुई वह कविताओं में है ।"[1]

बच्चन जी जिस युग और समाज में पैदा हुए थे वह जर्जरप्राय, अनैतिकत और अंधविश्वासों से ग्रस्त सामाजिकता का युग था । बच्चन के काव्य ने इस बीमा रूढ़िवादी, सड़ी-गली परम्पराओं और मान्यताओं को झकझोर दिया । कवि ने एक स्वस्थ समाज की कामना करते हुए मनुष्य को जागरूक किया । समाज के विभि आक्षेपों के बाद भी कवि ने अपनी क्रान्तिकारी वाणी को कलमब कर अंधविश्वास के पिंजरे में कैद समाज को आजाद किया । बच्चन सही अर्थों में सामाजिक द्रष्टा और सृष्टा हैं उनकी कृतियों में उनके सामाजिक चिन्तन की स्पष्ट झाँकी प्रतिबिम्बित होती है ।

- -

1. कादंबिनी, अप्रैल, 1974

सुख-दुख, प्रेम-जातिपाँति, छुआछूत, नियतिवाद, कर्मवाद आदि पर कवि ने गहरा चिन्तन किया है । सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक व्यंग्य भी उनके बौद्धिक पक्ष को उजागर करते हैं । कवि ने जीवन और जगत के अनेकानेक मानक-बिन्दुओं पर दृष्टिपात कर अपने काव्य का सृजन किया है और उसके एक स्वस्थ पक्ष को भी उद्घाटित किया है, एक सच्ची राह, एक नई दिशा का मार्ग प्रशस्त किया है । बच्चन जी के विचार से 'जीवन हमेशा एक-सा तो रहता नहीं, कभी जिन्दगी हमें चुनौती देती है, संघर्ष माँगती है, वह आगदर्शन । ..... दूसरी ओर जिन्दगी में सुख-शान्ति, प्रेम होता है, जिन्दगी मानव को जीने के लिए आमंत्रित करती है- उसका हारमोनियम प्रभाव पड़ता है, जीवन का आमन्त्रण ही राग-दर्शन ।"[1] बच्चन जी की अनुभूत्यात्मक मान्यता- "मनुष्य में मैंने ढूँढ़ लिया भगवान ।" - सहज, स्वस्थ, व्यापक, सर्वसमावेशक, मंगलकारक एवं उदात्ततर जीवन दर्शन मानी जा सकती है ।

बच्चन जी का काव्य अडिग आस्था, अदम्य स्वाभिमान एवं स्वावलम्बन से परिपूर्ण है । आँसू और मुस्कान के साथ-साथ हलाहल से खिलवाड़ करने की उनमें अपरिमित आत्मिक शक्ति है, जो निरन्तर जाग्रत रही है । बच्चन जी के अनुसार 'जीवन मेंसुख-दुःख, आशा-निराशा और स्वप्न-सत्य के अस्तित्व का समान महत्व है ।"[2] उनकी जीवन विषयक यह मान्यता हमें युग-युगों तक प्रेरणा देती रहेगी । अतः कवि के काव्य में सर्वत्र ही उसका चिन्तन दृष्टिगोचर होता है।

बच्चन-काव्य के प्रतिपाद्य की अभिव्यक्ति के लिये भाषा और शैली

- -

1. श्री नवलकिशोर भाभड़ा : बच्चन : जीवन और काव्य, बच्चन एक इण्टरव्यू पृ0-210

2. बच्चन : बहुत दिन बीते |खण्ड-3| पृ0-18।

विषयक प्रदेय भी अविस्मरणीय है । उनकी भाषा बनावट से दूर है । छायावाद की प्रतीकात्मक, अतिशय लाक्षणिक चित्रमयी भाषा से सर्वथा भिन्न बच्चन की भाषा का मुख्य गुण प्रत्यक्षता और सरलता है । बच्चन की भाषा का मूल आधार अभिधा ही है ।

बच्चन का समस्त काव्य अभिधामूलक प्रसाद गुण सम्पन्न है । बच्चन की भाषा भाव बन जाती है और भाव ही भाषा । कल्याणमल लोढ़ा के मत से- 'उनके काव्य की प्रमुख विशेषता उनकी भाषा शक्ति है । सरल प्रभावमय, अकृत्रिम पर भाव-संयुक्त, प्रवाहमयी पर गहरी और अपने से पाठक को बाँधने वाली बच्चन की भाषा ने खड़ी बोली को काव्य-प्रयोग की दृष्टि से नया रूप प्रदान किया है ।'[1] बच्चन की भाषा सरल, सहज, परिष्कृत और साफ-सुथरी खड़ी भाषा है, जो अपनी बेबाकी के लिए प्रसिद्ध है । अपने काव्य को प्रभावशाली बनाने के लिये कवि ने उदारतापूर्वक अन्य विदेशी भाषाओं के शब्द भी ग्रहण किये हैं । तद्भव, तत्सम, उर्दू, अरबी-फारसी, अंग्रेजी और जनभाषा के शब्दों का प्रयोग कवि ने निःसंकोच और प्राकृतिक रूप में किया है । कहीं भी शब्द थोपे हुए नहीं प्रतीत होते । मुहावरों, कहावतों और लोकोक्तियों का भी कवि ने नैसर्गिक रूप में प्रयोग किया है यत्र-तत्र कवि के वाक्य स्वयं सूक्ति बनकर उपस्थित हुये हैं ।

अलंकारों के मोहपाश में बच्चन का मन नहीं रमा किन्तु अनायास ही उनके काव्य में अलंकारों की छटा दृष्टिगोचर होती है । अभिधा, लक्षणा, व्यंजना के सशक्त प्रयोग इनके काव्य में दृष्टिगोचर होते हैं । फिर भी अभिधा शब्द शक्ति ही चहुँ ओर अपना साम्राज्य स्थापित करती हुई प्रतीत होती है ।

---

1. कल्याणमल लोढ़ा : बच्चन का काव्य §निबन्ध§ लोकप्रिय बच्चन : पृ0-24

बच्चन की कविता में प्रतीकों का प्रयोग बहुतायत में मिलता है । कवि के द्वारा प्रयुक्त प्रतीकों में भावों की सांकेतिकता और सूक्ष्म प्रेषणीयता की क्षमता विद्यमान है ।

'मधुशाला' तो कवि की प्रतीकात्मक कृति ही है । ये प्रतीक सायास नहीं लाए गए वरन् स्वतः मुखरित हुए हैं । अनेक स्थलों पर बच्चन ने अपने को प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया है । जीवन के सच प्रतीकों में बोला करते हैं । कवि ने प्राकृतिक, सांस्कृतिक, पौराणिक, आध्यात्मिक और ऐतिहासिक प्रतीकों का प्रयोग किया है । बच्चन जैसी प्रतीक-योजना अन्यत्र दुर्लभ है । बच्चन जी सशक्त, समर्थ और वैविध्य पूर्ण प्रतीप-योजना के लिये स्मरणीय रहेंगे ।

बच्चन का बिम्बविधान भी प्रभावशाली है उनके काव्य में दृश्य विम्ब तो सर्वत्र दृष्टिगत होते हैं पर कवि ने स्पर्श, घ्राण और श्रवणादि विम्बों को रूपायित कर अनेक अमूर्त भावों का मूर्तिकरण किया है । मानस बिम्बों के चित्र भी बहुत सुन्दर उकेरे हैं । अतः बच्चन के सम्पूर्ण काव्य में बिम्ब विधायिनी कला के दर्शन होते हैं, जो प्रशंसनीय हैं ।

"बच्चन ने यों तो छंद-विधान में अनेक प्रयोग किये हैं, 'मधुशाला' की रुबाई से लेकर 'मधुबाला' और 'मधुकलश के अनेक हिन्दी छंद और फिर 'निशा-निमन्त्रण' से लेकर 'एकान्त संगीत' और मिलनयामिनी के भिन्न-भिन्न गेय पद औरइधर 'बंगाल का काल' का लय-आंकित मुक्त छंद , छंद विधान की विविधता के प्रमाण हैं । परन्तु प्रायः सर्वत्र ही उनकी स्वर योजना और लय-विधान में एक सादगी और मंजु-सरल वेग मिलता है ।"[1] विभिन्न तुकान्त छन्दों के अतिरिक्त

- -

1. डॉ. नगेन्द्र : बच्चन का काव्य : मुख्य प्रवृत्तियाँ और मूल्यांकन §निबन्ध§ पृ०-111

कवि ने मुक्त छन्द में भी काव्य सृजन किया है । अपनी 14-15 वर्ष की अवस्था में बच्चन का बाल कवि मुक्त छन्द में रचना करता था । 'बंगाल का काल' तथा अन्य परवर्ती रचनाओं में कवि ने मुक्त छन्द का प्रयोग किया है । कवि ने भावानुरूप छन्दों का चयन व निर्माण किया है । छन्दों की मात्रा, नवगति, नवलय, ताल, सुरों के उतार-चढ़ाव में बच्चन सिद्धहस्त हैं उनका मुक्त छन्द प्रयोग भी सर्वथा नवीन और कर्णप्रिय लगता है ।

शैली काव्याभिव्यक्ति का प्रमुख मूर्त साधन है । स्वानुभूत विषय वस्तु को कवि जिस रूप, आकार, प्रकार, अभिव्यंजना पद्धति में ढालता है, पिरोता है वह विशेष अभिव्यंजना पद्धति या वह ढाँचा ही कवि की शैली होता है । बच्चन जी ने अपनी काव्यकृतियों में सम्बोधनात्मक शैली, वर्णनात्मक, प्रश्नोत्तर, सूत्र, चित्रात्मक, व्याख्यात्मक, पुनरावृत्ति, तुलनात्मक, निष्कर्ष शैली अनेकानेक शैलियों का प्रयोग किया है । बच्चन जी के व्यक्तित्व की भाँति उनकीशैली में भी स्पष्टता व सजीवता है ।

छायावादोत्तर काल में जिन कवियों की चर्चा होती है, उनमें बच्चन का नाम शीर्ष स्थान पर है । "बच्चन जी के काव्य का विकास छायावाद एवं प्रगतिवाद के संधिकाल में हुआ है । जबआधुनिक हिन्दी काव्य छायावाद के वायवी वातावरण में चक्कर खा रहा था, उस समय बच्चन जी ने अपनी अनुभूतियों से जग-जीवन की साँसों की वीणा झंकृत की । एक ओर जहाँ कोमलकांत पदावली की गूँज थी, वहाँ दूसरी ओर सीधे-सादे शब्दों में बच्चन जी ने अपने भावों को अभिव्यंजना दी और भाव, भाषा, तथा शैली की दृष्टि से हिन्दी कविता में युगान्तर उपस्थित किया ।"[1]

- -

'मधुशाला' की धूम का वह जमाना जिन्हें याद है, वे स्वीकार करेंगे कि बच्चन जी का कितना बड़ा ऋण हिन्दी कविता पर है । सामान्य जनता से कविता का सीधा सम्पर्क स्थापित करने का श्रेय बच्चन को है । काव्य-भाषा का काया-कल्प करने का श्रेय बच्चन को है । उसे आकाश से उतारकर भूमि पर खड़ा करने का श्रेय बच्चन को है ।'[1] और इसी दृष्टि से पंत जी के शब्दों में 'बच्चन जी अपने स्थान पर प्रथम श्रेणी के कवि हैं ।'[2]

बच्चन जी का सौन्दर्य बोध शाश्वत जीवन पर और जीवन दर्शन भारतीय आध्यात्म पर आधारित है । उनकी काव्यकृतियों के आद्योपान्त विवेचन से स्पष्ट है कि उनकी काव्य-कृतियों की विषय वस्तु में वैविध्य के साथ ही वैशिष्ट्य है और एक नवीनता है जो उन्हें छायावादी कवियों से अलग खड़ी करती है । जीवन में भोगा हुआ सत्य और तत्जन्य अनुभूति उनके काव्य में सर्वत्र बिखरी पड़ी है । अभिव्यक्ति के क्षेत्र में कलात्मकता को जन्म देना उनका अभीप्सित नहीं रहा है । छायावादी काव्य की दुरूह, क्लिष्ट और प्रतीकात्मक बोझ से दबी दुर्बोध भाषा को कवि ने सरल, बोधगम्य, प्रसादगुणयुक्त कर जन-सामान्य तक प्रेषित किया है । निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि बच्चन जी की कविता अंत:प्रेरित और सहज स्वाभाविक कविता है । अपने जीवन में उन्होंने जो कटु-मधु अनुभव संचित किये हैं उन्हीं का परिणाम उनका काव्य है ।

0 0
0

- -

1. माध्यम अप्रैल 1965, पृ0-106, 107 और बालकृष्णराव, विवेचना संकलन-1 पृ0-219
2. माध्यम अप्रैल 1965, पृ0-116 और बालकृष्णराव, विवेचना संकलन-1 पृ0-228-229

स न्‍ दर्भ-ग्र न्‍ थ-सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

'बच्चन' के काव्य ग्रन्थ

1. प्रारंभिक रचनाएं भाग एक
2. प्रारंभिक रचनाएं भाग दो
3. मधुशाला - राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 8, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली तृतीय संस्करण 1983
4. मधुबाला
5. मधुकलश
6. निशा निमन्त्रण
7. एकान्त संगीत
8. आकुल-अन्तर
9. सतरंगिनी
10. हलाहल
11. बंगाल का काल
12. खादी के फूल
13. सूत की माला
14. मिलन यामिनी
15. प्रणय पत्रिका
16. धार के इधर-उधर
17. आरती और अंगारे
18. बुद्ध और नाचघर
19. त्रिभंगिमा
20. चार खेमें चौंसठ खूँटे
21. दो चट्टानें
22. बहुत दिन बीते
23. कटती प्रतिमाओं की आवाज
24. उभरते प्रतिमानों के रूप

25. जाल समेटा ।

26. असंकलित कविताएं

27. अतीत की प्रतिध्वनियाँ

'बच्चन के अनूदित काव्य ग्रन्थ

1. खैयाम की मधुशाला
2. जनगीता
3. चौंसठ रूसी कविताएं
4. मरकत द्वीप का स्वर
5. नागर-गीता
6. भाषा अपनी भाव पराये
7. असंकलित काव्यानुवाद

'बच्चन' द्वारा शेक्सपियर के नाटकों का अनुवाद

मैकबेथ

ओथेलो

हैमलेट

किंगलियर

'बच्चन' के समीक्षात्मक ग्रन्थ

1. कवियों में सौम्य सन्त
2. नये पुराने झरोखे
3. टूटी-छूटी कड़ियाँ
4. असंकलित लेख
5. कवि के संचयनों-संकलन की भूमिकाएं

'बच्चन के आत्मकथा-ग्रन्थ

1. क्या भूलूँ क्या याद करूँ

3. बसेरे से दूर
4. दशद्वार से सोपान तक
5. प्रवास की डायरी

बच्चन रचनावली खण्ड 9 में संगृहीत विविध लेख

1. वार्ताएं
2. साक्षात्कार
3. समीक्षाएं
4. प्रारम्भिक रचनाएं §कहानियाँ§
5. जन्म दिन की भेंट §बाल कविताएं, बालनाटिका§
6. पत्र
7. बच्चन की जीवन क्रमणिका
8. बच्चन की रचनाओं के प्रथम संस्करण
9. कविताओं की प्रथम पंक्तियों का अकारादि क्रम

§बच्चन की समस्त कृतियाँ नौ खण्डों में संगृहित हैं और राजकमल प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हैं । - राजकमल, प्रकाशन प्रा. लि., 8 नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली तृतीय सं. 1983§

समीक्षात्मक ग्रन्थ सूची

1. अज्ञेय : आत्मनेपद
2. डॉ. आशा किशोर : आधुनिक हिन्दी गीत काव्य का स्वरूप और विकास
3. अजित कुमार एवं ओंकारनाथ श्रीवास्तव : बच्चन निकट से
4. डॉ. इन्दुबाला दीवान : बच्चन अनुभूति और अभिव्यक्ति
5. डॉ. उपेन्द्र : छायावादी कवियों की गीत सृष्टि
6. डॉ. कौशलनाथ उपाध्याय : छायावादोत्तर काव्य : बदलते मानदण्ड एवं स्वरूप
7. डॉ. किरण कुमारी गुप्ता : हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण

8. डॉ॰ कृष्णचन्द्र पण्डया : बच्चन : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

9. डॉ॰ के॰ जी॰ कदम : कवि श्री बच्चन : व्यक्ति और दर्शन
साहित्य भवन §प्रा॰§ लि॰, 93, के॰ पी॰ कक्कड़ रोड,
इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित प्रथम संस्करण, 1988

10. केदार नाथ सिंह : वक्तव्य तीसरा सप्तक

11. बाबू गुलाब राय : सिद्धान्त और अध्ययन

12. चन्द्र देव सिंह : बच्चन एक पहेली

13. जीवन प्रकाश जोशी : बच्चन : व्यक्तित्व और कवित्व

14. जगदीश नन्दिनी : बच्चन के काव्य में प्रणय-भावना

15. डॉ॰ जय प्रकाश भाटी : बच्चन का कथ्य और शिल्प

16. जयशंकर प्रसाद : कामायनी

17. डॉ॰ देवीशरण रस्तोगी : हिन्दी के साहित्यिक निबन्ध, राजहंस
प्रकाशन मन्दिर धर्म-आलोक, रामनगर मेरठ §उ॰ प्र॰§ नं॰ सं॰ 1983

18. सं॰ प्रो॰ दीनानाथ शरण : लोकप्रिय बच्चन-साहित्य निकेतन कानपुर
प्रथम संस्करण 1967

19. श्री दिनकर सोनवलकर : नया साहित्य, जून 1973

20. ध्वन्यालोकलोचन : अभिनवगुप्त, अनुवादक, जगन्नाथ पाठक
चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, सन् 1965

21. डॉ॰ नगेन्द्र : आस्था के चरण §बच्चन की कविताएं§

22. डॉ॰ नगेन्द्र : आधुनिक हिन्दी की मुख्य प्रवृत्तियाँ

23. डॉ॰ नगेन्द्र : काव्य में उदात्त तत्व-भूमिका पृ0-19 §राजपाल एण्ड
सन्स दिल्ली, द्वितीय संस्करण फरवरी 1961§

24. डॉ॰ नगेन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास

25. नवल किशोर भाभड़ा : बच्चन जीवन और काव्य

26. आचार्य नंददुलारे बाजपेई : हिन्दी साहित्य बीसवीं शताब्दी

27. डॉ॰ निर्मला जैन : रस सिद्धान्त और सौन्दर्य शास्त्र-नेशनल पब्लिशिंग
हाउस, दिल्ली-7 प्रथम संस्करण 1967

28. डॉ॰ पुत्तूलाल शुक्ल : आधुनिक हिन्दी कविता में छन्द-योजना

29. बालस्वरूप राही : मेरा रूप तुम्हारा दर्पण

30. सं. बाँके बिहारी भटनागर : बच्चन : व्यक्ति और कवि
31. बलदेव उपाध्याय : भारतीय साहित्य शास्त्र, प्र. खण्ड 423
32. डॉ. बलभद्र तिवारी : आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका
33. डॉ. भगवानदास तिवारी : भूषण : साहित्यिक एवं ऐतिहासिक अनुशीलन
34. भगीरथ मिश्र : काव्यशास्त्र
35. डॉ. मृदुला गुप्ता : बच्चन के काव्य में बिम्ब योजना
36. सं. मुकुन्द द्विवेदी : हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली खण्ड सात
37. महादेवी वर्मा : सन्धिनी भूमिका पृ-14 §लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद द्वितीय संस्करण सन् 1968§
38. डॉ. यतीन्द्र तिवारी : दिनकर की काव्य भाषा-पुस्तक संस्थान 109/50ए नेहरू नगर, कानपुर 12 प्रथम संस्करण 1976
39. रेणु मल्होत्रा : बच्चन का परवर्ती काव्य
40. सं. रमेश गुप्त : बच्चन निकष पर
41. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : चिन्तामणि भाग एक-इण्डियन प्रेस इलाहाबाद 1966
42. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : चिन्तामणि भाग दो-इण्डियन प्रेस इलाहाबाद 1966
43. डॉ. रामकुमार सिंह : आधुनिक हिन्दी काव्य भाषा
44. डॉ. रामेश्वर खण्डेलवाल : आधुनिक हिन्दी कविता में प्रेम और सौन्दर्य-नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, प्रथम संस्करण
45. डॉ. रामखिलावन तिवारी : माखनलाल चतुर्वेदी : व्यक्ति और कवि
46. रामविलास शर्मा : तारसप्तक
47. लक्ष्मीनारायण वार्ष्णेय : आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका
48. विश्वंभर मानव : नई कविता के कवि
49. डॉ. श्यामसुन्दर घोष : बच्चन का परवर्ती काव्य
50. श्यामसुन्दर दास : साहित्यालोचन, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद सन् 1959
51. शिव कुमार मिश्र : नया हिन्दी काव्य
52. सत्येन्द्र कुमार सिंह : हिन्दी के प्राचीन और आधुनिक कवि, हिन्दी साहित्य भण्डार 55 चौपटियाँ रोड़ लखनऊ-उ. प्र. सं. 1979
53. सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' 'जागरण', 'परिमल'

54. सुमित्रानन्दन पन्त : 'प्रवेश', 'पल्लव'

55. सुमित्रानन्दन पन्त : अभिनव सोपान की भूमिका 'सोपान' पर से

56. डॉ॰ सुधाबहन पटेल : बच्चन जीवन और साहित्य, जवाहर पुस्तकालय सदर बाजार, मथुरा प्रथम संस्करण 1980

57. डॉ॰ सुरेश चन्द्र गुप्त : आधुनिक हिन्दी कवियों के काव्य सिद्धान्त

58. डॉ॰ सुरेश चन्द्र त्यागी : छायावादी काव्य में सौन्दर्य दर्शन अनुराधा प्रकाशन, सूरजकुण्ड मेरठ प्र॰ सं॰ 1976

59. डॉ॰ सुधाकर कलवडे : आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय भावना

60. हिन्दी साहित्य कोश भाग एक

61. हर स्वरूप पारीक : बच्चन का परवर्ती काव्य-मंगल प्रकाशन, गोविन्द राजियों का रास्ता-जयपुर-1, प्रथम संस्करण 1973

62. डॉ॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास राजकमल प्रकाशन, 1984 द्वितीय संस्करण

पत्र - पत्रिकाएं-

1. नयी कविता-संयुक्तांक 5-6, रामस्वरूप चतुर्वेदी

2. डॉ॰ रामरतन भटनागर : साहित्य संदेश, बच्चन विशेषांक नवम्बर, दिसं॰ 1967

3. राजानन्द साहित्य संदेश नवं, दिसम्बर 1967

4. पं॰ जगन्नाथ तिवारी : अभिनन्दन ग्रन्थ में आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी का का लेख-पाश्चात्य समीक्षा : सैद्धान्तिक विकास

5. परशुराम चतुर्वेदी : अवन्तिका : काव्यालोचनांक जनवरी 1954, वर्ष 2, अंक 1 में 'कबीर साहब की प्रतीक योजना' लेख से

6. सत्यनारायण श्रीवास्तव : साहित्यार्चन, ज्ञानोदय सितम्बर 1960

7. अग्रवाल मन्जु : दैनिक सारांश सेवा, ट्रिब्यून 26 जनवरी, 1992

8. कादंबिनी, अप्रैल 1974

9. प्रकाशन समाचार : राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-नयी कविता का आत्म संघर्ष

10. डॉ॰ बालकृष्ण राव : विवेचना संकलन एक : बच्चन कविता

11. माध्यम अप्रैल 1965, पृ0-106, 107 और बालकृष्ण राव विवेचना संकलन-1

12. राष्ट्रीय सहारा, दैनिक पत्र, बृहस्पतिवार 16, दिसम्बर 1993

13. राष्ट्रीय सहारा, दैनिक पत्र, बृहस्पतिवार, 23 दिसम्बर 1993

14. दैनिक आज - कानपुर 21 जनवरी 1992 ई.

15. दैनिक आज - कानपुर 08 मार्च 1992 ई.

16. मायापुरी अंक 1040

17. स्वतंत्र भारत - लखनऊ 21 जनवरी 1992

संस्कृत साहित्य

1. अथर्ववेद संहिता, 6/78/2, पृ0-131 सं. श्री दा. सातवलेकर
ऋग्वेद, 10/191/2 स्वाध्याय मण्डल {पारडी}

2. बाल्मीकि रामायण

अंग्रेजी साहित्य

1. दि ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया

2. ए. आर. देसाई. सोशल बैक ग्राउण्ड ऑफ इण्डियन नेशनलिज्म

3. शूमैन : एफ. एल. इण्टरनेशनल पॉलिटिक्स

4. Biographia Literaria, Chap- 11,12, Ed. by J. Shawcross-Clarendon Press, Oxford, 1907.

5. Necessity of humanity as a control on the human intelligence.' Ibid. P.213.

6. Dictionary of World Literature P.216.

7. Dictionary of World Literature P.216 (continued from P.345)

8. Dictionary of World Literature P.219.

9. History of Esthetics.

10. The Reader Companion to World Literature P.219.

साक्षात्कार बच्चन से

1. साक्षात्कार कर्ता- डॉ॰ विनय
2. अनन्त कुमार पाषाण
3. रणवीर राँगा
4. विश्वनाथ और प्रमोद शंकर भटट
5. शैवाल सत्यार्थी 'शैवाल'
6. नैयर तथा अन्य
7. दुर्गा प्रसाद नौटियाल
8. विभा सक्सेना
9. विनोद शर्मा नवम्बर 1971
10. विश्वनाथ और सतीश वर्मा

0 0
0